जुलाई-सितम्बर, 2017 (संयुक्तांक)

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

प्रधान संपादक
डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय

संपादक
कमला कान्त

महत्वपूर्ण निर्णय

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 96 [सपठित संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53क] – भूस्वामी द्वारा बेदखली के लिए वाद – प्रतिवादी द्वारा वाद संपत्ति को खाली नहीं किया जाना -- भूस्वामी और क्रेता के बीच संपत्ति अंतरण करने का करार होना – जहां पर भूस्वामी और प्रतिवादी के बीच प्रश्नगत मकान के बारे में विक्रय करार हुआ हो तो भूस्वामी उस प्रश्नगत मकान का कब्जा बेदखली के माध्यम से तभी प्राप्त कर सकता है जबकि विक्रय करार के अधीन देय प्रतिफल का उसके द्वारा संदाय कर दिया जाए ।

कमल चंद बनाम **गंगाराम** 37

विधि साहित्य प्रकाशन

संसद् के अधिनियम

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2010 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ (1) – (20) क्रमशः

पृष्ठ संख्या 1 – 159 (2017) 2 सि. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका – जुलाई-सितम्बर, 2017 (संयुक्तांक) (पृष्ठ संख्या 1 – 159)

Cover II

संपादक-मंडल

डा. जी. नारायण राजू,
सचिव, विधायी विभाग

डा. रीटा वशिष्ठ, अपर सचिव,
विधायी विभाग

डा. बी. एन. मणि,
सेवानिवृत्त अपर विधि सलाहकार,
विधि मंत्रालय

डा. सुरेन्द्र कुमार शर्मा, प्रिन्सिपल,
विधि विभाग, डी आई आर डी, गुरु
गोविंद सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय

डा. ऋषिपाल सिंह,
सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव एवं विधायी
परामर्शी, राजभाषा खंड

श्री कृष्ण गोपाल अग्रवाल,
सेवानिवृत्त संपादक, वि.सा.प्र.

श्री अनुराग दीप,
एसोसिएट प्रोफेसर,
भारतीय विधि संस्थान

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
प्रधान संपादक

श्री विनोद कुमार आर्य,
संपादक

श्री कमला कान्त,
संपादक

श्री अविनाश शुक्ला,
संपादक

सहायक संपादक : सर्वश्री असलम खान और पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक : सर्वश्री महीपाल सिंह और जसवन्त सिंह

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 36

वार्षिक : ₹ 135

© 2017 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रकाशन और विक्रय प्रबंधक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय (विधायी विभाग), भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

जुलाई-सितम्बर, 2017

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
उज्जवला राजे गायकवाड़ **बनाम** हिरेन अच्युतभाई शाह और अन्य	1
एच. डी. एफ. सी. ई. आर. जी. ओ. जनरल इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड **बनाम** श्रीमती नीमाजी और अन्य	61
कमल चंद **बनाम** गंगाराम	37
दिलीप कुमार रे और एक अन्य **बनाम** श्रीमती गीता रे और अन्य	20
नेशनल इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड **बनाम** श्रीमती डी. श्रीदेवी और अन्य	131
बालक राम और अन्य **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य	118
बिधि चन्द **बनाम** जगदीश चन्द और अन्य	69
बीरबल और अन्य **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य	102
मनसा देवी (श्रीमती) **बनाम** श्री वरिन्दर कुमार और अन्य	91
राज कुमार **बनाम** श्रीमती रुमालो देवी और अन्य	139
वेद प्रकाश **बनाम** टेक चन्द और अन्य	79

संसद् के अधिनियम

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2010 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1 – 20

पृष्ठ संख्या

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59)

– धारा 163क और 173 – दुर्घटना – प्रतिकर के लिए दावा – बीमा कंपनी द्वारा अपने दायित्व से इनकार करना – जहां बीमा कंपनी, बीमाकृत के किसी दोष के कारण घटित दुर्घटना में प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से इनकार करती है तथापि, यदि उसे प्रतिकर संदाय करने के लिए दायी ठहराया जाता है और उसके द्वारा प्रतिकर संदत्त कर दिया जाता है तो वह बीमा पालिसी की शर्तों और निबंधनों के भंग के आधार पर बीमाकृत से ऐसी प्रतिकर धनराशि वसूल सकती है ।

एच. डी. एफ. सी. ई. आर. जी. ओ. जनरल इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड बनाम **श्रीमती नीमाजी और अन्य** 61

– धारा 163क और 173 – दुर्घटना – प्रतिकर के लिए दावा – बीमा कंपनी द्वारा प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से इनकार करना – जहां बीमा कंपनी, बीमाकृत के किसी दोष के कारण घटित दुर्घटना में प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से इनकार करती है तथापि, यदि उसे प्रतिकर संदाय करने के लिए दायी ठहराया जाता है और उसके द्वारा प्रतिकर संदत्त कर दिया जाता है तो वह बीमा पालिसी की शर्तों और निबंधनों के भंग के आधार पर बीमाकृत से ऐसी प्रतिकर धनराशि वसूल सकती है ।

नेशनल इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड बनाम **श्रीमती डी. श्रीदेवी और अन्य** 131

संविधान, 1950

– अनुच्छेद 226 और 227 [सपठित भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 की धारा 6, 7 और 23] – हिमाचल प्रदेश

पृष्ठ संख्या

सरकार द्वारा सड़क निर्माण करने के लिए प्रश्नगत भूमि का लोक प्रयोजनार्थ में अर्जन करना – अर्जित भूमि के एवज में प्रतिकर का संदाय करने से इनकार करना – इस आधार पर कि प्रतिकर के लिए दावा, अत्यधिक और असाधारण विलम्ब से किया गया है – न्यायालय द्वारा इस आधार को खारिज करना – जहां यह साबित कर दिया जाता है कि कोई भूमि लोक हित में अर्जित की गई है तो उसके एवज में युक्तियुक्त प्रतिकर विधि के अनुसरण में देय होता है – राज्य इस आधार पर युक्तियुक्त प्रतिकर देने से इनकार नहीं कर सकता है कि भूमि अर्जन की कार्यवाहियां आरम्भ नहीं की गई हैं और प्रतिकर के लिए दावा, अत्यधिक और असाधारण विलम्ब से फाइल किया गया है ।

बीरबल और अन्य बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य** 102

– अनुच्छेद 227 [सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 2(11) और आदेश 22, नियम 5] – रिट – अचल संपदा का विल – वसीयतदार – विधिक प्रतिनिधि – संपदा से संबंधित वाद – अभिवाचित होने और पक्षकार बनाए जाने का अधिकार – यदि अभिलेख पर यह साबित कर दिया जाता है कि कोई व्यक्ति किसी ऐसी संपदा के वसीयतदार का विधिक प्रतिनिधि है जिसके बारे में विवाद्यक हैं तो वह व्यक्ति उस संपदा, जिसके बारे में विवाद्यक है तो वह व्यक्ति उस संपदा के बारे में फाइल किसी भी वाद में अभिवाचित होने और वाद करने का अधिकार रखता है यद्यपि इससे उस व्यक्ति का उस संपदा में कोई हक और अधिकार साबित नहीं होता है ।

उज्जवला राजे गायकवाड़ बनाम **हिरेन अच्युतभाई शाह और अन्य** 1

पृष्ठ संख्या

– अनुच्छेद 227 [सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 12 का नियम 6, आदेश 7 का नियम 7 और 8 तथा साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 58] – सह-स्वामियों में एक स्वामी द्वारा संयुक्त संपत्ति में से एक भाग को किराए पर देना – किराएदार द्वारा सम्पूर्ण किराया उसी स्वामी को संदत्त किया जाना – अन्य सह-स्वामियों द्वारा अपने हिस्से के किराए की मांग करते हुए दावा करना – दावा मंजूर होना – यदि अभिलेख पर यह साबित हो जाता है कि सह-स्वामियों में से एक स्वामी जिसने स्वयं सह-स्वामी होना स्वीकार किया है, ने संयुक्त संपत्ति के एक भाग को किराए पर दिया है और उसके विभिन्न अन्य सह-स्वामियों से सहमति नहीं प्राप्त की है और उस भाग से अर्जित सम्पूर्ण किराया स्वयं ही ले लेता है तो उसे प्रत्येक सह-स्वामियों को सम्पत्ति में उनके हिस्से के अनुपात में उस किराए में से संदत्त करना होगा ।

दिलीप कुमार रे और एक अन्य बनाम **श्रीमती गीता रे और अन्य** 20

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

– धारा 96 [सपठित संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53क] – भूस्वामी द्वारा बेदखली के लिए वाद – प्रतिवादी द्वारा वाद संपत्ति को खाली नहीं किया जाना – भूस्वामी और क्रेता के बीच संपत्ति अंतरण करने का करार होना – जहां पर भूस्वामी और प्रतिवादी के बीच प्रश्नगत मकान के बारे में विक्रय करार हुआ हो तो भूस्वामी उस प्रश्नगत मकान का कब्जा बेदखली के माध्यम से तभी प्राप्त कर सकता है जबकि विक्रय करार के अधीन देय प्रतिफल का उसके द्वारा संदाय कर दिया जाए ।

कमल चंद बनाम **गंगाराम** 37

पृष्ठ संख्या

– धारा 100 [सपठित हिमाचल प्रदेश जोत (चकबन्दी और खण्डकरण का निवारण) अधिनियम, 1971 की धारा 54] – द्वितीय अपील – विवादित भूमि की अदला-बदली – प्रतिकूल कब्जे द्वारा हक प्राप्त करने का दावा करना – दस्तावेजी और मौखिक साक्ष्यों द्वारा साबित नहीं होना – यदि अभिलेख पर के दस्तावेजी और मौखिक साक्ष्यों से यह साबित नहीं होता है कि विवादित भूमि की अदला-बदली हुई थी और निरन्तर तथा निर्बाध कब्जे से प्रतिकूल कब्जे के द्वारा हक अर्जित हो गया है तो ऐसा हक नामंजूर होने योग्य होगा और इसके अधीन कब्जा अवैध और अविधिमान्य होगा ।

बिधि चन्द बनाम **जगदीश चन्द और अन्य** 69

– धारा 100 और आदेश 2 का नियम 2 [सपठित संपत्ति अन्तरण अधिनियम, 1882 की धारा 6] – वाद संपत्ति का अन्यसंक्रामण करना – पैतृक या सहदायिकी संपत्ति होने का दावा करना – दावे की पुष्टि के लिए कोई भी मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं करना – अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य से वाद संपत्ति का स्व-अर्जित संपत्ति साबित होना – यदि अभिलेख पर के साक्ष्यों से यह साबित हो जाता है कि वाद संपत्ति स्व-अर्जित संपत्ति है तो उसका स्वामी उसे किसी भी व्यक्ति को अन्यसंक्रामण करने के लिए स्वतंत्र होता है – इसे इस आधार पर आक्षेपित नहीं किया जा सकता है कि वाद संपत्ति पैतृक या सहदायिकी है और अन्य सहदायिकों की सहमति से ही इसका अन्यसंक्रामण किया जा सकता है जब तक कि इसका पैतृक या सहदायिकी संपत्ति होना अभिलेख पर साबित नहीं कर दिया जाता है ।

वेद प्रकाश बनाम **टेक चन्द और अन्य** 79

पृष्ठ संख्या

– धारा 100 [हिमाचल प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम की धारा 46] – द्वितीय अपील – वाद सम्पत्ति का पूर्ण विभाजन – प्रत्येक सह-अंशधारियों का अपने-अपने हिस्से पर कब्जे सहित स्वामित्व स्थापित होना – विभाजन को आक्षेपित करना – आक्षेप निरस्त होना – यदि अभिलेख पर यह साबित हो जाता है कि वाद सम्पत्ति का पूर्ण विभाजन हो चुका है और प्रत्येक सह-अंशधारियों ने अपने-अपने हिस्से पर कब्जे सहित स्वामित्व प्राप्त कर लिया है तो वाद में विभाजन को आक्षेपित करते हुए सह-अंशधारी के रूप में अन्य के हिस्से की सम्पत्ति में दावा करना गलत, अवैध और अविधिमान्य होगा और ऐसा दावा रद्द किए जाने योग्य है ।

मनसा देवी (श्रीमती) बनाम **श्री वरिन्दर कुमार और अन्य** 91

– धारा 100 [सपठित हिमाचल प्रदेश भूमिहीन व्यक्तियों और अन्य अर्ह व्यक्तियों को नातौड़ भूमि की मंजूरी स्कीम, 1975 का खण्ड 11] – द्वितीय अपील – नातौड़ भूमि का आबंटन – प्राप्तिकर्ता द्वारा आबंटित भूमि पर कब्जा और स्वामित्व स्थापित करने के 20 वर्षों के पूर्व ही उस भूमि का अन्य व्यक्ति की भूमि से अदला-बदली करना – संबंधित प्राधिकारी द्वारा उस भूमि का आबंटन रद्द करना – इस आधार पर कि प्राप्तिकर्ता द्वारा आबंटन के सुसंगत निबंधनों, अर्थात् 20 वर्षों की अवधि तक अन्तरण करने पर निषेध, का अधिक्रमण किया गया है – प्राधिकारी के आबंटन रद्द करने वाले आदेश को निरस्त करना – यदि अभिलेखों से यह साबित होता है कि प्राप्तिकर्ता द्वारा आबंटन के सुसंगत संबंधित निबंधनों का अधिक्रमण नहीं किया गया है तो आबंटन रद्द करने वाला आदेश निरस्त किए जाने योग्य होगा क्योंकि सुसंगत अवधि

पृष्ठ संख्या

20 वर्ष को संशोधित करके 15 वर्ष करने के उपबंधों को भूतलक्षी प्रभाव दे दिया गया था ।

बालक राम और अन्य बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य** 118

– धारा 100 और आदेश 8 का नियम 5 [सपठित हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 6 और 8] – द्वितीय अपील – वाद संपत्ति का पैतृक और सहदायिकी संपत्ति होने का अभिवाक् किया जाना – सम्पुष्टि में कोई भी दस्तावेजी और मौखिक साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया जाना – वादपत्र में किए गए अभिकथनों से स्पष्टतः इनकार किया जाना – यदि अभिलेख पर किसी भी दस्तावेजी और मौखिक साक्ष्य द्वारा यह साबित नहीं किया जाता है कि वाद संपत्ति, पैतृक और सहदायिकी है और वादपत्र में इस बाबत प्रकथन से प्रत्यक्षतः इनकार किया जाता है तो ऐसी वाद संपत्ति का न्यागमन तत्समय प्रवृत्त विधि के अनुसार ही होगा न कि हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के उपबंधों के अनुसार होगा ।

राज कुमार बनाम **श्रीमती रुमालो देवी और अन्य** 139

उज्जवला राजे गायकवाड़

बनाम

हिरेन अच्युतभाई शाह और अन्य

तारीख 13 अप्रैल, 2016

न्यायमूर्ति एस. एच. वोरा

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 227 [सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 2(11) और आदेश 22, नियम 5] – रिट – अचल संपदा का विल – वसीयतदार – विधिक प्रतिनिधि – संपदा से संबंधित वाद – अभिवाचित होने और पक्षकार बनाए जाने का अधिकार – यदि अभिलेख पर यह साबित कर दिया जाता है कि कोई व्यक्ति किसी ऐसी संपदा के वसीयतदार का विधिक प्रतिनिधि है जिसके बारे में विवाद्यक हैं तो वह व्यक्ति उस संपदा, जिसके बारे में विवाद्यक है तो वह व्यक्ति उस संपदा के बारे में फाइल किसी भी वाद में अभिवाचित होने और वाद करने का अधिकार रखता है यद्यपि इससे उस व्यक्ति का उस संपदा में कोई हक और अधिकार साबित नहीं होता है ।

वर्तमान मामले में, संक्षिप्ततः कथन यह है कि मूल वादी-श्री एच. अच्युतभाई शाह ने 2008 की नियमित सिविल वाद सं. 913 फाइल करते हुए, अन्य बातों के साथ यह व्यादेश जारी करने के लिए प्रार्थना की है कि वर्तमान याची को वादपत्र में वर्णित ग्राम जैतलपुर, जिला वड़ोदरा जो शिवमहल पैलेस के रूप में ज्ञात है, जिसे स्वर्गीय राजकुमारी श्रीमती कमला देवी राजे गायकवाड़, याची की दादी, जिसकी मृत्यु तारीख 2 फरवरी, 1992 को हुई थी, द्वारा निष्पादित तारीख 9 दिसम्बर, 1991 के विल के अधीन मृतक वादी को वसीयत की गई थी, में स्थित सर्वे संख्या 86 पैकी में समाविष्ट भूमि में 1/3 भाग और सर्वे संख्या 126 पैकी-134/95/बी का अन्यसंक्रामण करने से वर्तमान याची को अवरुद्ध किया जाए । इसी प्रकार, मृतक वादी-श्री अच्युतभाई शाह ने भी याची और एक अन्य श्री चन्द्रकान्त लक्ष्मीदास पटेल के विरुद्ध 2011 की विशेष सिविल वाद सं. 533

फाइल की जिसमें अन्य बातों के साथ यह प्रार्थना की गई थी कि मौजा तालूका में स्थित 3000 वर्ग मीटर भूमि सर्वे संख्या 86 पैकी के संबंध में 17,76,06,000/- रुपए के प्रतिफल में तारीख 19 मार्च, 2010 को रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख को रद्द किया जाए । वादी-श्री अच्युतभाई शाह द्वारा याची और वाद संपत्ति के एक भाग के क्रेता के विरुद्ध संस्थित उपर्युक्त वादों की सुनवाई लम्बित रहने के दौरान उक्त श्री अच्युतभाई शाह की तारीख 28 मई, 2013 को मृत्यु हो गई और इसलिए, उसके विधिक प्रतिनिधियों ने संहिता, 1908 के आदेश 22, नियम 3 के उपबंधों के अधीन आवेदन फाइल किया था जिसे दोनों वादों में विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा मंजूर कर लिया गया था । अतएव, याची द्वारा वर्तमान याचिकाएं प्रस्तुत की गई हैं । न्यायालय द्वारा याचिकाएं खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – क्रमशः पक्षकारों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा न्यायालय के समक्ष किए गए निवेदनों को सुनने के पश्चात् इस न्यायालय ने विचार के लिए यह विवाद्यक विरचित किया कि क्या इसमें के प्रत्यर्थियों के पक्ष में वाद लाने का अधिकार बचा है या नहीं, क्योंकि मृतक वादी अभिकथित विल के अधीन एक निष्पादक था क्योंकि वह अपने वैयक्तिक और वैश्वासिक क्षमता में नियुक्त हुआ था न कि किसी आनुवांशिक क्षमता में नियुक्त हुआ था । द्वितीय विवाद्यक यह विरचित किया गया कि क्या तारीख 19 सितम्बर, 2008 के आदेश द्वारा मृतक वादी को उत्तराधिकार प्रमाणपत्र पर कार्य करने से अवरुद्ध करने से दोनों वादों को फाइल करने या बनाए रखने के लिए मृतक वादी का अधिकार निर्वापित हो गया और इसलिए, वाद को जारी रखने के लिए अभिलेख पर मृतक वादी के विधिक उत्तराधिकारियों को लाने का प्रश्न, जिसमें मृतक वादी को वाद संस्थित करने का कोई प्राधिकार नहीं था और मृतक वादी के विधिक उत्तराधिकारियों अर्थात् इसमें के प्रत्यर्थियों के पास कोई वाद हेतुक नहीं बचा था । न्यायालय के समक्ष किए गए निवेदनों के गुणागुणों पर विचार करने से यह प्रतीत होता है कि मृतक वादी ने 2008 की नियमित सिविल वाद सं. 913 फाइल की थी जिसमें अन्य बातों के साथ वाद संपत्ति का अन्यसंक्रामण करने से याची को अवरुद्ध करने के लिए व्यादेश जारी करने की भी प्रार्थना की थी क्योंकि मृतक वादी का उसके पक्ष में स्वर्गीय राजकुमारी श्रीमती कमला देवी राजे गायकवाड़ द्वारा निष्पादित तारीख 9 दिसम्बर, 1991 के विल के अधीन वसीयतदार के रूप में वाद संपत्ति में 1/3 हिस्सा था । वादपत्र में किए गए प्रकथनों से यह उपदर्शित होता है

कि मृतक वादी ने अपने पक्ष में मंजूर उत्तराधिकार प्रमाणपत्र के आदेश के प्रतिनिर्देश किया है । किन्तु यदि स्वयं विल पर विचार किया जाता है तो यह स्पष्ट होता है कि वादी ने स्वर्गीय राजकुमारी श्रीमती कमला देवी राजे गायकवाड़ द्वारा धारित 1/3 हिस्से का वसीयत की थी और इसलिए, उसे स्वर्गीय राजकुमारी श्रीमती कमला देवी राजे गायकवाड़ के 1/3 हिस्से प्रदत्त किए गए हैं । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री मिहिर ठाकरे ने इस न्यायालय को यह विश्वास दिलाने का प्रयास किया है कि मृतक वादी, उक्त विल के अधीन एक निष्पादक के रूप में नियुक्त हुआ था और इसलिए, उसे वाद संपत्ति में कोई अधिकार नहीं है और परिणामतः, उसके परिसर में इसमें के प्रत्यर्थियों के पक्ष में वाद करने का अधिकार नहीं बचा है । स्वयं विल के ध्यानपूर्वक परिशीलन से यह प्रतीत नहीं होता है कि मृतक वादी को स्वर्गीय राजकुमारी श्रीमती कमला देवी राजे गायकवाड़ की संपदा का निष्पादक या प्रशासक के रूप में नियुक्त किया गया था और इसलिए, याची के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री ठाकरे द्वारा उद्भूत इस प्रभाव की दलील कि प्रत्यर्थियों को एक निष्पादक का विधिक उत्तराधिकारी होने के नाते कार्यवाहियों को जारी रखने का कोई अधिकार नहीं है, विधि और तथ्यों दोनों की दृष्टि में गुणागुण रहित है । चूंकि दोनों वाद विल पर आधारित हैं और इसलिए, बिना प्रोबेट का विल, सभी कार्यवाहियों में, सिवाय प्रोबेट कार्यवाहियों के सम्पार्श्विक प्रयोजनों के लिए साक्ष्य में ग्राह्य है । इस विधिक प्रतिपादना के बारे में कोई विवाद नहीं है कि उत्तराधिकार प्रमाणपत्र की मंजूरी के लिए कार्यवाहियां, आवेदक की मृत्यु होने पर व्यपगत हो जाती हैं और ऐसे आवेदक के विधिक उत्तराधिकारियों को कार्यवाहियों को जारी रखने के लिए प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता है । यह सिद्धांत, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री मिहिर ठाकरे द्वारा न्यायालय के समक्ष उद्धृत निर्णयज विधियों में सुस्थिर है । किन्तु, ऐसी विधि की प्रतिपादना का अवलंब लेते हुए, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री मिहिर ठाकरे ने यह माना है कि मृतक वादी द्वारा 2000 की प्रोबेट आवेदन सं. 74 में समाविष्ट अचल संपत्तियों के संबंध में आरम्भ कार्यवाहियां कुछ नहीं हैं अपितु यह उत्तराधिकार प्रमाणपत्र प्राप्त करने के लिए आरम्भ कार्यवाहियां हैं । निस्संदेह, वादपत्र में इस प्रभाव की कतिपय और विनिर्दिष्ट प्रकथन की गई हैं कि वादी ने 2000 की प्रोबेट आवेदन सं. 74 में उसके द्वारा प्राप्त उत्तराधिकार प्रमाणपत्र के आधार पर वाद फाइल किया है । किन्तु इस प्रश्न पर विचार किए बिना कि क्या 2000 की प्रोबेट आवेदन सं. 74 के

माध्यम से आरम्भ कार्यवाहियां, प्रोबेट या उत्तराधिकार प्रमाणपत्र प्राप्त करने के लिए की गई थीं, यह तथ्य शेष रह जाता है कि इसमें के प्रत्यर्थियों ने मृतक वादी के विधिक उत्तराधिकारियों और प्रतिनिधियों के रूप में अभिलेख पर लाने के लिए आवेदन किया है ताकि स्वर्गीय राजकुमारी श्रीमती कमला देवी राजे गायकवाड़ द्वारा मृतक वादी के पक्ष में अचल संपत्तियों के संबंध में की गई वसीयत के बारे में वाद कार्यवाहियों को जारी रखा जा सके और इसलिए, बिना प्रोबेट/उत्तराधिकार प्रमाणपत्र के मृतक वादी और इसलिए, इसमें के प्रत्यर्थी, मृतक वादी अर्थात् प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 के पिता तथा प्रत्यर्थी सं. 3 के पति के परिसरों पर पक्षकारों के रूप में उन्हें अभिवाचित होने के लिए ऐसे आवेदन को कायम रखा जा सके । इसी प्रकार, माननीय उच्च न्यायालय, मुम्बई द्वारा 2004 की वसीयती याचिका सं. 402 में पारित तारीख 3 अक्तूबर, 2005 के आदेश द्वारा याची को प्रशासन पत्र मंजूर करना, पक्षकारों के रूप में इसमें के प्रत्यर्थियों को अभिवाचित करने के लिए वर्तमान आवेदनों की प्रतिरक्षा में याची की कोई सहायता नहीं करते हैं क्योंकि इस प्रकार, प्रशासन पत्र की मंजूरी, मुम्बई और मात्र महाराष्ट्र के कतिपय अन्य भागों में स्थित चल और अचल संपत्तियों के पक्ष में था । इस संबंध में, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री मिहिर ठाकरे द्वारा 2000 की प्रोबेट आवेदन सं. 74 में जारी उत्तराधिकार प्रमाणपत्र का प्रतिसंहरण करने के लिए फाइल 2008 की सिविल याचिका सं. 161 और उसमें तारीख 19 सितम्बर, 2008 को जारी आदेश के संबंध में किए गए निवेदनों पर विचार करना भी सुसंगत है । यह सत्य है कि सिविल न्यायालय विल में उल्लिखित संपत्तियों में किसी अधिकार को धारित करने से मृतक वादी को अवरुद्ध करते हैं और उसे संपत्तियों में किसी दायित्व और अधिकारों को सृजित करने से भी अवरुद्ध करते हैं और यह भी सत्य है कि ऐसा आदेश आज भी प्रवर्तित है । ऐसा आदेश मृतक वादी के विधिक उत्तराधिकारियों और प्रतिनिधियों को सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 22 के नियम 3 के उपबंधों के अधीन आवेदन करने से आवश्यक रूप से अवरुद्ध नहीं करते हैं और इसलिए, यह न्यायालय, इस संबंध में, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री मिहिर ठाकरे द्वारा किए गए निवेदनों को स्वीकार नहीं कर सकता है । तारीख 9 दिसम्बर, 1991 के विल का परिशीलन करने से, यह प्रतीत होता है कि मृतक वादी ने वसीयतदार होने के नाते स्वर्गीय राजकुमारी श्रीमती कमला देवी राजे गायकवाड़ की संपदा में 1/3 हिस्सा प्राप्त किया था और इसलिए, वह उक्त विल के अधीन

स्वर्गीय राजकुमारी श्रीमती कमला देवी राजे गायकवाड़ की संपदा का विधिक उत्तराधिकारी हो गया है और इसलिए, मृतक वादी, संहिता, 1908 की धारा 2(11) के अधीन यथापरिभाषित विधिक प्रतिनिधि है । न्यायालय की यह सुविचारित राय है कि न्यायालय यह जांच नहीं कर सकता है कि क्या मृतक वादी के प्रतिनिधियों के रूप में संयोजित हुए बिना उन्हें वाद करने का अधिकार बचा है या नहीं और इसलिए, इस प्रकार अभिवाचित करने के लिए आवेदनों को यह अवधारित किए बिना नामंजूर नहीं किया जा सकता है कि वाद करने का अधिकार बचा है या नहीं और उस सीमित प्रयोजन के लिए भी मृतक वादी के विधिक प्रतिनिधियों का संयोजन आवश्यक है । वर्तमान मामले में, इस बारे में कोई विवाद नहीं है कि प्रत्यर्थियों के बीच में से कौन विधिक प्रतिनिधि है । इसलिए, संहिता, 1908 के आदेश 22 के नियम 5 के साथ पठित नियम 10 के अधीन इजाजत मंजूर करने के प्रक्रम पर विस्तारपूर्वक जांच अपेक्षित नहीं है और इस प्रकार, विल की वैधता या अन्यथा का प्रश्न, प्रश्नगत है और इसलिए, हित के न्यागमन के बारे में कार्यवाहियों की अंतिम सुनवाई के समय विचार किया जा सकता है । सारांश में, प्रश्न जिसे न्यायालय को अग्रेषित किया जाना अपेक्षित है, यह है कि क्या प्रत्यर्थियों के प्रवर्तनीय अधिकार प्रभावित होते हैं, यदि उन्हें संयोजित नहीं किया जाता है । प्रश्नगत विल की अन्तर्वस्तुओं के प्रकाश में, इस न्यायालय के विवेक में, इस बारे में कोई संहेद नहीं रह जाता है कि मृतक वादी, वसीयतदार था और उसने वाद संपत्तियों में 1/3 हिस्से का पूर्ण वसीयत किया था और इसलिए, वह उन संपत्तियों के स्वामी के रूप में और उक्त विल के अधीन वसीयतदार की हैसियत में उन वादों को फाइल कर सकता है । (पैरा 6, 7, 8 और 9)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2009]	ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 2568 : **छत्तीसगढ़ राज्य और अन्य** बनाम **धीरजो कुमार सेनगर** ;	3
[2008]	(2008) 8 एस. सी. सी. 521 = ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 2866 : **जलादी सुगुना (मृत) मार्फत इसके विधिक प्रतिनिधिगण** बनाम **सत्य साईं सेन्ट्रल ट्रस्ट और अन्य** ;	4

[2007] 2007 (1) जी. एल. आर. 277 = ए. आई. आर. 2007 (एन. ओ. सी.) 661 (गुजरात) : **मिनाक्षीबेन शशिकांतभाई पटेल** बनाम **जिला कलक्टर, गांधी नगर** ; 7

[2004] (2004) 7 एस. सी. सी. 505 = ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 2060 : **आयुक्त, जालंधर खंड और अन्य** बनाम **मोहन कृशन अब्रोल और अन्य** ; 7

[2000] एम. ए. एन. यू./एच. पी./0101/2000 : **छांगी देवी** बनाम **जनरल पब्लिक और अन्य** । 3

आरम्भिक (सिविल रिट) अधिकारिता : 2015 की विशेष सिविल आवेदन सं. 14910.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन रिट याचिका ।

याचियों की ओर से सर्वश्री मिहिर ठाकरे, विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता और सलील एम. ठाकरे, विद्वान् अधिवक्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री एस. एन. सोपारकर, विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता और दिपेन सी. शाह, अधिवक्ता

न्यायमूर्ति एस. एच. वोरा – संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन प्रस्तुत वर्तमान रिट याचिकाओं के माध्यम से याची-मूल प्रतिवादी ने विद्वान् 12वें अपर सिविल न्यायाधीश और जे. एम. एफ. सी., वड़ोदरा द्वारा 2008 की नियमित सिविल वाद सं. 913 में पारित तारीख 23 जनवरी, 2015 के आदेश प्रदर्श 48 और विद्वान् चतुर्थ अपर ज्येष्ठ सिविल न्यायाधीश, वड़ोदरा द्वारा 2011 की विशेष सिविल वाद सं. 535 में पारित तारीख 9 जुलाई, 2015 के आदेश प्रदर्श 53, जिसके द्वारा विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (जिसे संक्षेप में "संहिता" कहा गया है) के आदेश 22, नियम 3 के उपबंधों के अधीन मृतक-मूल वादी के विधिक उत्तराधिकारियों द्वारा प्रस्तुत आवेदनों को मंजूर कर लिया था और उन्हें उपर्युक्त वादों में मृतक-मूल वादी के विधिक उत्तराधिकारियों और प्रतिनिधियों के रूप में अभिवाचित किया था, को अभिखंडित और अपास्त

करने के लिए रिट, आदेश या निदेश जारी करने की प्रार्थना की थी ।

2. संक्षिप्ततः कथन यह है कि मूल वादी-श्री एच. अच्युतभाई शाह ने 2008 की नियमित सिविल वाद सं. 913 फाइल करते हुए, अन्य बातों के साथ यह व्यादेश जारी करने के लिए प्रार्थना की है कि वर्तमान याची को वादपत्र में वर्णित ग्राम जैतलपुर, जिला वड़ोदरा जो शिवमहल पैलेस के रूप में ज्ञात है, जिसे स्वर्गीय राजकुमारी श्रीमती कमला देवी राजे गायकवाड़, याची की दादी, जिसकी मृत्यु तारीख 2 फरवरी, 1992 को हुई थी, द्वारा निष्पादित तारीख 9 दिसम्बर, 1991 के विल के अधीन मृतक वादी को वसीयत की गई थी, में स्थित सर्वे संख्या 86 पैकी में समाविष्ट भूमि में 1/3 भाग और सर्वे संख्या 126 पैकी-134/95/बी का अन्यसंक्रामण करने से वर्तमान याची को अवरुद्ध किया जाए । इसी प्रकार, मृतक वादी-श्री अच्युतभाई शाह ने भी याची और एक अन्य श्री चन्द्रकान्त लक्ष्मीदास पटेल के विरुद्ध 2011 की विशेष सिविल वाद सं. 533 फाइल की जिसमें अन्य बातों के साथ यह प्रार्थना की गई थी कि मौजा तालूका में स्थित 3000 वर्ग मीटर भूमि सर्वे संख्या 86 पैकी के संबंध में 17,76,06,000/- रुपए के प्रतिफल में तारीख 19 मार्च, 2010 को रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख को रद्द किया जाए । वादी-श्री अच्युतभाई शाह द्वारा याची और वाद संपत्ति के एक भाग के क्रेता के विरुद्ध संस्थित उपर्युक्त वादों की सुनवाई लम्बित रहने के दौरान उक्त श्री अच्युतभाई शाह की तारीख 28 मई, 2013 को मृत्यु हो गई और इसलिए, उसके विधिक प्रतिनिधियों ने संहिता, 1908 के आदेश 22, नियम 3 के उपबंधों के अधीन आवेदन फाइल किया था जिसे दोनों वादों में विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा मंजूर कर लिया गया था । अतएव, याची (विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष मूल प्रतिवादी) द्वारा वर्तमान याचिकाएं प्रस्तुत की गई हैं ।

3. आक्षेपित आदेशों पर आक्षेप करते हुए, याची के विद्वान् अधिवक्ता श्री एस. एम. ठाकरे और विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता मिहिर ठाकरे ने यह दलील दी कि मृतक वादी के पास वाद लाने का अधिकार नहीं बचा है क्योंकि वह अभिकथित विल के अधीन स्वर्गीय राजकुमारी श्रीमती कमला देवी राजे गायकवाड़ का अभिकथित निष्पादक था और इसलिए निष्पादक का अधिकार वैयक्तिक प्रकृति का होता है और ऐसे अधिकार का उसके साथ ही अंत हो जाता है । इसलिए, वाद लाने का अधिकार, दोनों वादों में, मृतक वादी के विधिक उत्तराधिकारियों के पास नहीं बचा है । विद्वान् ज्येष्ठ

काउंसेल श्री ठाकरे ने यह दलील दी कि अभिकथित विल को विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया था किन्तु इसे इस न्यायालय के समक्ष वर्तमान कार्यवाहियों में अभिलेख पर रखा गया है और इसलिए, आक्षेपित आदेश विधि में दूषित है । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री ठाकरे ने यह दलील दी कि 2008 की नियमित सिविल वाद सं. 913, 2000 की प्रोबेट आवेदन सं. 74 में अचल संपत्तियों के संबंध में मृतक वादी को जारी उत्तराधिकार प्रमाणपत्र पर आधारित है । उत्तराधिकार प्रमाणपत्र की मंजूरी के विरुद्ध याची ने अभिकथित प्रतिसंहरण और पूर्णतः अवैध उत्तराधिकार प्रमाणपत्र के लिए 2008 की सिविल याचिका सं. 161 के अधीन प्रतिसंहरण याचिका फाइल की थी । सिविल न्यायालय, वड़ोदरा ने तारीख 19 सितम्बर, 2008 के आदेश द्वारा मृतक वादी को विल में उल्लिखित संपत्तियों में कोई भी अधिकार रखने से अवरुद्ध कर दिया और उन संपत्तियों में किन्हीं दायित्वों और अधिकारों को सृजित करने से भी उसे अवरुद्ध कर दिया और उक्त आदेश आज भी प्रवृत्त है । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री ठाकरे ने यह दलील दी कि माननीय उच्च न्यायालय बाम्बे द्वारा 2004 की वसीयती याचिका संख्या 402 में पारित तारीख 3 अक्तूबर, 2005 के आदेश द्वारा याची को प्रशासन पत्र मंजूर कर लिया गया था और इस प्रकार, उसे स्वर्गीय राजकुमारी श्रीमती कमला देवी राजे गायकवाड़ की संपदा जिनमें दोनों चल या अचल आस्तियां या संपत्तियां सम्मिलित थीं, का एकमात्र प्रशासक नियुक्त किया गया था । उक्त प्रशासन पत्र की मंजूरी अब भी प्रवर्तित है और प्रवर्तनशील है । अंततः, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री ठाकरे ने यह दलील दी कि विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने बिना कोई कारण समनुदेशित किए, आक्षेपित आदेशों को पारित किया है और इसलिए विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 22 के नियम 3 के उपबंधों के अधीन प्रस्तुत मृतक वादी के विधिक उत्तराधिकारियों के आवेदनों को स्वीकार करने में विधिक त्रुटि कारित की है । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री ठाकरे ने अपने निवेदनों के समर्थन में, **छत्तीसगढ़ राज्य और अन्य** बनाम **धीरजो कुमार सेनगर**[1] वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय पर जोर दिया जिसमें यह विधिक प्रतिपादना स्थापित की गई थी कि उत्तराधिकार प्रमाणपत्र मात्र मृतक के बकायों को एकत्रित करने के लिए समर्थ बनाता है और किसी व्यक्ति के

[1] ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 2568.

पक्ष में कोई प्रास्थिति प्रदत्त नहीं करता है । उत्तराधिकार प्रमाणपत्र की मंजूरी के कारण एक व्यक्ति जिसके पक्ष में उत्तराधिकार प्रमाणपत्र मंजूर किया गया है, मृतक के उत्तराधिकारियों और विधिक प्रतिनिधियों को देय रकम का वितरण करने के लिए एक न्यासी हो जाता है और वह उसके अधीन कोई अधिकार प्राप्त नहीं करता है । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री ठाकरे ने **छांगी देवी** बनाम **जनरल पब्लिक और अन्य**[1] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय का भी अवलंब लिया जिसमें यह विधिक प्रतिपादना स्थापित की गई थी कि आवेदक और ऐसे आवेदक के विधिक उत्तराधिकारियों की मृत्यु पर उत्तराधिकार प्रमाणपत्र की मंजूरी को व्यपगत करने के लिए कार्यवाहियों को जारी रखना प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता है ।

4. इसके विपरीत, प्रत्यर्थियों-मृतक के विधिक उत्तराधिकारियों-वादी के विद्वान् अधिवक्ता श्री डी. सी. शाह के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री एस. एन. सोपारकर ने यह दलील दी कि विल को तारीख 9 दिसम्बर, 1991 को इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया था और इसलिए, विल को प्रस्तुत नहीं करने की शिकायत कायम नहीं रखी जा सकती है न ही यह आदेशों को अवैध बना सकती हैं । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री एस. एन. सोपारकर ने यह दलील दी कि मृतक वादी ने तारीख 9 दिसम्बर, 1991 के विल के अधीन वसीयतदार के रूप में 1/3 हिस्से का दावा किया था । उक्त विल की अन्तर्वस्तुओं की ओर इस न्यायालय का ध्यान आकर्षित करने के पश्चात् विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री एस. एन. सोपारकर ने यह दलील दी कि मृतक-वादी को उक्त विल के अधीन वाद संपत्तियों में पूर्णतः 1/3 हिस्से का वसीयत किया गया था और उसने उन संपत्तियों के स्वामी की हैसियत में और विल के अधीन वसीयतदार की हैसियत में, 2008 की नियमित सिविल वाद सं. 913 फाइल की थी । इसमें के प्रत्यर्थियों में निर्विवाद तौर पर विधिक उत्तराधिकारी होने (मृतक वादी-श्री अच्युतभाई शाह की पत्नी और पुत्र) के नाते उनमें वसीयत संपदा और इनके अधिकार न्यागत हो गए । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री एस. एन. सोपारकर ने यह दलील दी कि याची ने आज की तारीख तक तारीख 9 दिसम्बर, 1991 के विल को चुनौती नहीं दी है और याची द्वारा लाए गए उक्त विल को प्रश्नगत करते हुए कोई कार्यवाहियां नहीं की गई हैं जिनके अधीन इसमें के प्रत्यर्थी वसीयतदार के

---

[1] एम. ए. एन. यू./एच. पी./0101/2000.

रूप में मृतक वादी के माध्यम से दावा कर रहे हैं । जहां तक प्रत्यर्थियों का मृतक वादी के विधिक उत्तराधिकारी/विधिक प्रतिनिधि होने के संबंध में किसी संविवाद या विवाद के होने के अभाव में और याची द्वारा या किसी अन्य पक्षकार द्वारा इसके प्रतिकूल कोई दावा करने के अभाव में, इसमें के प्रत्यर्थियों को मृतक वादी के विधिक प्रतिनिधियों के रूप में विवादित करने से संबंधित यह प्रश्न कि वाद लाने का अधिकार बचा है या नहीं, को इस न्यायालय के न्यायनिर्णयन के लिए उद्भूत नहीं किया जा सकता है । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री एस. एन. सोपारकर ने यह दलील दी कि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 22 के नियम 3 के उपबंधों के अधीन प्रयुक्त वाक्य "वाद लाने का अधिकार बचा है" जो वादी के निवास स्थान या प्रास्थिति अथवा वाद में विवाद्यक के न्यायनिर्णयन से संबंधित नहीं है और प्रश्नगत आवेदन में यह अवधारण करना है कि प्रत्यर्थियों को मृतक वादी के विधिक उत्तराधिकारियों और प्रतिनिधियों के रूप में सम्मिलित किया जा सकता है या नहीं । सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 22 के नियम 3 में उक्त वाक्य को मात्र इस सीमित रूप में प्रयुक्त किया गया है कि क्या अस्तित्ववान् विधिक प्रतिनिधि, जो वादी के वाद को जारी रख सकता है । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री एस. एन. सोपारकर ने यह दलील दी कि 2004 की वसीयती याचिका सं. 402 को याची द्वारा स्वर्गीय राजकुमारी श्रीमती कमला देवी राजे गायकवाड़ की मृत्यु की तारीख से 12 वर्ष पश्चात्, मृतक वादी के पक्ष में वड़ोदरा में स्थित कतिपय अचल सम्पत्तियों के लिए निष्पादित तारीख 9 दिसम्बर, 1991 के विल पर जोर देते हुए फाइल की गई थी । उनके अनुसार, याची ने मुम्बई और महाराष्ट्र के विभिन्न अन्य भागों में स्थित मात्र चल और अचल सम्पत्तियों के संबंध में प्रशासन पत्र प्राप्त किया था और याची को गुजरात में स्थित संपत्तियों विशिष्टतया, तारीख 9 दिसम्बर, 1991 के विल के अधीन मृतक वादी को वसीयत वाद संपत्ति के संबंध में कोई प्रशासन पत्र मंजूर नहीं किया गया था और इसलिए, उक्त वसीयती याचिका के संदर्भ में, यह अमहत्वपूर्ण हो जाता है अथवा यह सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 22 के नियम 3 के अधीन प्रस्तुत आवेदनों में अन्तर्वलित विवाद्यकों को लागू नहीं होता है । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री एस. एन. सोपारकर ने यह दलील दी कि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 2(11) के साथ पठित आदेश 22 के नियम 3 के क्षेत्र पर विचार करते हुए, प्रत्यर्थी, मृतक वादी के विधिक उत्तराधिकारी और प्रतिनिधि हैं और इसलिए, विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने

प्रश्नगत आवेदन को सही ही मंजूर किया है क्योंकि अभिलेख के आमुख पर ऐसी कोई त्रुटि प्रकट नहीं होती है जिससे कि इस न्यायालय द्वारा संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन इस न्यायालय की पर्यवेक्षणात्मक अधिकारिता का अवलंब लेने में हस्तक्षेप करना उद्भूत होता है । अपने निवेदनों के समर्थन में विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री एस. एन. सोपारकर ने **जलादी सुगुना (मृत) मार्फत इसके विधिक प्रतिनिधिगण** बनाम **सत्य साईं सेन्ट्रल ट्रस्ट और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए विनिश्चय का अवलंब लिया, विशिष्टतया निर्णय के पैरा 12 और 15 में अभिलिखित मताभिव्यक्तियों का, जो इस प्रकार है :–

> "12. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 2(11) में परिभाषा के अनुसार, 'विधिक प्रतिनिधि' से वह व्यक्ति अभिप्रेत है जो मृत व्यक्ति की संपदा का विधि की दृष्टि से प्रतिनिधित्व करता है और इसके अन्तर्गत कोई ऐसा व्यक्ति आता है जो मृतक की संपदा में दखलंदाजी करता है । इस प्रकार, विल के अधीन एक वसीयतदार जो मृतक की संपदा में दखलंदार होने के नाते मृतक वसीयतकर्ता की संपदा का प्रतिनिधित्व करने का आशय रखता है वह विधिक प्रतिनिधि होगा ।
>
> 15. अभिलेख पर विधिक प्रतिनिधि के रूप में रखने के लिए आवेदन फाइल करना, अभिलेख पर विधिक प्रतिनिधि बनाने की कोटि में नहीं आता है । जब एक विधिक प्रतिनिधि आवेदन फाइल करता है तो न्यायालय को इस पर विचार करना चाहिए और यह विनिश्चित करना चाहिए कि क्या विधिक प्रतिनिधियों के रूप में इसमें नामित व्यक्तियों को मृतक की संपदा का प्रतिनिधित्व करने के लिए अभिलेख पर लाया जाना चाहिए । जब तक न्यायालय द्वारा ऐसा विनिश्चय नहीं कर दिया जाता तब तक विधिक प्रतिनिधियों के रूप में दावा करने वाले व्यक्तियों को मृतक की संपदा का प्रतिनिधित्व करने का कोई अधिकार नहीं होता है न ही मामले में अभियोजन या प्रतिरक्षा करने का अधिकार होता है । यदि यह विवादित है कि कौन विधिक प्रतिनिधि है तो ऐसे विवाद्यक पर विनिश्चय किया जाना चाहिए । मात्र जब न्यायालय द्वारा विधिक प्रतिनिधि के प्रश्न पर

---

[1] (2008) 8 एस. सी. सी. 521 = ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 2866.

अवधारण कर दिया जाता है और ऐसा विधिक प्रतिनिधि अभिलेख पर लाया जाता है तो यह कहा जा सकता है कि वह मृतक की संपदा का प्रतिनिधित्व करता है । उस मामले का न्यायनिर्णयन करने के लिए यह अवधारित किया जाना चाहिए कि संहिता, 1908 के आदेश 22 के नियम 5 के अधीन मृतक की संपदा का प्रतिनिधित्व करने के सीमित प्रयोजन के लिए विल के दौरान विधिक प्रतिनिधि कौन हैं । ऐसे सीमित प्रयोजन के लिए ऐसा अवधारण, उस व्यक्ति को संपत्ति में किसी अधिकार का विधिक प्रतिनिधित्व करने के लिए अभिनिर्धारित नहीं किया जाना चाहिए जो मृतक की संपदा के अन्य विरोधी दावेदारों के साथ-साथ वाद की विषय-वस्तु है ।"

5. विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री एस. एन. सोपारकर ने निम्नलिखित विनिश्चयों का भी अवलंब लिया है :–

(i) अमित कुमार शाव और एक अन्य **बनाम** फरीदा खातून और एक अन्य [(2005) 11 एस. सी. सी. 403 = ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 2209] –

'(10) कार्यवाही में पक्षकार को जोड़ने की न्यायालय की शक्ति एकमात्र इस प्रश्न पर निर्भर नहीं हो सकती है कि क्या वह वाद संपत्ति में हितबद्ध है । यह प्रश्न कि क्या एक व्यक्ति का अधिकार प्रभावित हो सकता है यदि उसे एक पक्षकार के रूप में नहीं जोड़ा जाता है । तथापि, ऐसे अधिकार में आवश्यक रूप से प्रवर्तनीय विधिक अधिकार सम्मिलित होता है ।

(12) आदेश 22 नियम 10 के अधीन इजाजत मंजूर करने के प्रक्रम पर कोई सविस्तार जांच करना अनुध्यात नहीं हैं । न्यायालय का, उस व्यक्ति या उसके विरुद्ध वाद जारी रखने के लिए इजाजत मंजूर करने के अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करने के लिए प्रथमदृष्ट्या मात्र यह समाधान होना चाहिए कि उस व्यक्ति में हित, समनुदेशन या न्यागमन द्वारा न्यागत होता है । समनुदेशन या न्यागमन की मौजूदगी और वैधता के बारे में प्रश्न पर कार्यवाहियों की अंतिम सुनवाई के प्रक्रम पर विचार किया जा सकता है । न्यायालय का वाद को जारी रखने के लिए इजाजत मंजूर करने में अपने विवेकाधिकार का प्रयोग

करने के लिए मात्र प्रथमदृष्ट्या समाधान होना चाहिए ।'

(ii) जवाहर लाल **बनाम** श्रीमती सरस्वतीबाई बाबूलाल जोशी और अन्य (ए. आई. आर. 1987 बाम्बे 276) –

'12. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 22 के नियम 10 के उपबंधों और प्रमाणिकताओं जिसे मैंने निर्दिष्ट किया है, को ध्यान में रखते हुए, यह प्रकट होता है कि इजाजत मंजूर करने के प्रक्रम पर विस्तारपूर्वक जांच करना अनुध्यात नहीं है । न्यायालय का, उस व्यक्ति या उसके विरुद्ध वाद जारी रखने के लिए इजाजत मंजूर करने के अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करने के लिए प्रथमदृष्ट्या मात्र यह समाधान होना चाहिए कि उस व्यक्ति में हित, समनुदेशन या न्यागमन द्वारा न्यागत होता है और समनुदेशन या न्यागत की मौजूदगी और वैधता के बारे में प्रश्न पर गुणागुणों के आधार पर वाद के विचारण के प्रक्रम पर विचार किया जा सकता है । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश की विधिक प्रास्थिति ऐसा होने के कारण सही है और उनके द्वारा प्रयोग किए गए विवेकाधिकार में हस्तक्षेप करने की कोई आवश्यकता नहीं है ।'

6. क्रमशः पक्षकारों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा न्यायालय के समक्ष किए गए निवेदनों को सुनने के पश्चात् इस न्यायालय ने विचार के लिए यह विवाद्यक विरचित किया कि क्या इसमें के प्रत्यर्थियों के पक्ष में वाद लाने का अधिकार बचा है या नहीं, क्योंकि मृतक वादी अभिकथित विल के अधीन एक निष्पादक था क्योंकि वह अपने वैयक्तिक और वैश्वासिक क्षमता में नियुक्त हुआ था न कि किसी आनुवांशिक क्षमता में नियुक्त हुआ था । द्वितीय विवाद्यक यह विरचित किया गया कि क्या तारीख 19 सितम्बर, 2008 के आदेश द्वारा मृतक वादी को उत्तराधिकार प्रमाणपत्र पर कार्य करने से अवरुद्ध करने से दोनों वादों को फाइल करने या बनाए रखने के लिए मृतक वादी का अधिकार निर्वापित हो गया और इसलिए, वाद को जारी रखने के लिए अभिलेख पर मृतक वादी के विधिक उत्तराधिकारियों को लाने का प्रश्न, जिसमें मृतक वादी को वाद संस्थित करने का कोई प्राधिकार नहीं था और मृतक वादी के विधिक उत्तराधिकारियों अर्थात् इसमें के प्रत्यर्थियों के पास कोई वाद हेतुक नहीं

बचा था ।

7. न्यायालय के समक्ष किए गए निवेदनों के गुणागुणों पर विचार करने से यह प्रतीत होता है कि मृतक वादी ने 2008 की नियमित सिविल वाद सं. 913 फाइल की थी जिसमें अन्य बातों के साथ वाद संपत्ति का अन्यसंक्रामण करने से याची को अवरुद्ध करने के लिए व्यादेश जारी करने की भी प्रार्थना की थी क्योंकि मृतक वादी का उसके पक्ष में स्वर्गीय राजकुमारी श्रीमती कमला देवी राजे गायकवाड़ द्वारा निष्पादित तारीख 9 दिसम्बर, 1991 के विल के अधीन वसीयतदार के रूप में वाद संपत्ति में 1/3 हिस्सा था । वादपत्र में किए गए प्रकथनों से यह उपदर्शित होता है कि मृतक वादी ने अपने पक्ष में मंजूर उत्तराधिकार प्रमाणपत्र के आदेश के प्रतिनिर्देश किया है । किन्तु यदि स्वयं विल पर विचार किया जाता है तो यह स्पष्ट होता है कि वादी ने स्वर्गीय राजकुमारी श्रीमती कमला देवी राजे गायकवाड़ द्वारा धारित 1/3 हिस्से का वसीयत की थी और इसलिए, उसे स्वर्गीय राजकुमारी श्रीमती कमला देवी राजे गायकवाड़ के 1/3 हिस्से प्रदत्त किए गए हैं । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री मिहिर ठाकरे ने इस न्यायालय को यह विश्वास दिलाने का प्रयास किया है कि मृतक वादी, उक्त विल के अधीन एक निष्पादक के रूप में नियुक्त हुआ था और इसलिए, उसे वाद संपत्ति में कोई अधिकार नहीं है और परिणामतः, उसके परिसर में इसमें के प्रत्यर्थियों के पक्ष में वाद करने का अधिकार नहीं बचा है । स्वयं विल के ध्यानपूर्वक परिशीलन से यह प्रतीत नहीं होता है कि मृतक वादी को स्वर्गीय राजकुमारी श्रीमती कमला देवी राजे गायकवाड़ की संपदा का निष्पादक या प्रशासक के रूप में नियुक्त किया गया था और इसलिए, याची के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री ठाकरे द्वारा उद्भूत इस प्रभाव की दलील कि प्रत्यर्थियों को एक निष्पादक का विधिक उत्तराधिकारी होने के नाते कार्यवाहियों को जारी रखने का कोई अधिकार नहीं है, विधि और तथ्यों दोनों की दृष्टि में गुणागुण रहित है । चूंकि दोनों वाद विल पर आधारित हैं और इसलिए, बिना प्रोबेट का विल, सभी कार्यवाहियों में सिवाय प्रोबेट कार्यवाहियों के सम्पार्श्विक प्रयोजनों के लिए साक्ष्य में ग्राह्य है और इस प्रकार का सिद्धांत, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **आयुक्त, जालंधर खंड और अन्य** बनाम **मोहन कृशन अब्रोल और एक अन्य**[1] वाले मामले में प्रतिपादित किया गया है । अन्यथा भी **मिनाक्षीबेन शशिकांतभाई**

[1] (2004) 7 एस. सी. सी. 505 = ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 2060.

पटेल बनाम **जिला कलक्टर, गांधी नगर**[1] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय के अनुसार, एक प्रोबेट, संपत्ति के ऊपर अधिकारों को सिद्ध करने के लिए अनिवार्य नहीं है जबकि संपत्ति गुजरात में स्थित है और इसलिए, विल के अधीन वसीयतदार, बिना प्रोबेट के भी विल के अनुसरण में अधिकारों को सिद्ध कर सकता है ।

8. इस विधिक प्रतिपादना के बारे में कोई विवाद नहीं है कि उत्तराधिकार प्रमाणपत्र की मंजूरी के लिए कार्यवाहियां, आवेदक की मृत्यु होने पर व्यपगत हो जाती हैं और ऐसे आवेदक के विधिक उत्तराधिकारियों को कार्यवाहियों को जारी रखने के लिए प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता है । यह सिद्धांत, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री मिहिर ठाकरे द्वारा न्यायालय के समक्ष उद्धृत निर्णयज विधियों में सुस्थिर है । किन्तु, ऐसी विधि की प्रतिपादना का अवलंब लेते हुए, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री मिहिर ठाकरे ने यह माना है कि मृतक वादी द्वारा 2000 की प्रोबेट आवेदन सं. 74 में समाविष्ट अचल संपत्तियों के संबंध में आरम्भ कार्यवाहियां कुछ नहीं हैं अपितु यह उत्तराधिकार प्रमाणपत्र प्राप्त करने के लिए आरम्भ कार्यवाहियां हैं । निस्संदेह, वादपत्र में इस प्रभाव की कतिपय और विनिर्दिष्ट प्रकथन की गई हैं कि वादी ने 2000 की प्रोबेट आवेदन सं. 74 में उसके द्वारा प्राप्त उत्तराधिकार प्रमाणपत्र के आधार पर वाद फाइल किया है । किन्तु इस प्रश्न पर विचार किए बिना कि क्या 2000 की प्रोबेट आवेदन सं. 74 के माध्यम से आरम्भ कार्यवाहियां, प्रोबेट या उत्तराधिकार प्रमाणपत्र प्राप्त करने के लिए की गई थीं, यह तथ्य शेष रह जाता है कि इसमें के प्रत्यर्थियों ने मृतक वादी के विधिक उत्तराधिकारियों और प्रतिनिधियों के रूप में अभिलेख पर लाने के लिए आवेदन किया है ताकि स्वर्गीय राजकुमारी श्रीमती कमला देवी राजे गायकवाड़ द्वारा मृतक वादी के पक्ष में अचल संपत्तियों के संबंध में की गई वसीयत के बारे में वाद कार्यवाहियों को जारी रखा जा सके और इसलिए, बिना प्रोबेट/उत्तराधिकार प्रमाणपत्र के मृतक वादी और इसलिए, इसमें के प्रत्यर्थी, मृतक वादी अर्थात् प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 के पिता तथा प्रत्यर्थी सं. 3 के पति के परिसरों पर पक्षकारों के रूप में उन्हें अभिवाचित होने के लिए ऐसे आवेदन को कायम रखा जा सके । इसी प्रकार, माननीय उच्च न्यायालय बाम्बे द्वारा 2004 की वसीयती याचिका सं. 402 में पारित

---

[1] 2007 (1) जी. एल. आर. 277 = ए. आई. आर. 2007 (एन. ओ. सी.) 661 (गुजरात).

तारीख 3 अक्तूबर, 2005 के आदेश द्वारा याची को प्रशासन पत्र मंजूर करना, पक्षकारों के रूप में इसमें के प्रत्यर्थियों को अभिवाचित करने के लिए वर्तमान आवेदनों की प्रतिरक्षा में याची की कोई सहायता नहीं करते हैं क्योंकि इस प्रकार, प्रशासन पत्र की मंजूरी, मुम्बई और मात्र महाराष्ट्र के कतिपय अन्य भागों में स्थित चल और अचल संपत्तियों के पक्ष में था । इस संबंध में, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री मिहिर ठाकरे द्वारा 2000 की प्रोबेट आवेदन सं. 74 में जारी उत्तराधिकार प्रमाणपत्र का प्रतिसंहरण करने के लिए फाइल 2008 की सिविल याचिका सं. 161 और उसमें तारीख 19 सितम्बर, 2008 को जारी आदेश के संबंध में किए गए निवेदनों पर विचार करना भी सुसंगत है । यह सत्य है कि सिविल न्यायालय विल में उल्लिखित संपत्तियों में किसी अधिकार को धारित करने से मृतक वादी को अवरुद्ध करते हैं और उसे संपत्तियों में किसी दायित्व और अधिकारों को सृजित करने से भी अवरुद्ध करते हैं और यह भी सत्य है कि ऐसा आदेश आज भी प्रवर्तित है । ऐसा आदेश मृतक वादी के विधिक उत्तराधिकारियों और प्रतिनिधियों को सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 22 के नियम 3 के उपबंधों के अधीन आवेदन करने से आवश्यक रूप से अवरुद्ध नहीं करते हैं और इसलिए, यह न्यायालय, इस संबंध में, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री मिहिर ठाकरे द्वारा किए गए निवेदनों को स्वीकार नहीं कर सकता है ।

9. तारीख 9 दिसम्बर, 1991 के विल का परिशीलन करने से यह प्रतीत होता है कि मृतक वादी ने वसीयतदार होने के नाते स्वर्गीय राजकुमारी श्रीमती कमला देवी राजे गायकवाड़ की संपदा में 1/3 हिस्सा प्राप्त किया था और इसलिए, वह उक्त विल के अधीन स्वर्गीय राजकुमारी श्रीमती कमला देवी राजे गायकवाड़ की संपदा का विधिक उत्तराधिकारी हो गया है और इसलिए, मृतक वादी, संहिता, 1908 की धारा 2(11) के अधीन यथापरिभाषित विधिक प्रतिनिधि है । **जलादी सुगना (मृत)** मार्फत **इसके विधिक प्रतिनिधिगण** (उपर्युक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने विधिक प्रतिनिधि की परिभाषा को स्पष्टीकृत करते हुए, यह मत व्यक्त किया है कि विधिक प्रतिनिधि का अभिप्राय उस व्यक्ति से है जो विधि में मृतक व्यक्ति की संपदा का प्रतिनिधित्व करता है और इसमें ऐसा कोई व्यक्ति सम्मिलित है जो मृतक की संपदा में दखल रखता है । इस प्रकार, विल के अधीन वसीयतदार, जो मृतक की संपदा में दखल

रखने के नाते मृतक वसीयतकर्ता की संपदा का प्रतिनिधित्व करने का आशय रखता है, विधिक प्रतिनिधि होगा । इसलिए, इस विवाद्यक का अवधारण करने के लिए कि संहिता, 1908 के आदेश 22 के नियम 5 के अधीन विधिक प्रतिनिधि कौन है, उपर्युक्त वाद का न्यायनिर्णयन करने के लिए मृतक की संपदा का प्रतिनिधित्व सीमित प्रयोजन के लिए होगा । ऐसा अवधारण, जैसा कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है, सीमित प्रयोजन के लिए होता है और विधिक प्रतिनिधि अभिनिर्धारित होने वाले व्यक्ति को उस संपत्ति में कोई अधिकार प्रदत्त नहीं होता है जो वाद के साथ-साथ मृतक की संपदा में अन्य विरोधी दावेदारों की विषय-वस्तु है । उपर्युक्त मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि विल के अधीन वसीयतदार, जो मृतक की संपदा में दखल रखने के नाते मृतक वसीयतकर्ता की संपदा का प्रतिनिधित्व करने का आशय रखता है, विधिक प्रतिनिधि होगा और परिणामतः, विधिक प्रतिनिधियों, जो मृतक वादी की संपदा को उत्तराधिकार में प्राप्त करते हैं, को मृतक की संपदा का प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्तियों के रूप में उनकी हैसियत में सुना जाना चाहिए । इसलिए, वादी के परिसरों के बारे में यह नहीं कहा जा सकता है कि प्रत्यर्थियों के पक्ष में, वाद करने का अधिकार बचा नहीं है और इसलिए, मृतक वादी के विधिक उत्तराधिकारियों को न्यायालय के समक्ष अभिलेख पर लाया जाना चाहिए जो उपर्युक्त वादों में आगे कार्यवाही कर सकें । न्यायालय की यह सुविचारित राय है कि न्यायालय यह जांच नहीं कर सकता है कि क्या मृतक वादी के प्रतिनिधियों के रूप में संयोजित हुए बिना उन्हें वाद करने का अधिकार बचा है या नहीं और इसलिए, इस प्रकार अभिवाचित करने के लिए आवेदनों को यह अवधारित किए बिना नामंजूर नहीं किया जा सकता है कि वाद करने का अधिकार बचा है या नहीं और उस सीमित प्रयोजन के लिए भी मृतक वादी के विधिक प्रतिनिधियों का संयोजन आवश्यक है । वर्तमान मामले में, इस बारे में कोई विवाद नहीं है कि प्रत्यर्थियों के बीच में से कौन विधिक प्रतिनिधि है । इसलिए, संहिता, 1908 के आदेश 22 के नियम 5 के साथ पठित नियम 10 के अधीन इजाजत मंजूर करने के प्रक्रम पर विस्तारपूर्वक जांच अपेक्षित नहीं है और इस प्रकार, विल की वैधता या अन्यथा का प्रश्न, प्रश्नगत है और इसलिए, हित के न्यागमन के बारे में कार्यवाहियों की अंतिम सुनवाई के समय विचार किया जा सकता है । सारांश में, प्रश्न

जिसे न्यायालय को अग्रेषित किया जाना अपेक्षित है, यह है कि क्या प्रत्यर्थियों के प्रवर्तनीय अधिकार प्रभावित होते हैं, यदि उन्हें संयोजित नहीं किया जाता है । प्रश्नगत विल की अन्तर्वस्तुओं के प्रकाश में, इस न्यायालय के विवेक में, इस बारे में कोई संहेद नहीं रह जाता है कि मृतक वादी, वसीयतदार था और उसने वाद संपत्तियों में 1/3 हिस्से का पूर्ण वसीयत किया था और इसलिए, वह उन संपत्तियों के स्वामी के रूप में और उक्त विल के अधीन वसीयतदार की हैसियत में उन वादों को फाइल कर सकता है ।

10. अब, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री मिहिर ठाकरे द्वारा उद्भूत इस प्रभाव की दलील पर विचार करते हैं कि विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने सकारण आदेश पारित नहीं किया है और इस न्यायालय के समक्ष उद्भूत सभी दलीलों पर विचार नहीं किया है जिन्हें मौखिक रूप से विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष भी उद्भूत किया गया था और इसमें के प्रत्यर्थियों द्वारा प्रस्तुत आवेदनों के उत्तर में भी उद्भूत किया गया था । यह सत्य है कि विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष उसके उत्तर में याची द्वारा उद्भूत विनिर्दिष्ट दलीलों पर विचार नहीं किया है । इस प्राथिति को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय, अभिवाचित करने के लिए प्रत्यर्थियों द्वारा प्रस्तुत आवेदनों की पुनः सुनवाई/नए सिरे से सुनवाई करने के लिए विद्वान् विचारण न्यायालय के पास मामले को पुनः वापस भेज सकता है । ऐसा करने के बजाय और जब न्यायालय इस पहलू पर विस्तारपूर्वक विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल की सुनवाई करता है तो प्रश्नगत आवेदनों की पुनः सुनवाई/नए सिरे से सुनवाई करने के लिए विद्वान् विचारण न्यायाधीश के पास मामले को वापस भेजना व्यर्थ का परिश्रम होगा और इसलिए, यह न्यायालय अपने पर्यवेक्षणात्मक अधिकारिता में, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री मिहिर ठाकरे द्वारा उद्भूत विभिन्न दलीलों को ध्यान में रखते हुए, प्रश्नगत आवेदनों को विनिश्चित करना ठीक समझता है तो मामले में और विलम्ब से बचने के लिए क्योंकि विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री सोपारकर ने उपर्युक्त वादों में प्रत्यर्थियों के असंयोजन के लिए शिकायत की है, तृतीय पक्षकार ने वाद परिसरों पर बड़े पैमाने पर निर्माण आरम्भ कर दिया है और इसलिए, यह संभाव्य है कि अप्रतिरोध्य प्राथिति उद्भूत हो सकती है । इसलिए, इस न्यायालय ने आवेदनों के गुणागुणों पर क्रमशः पक्षकारों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल की सुनवाई की है और अंत में यह

निष्कर्ष निकाला है कि वर्तमान प्रत्यर्थियों द्वारा प्रस्तुत प्रश्नगत आवेदन स्वीकार किए जाने योग्य हैं और इसलिए, इसमें उपर्युक्त अभिलिखित कारणों से वर्तमान याचिकाएं गुणागुण रहित हैं और संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन इस न्यायालय का हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है ।

11. तथापि, यह न्यायालय विल की वैधता और असलियत का प्रश्न खुला रखता है जिसमें यह प्रश्न भी सम्मिलित है कि क्या 2000 की प्रोबेट आवेदन संख्या 74 के अधीन कार्यवाहियों में प्राप्त उत्तराधिकार प्रमाणपत्र एक कब्जा प्रमाणपत्र या प्रोबेट कार्यवाहियां हैं क्योंकि उक्त विवाद्यक पर कोई भी निष्कर्ष याची द्वारा 2000 की उक्त प्रोबेट आवेदन सं. 74 में न्यायालय द्वारा जारी प्रमाणपत्र का प्रतिसंहरण करने के लिए उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 263 के अधीन प्रस्तुत 2008 की सिविल याचिका सं. 161 को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर सकता है ।

12. वर्तमान याचिकाओं में, अभिलेखों से यथाउद्भूत विधिक प्रास्थिति को ध्यान में रखते हुए, गुणागुण रहित होने के नाते दोनों विधि और तथ्यों पर यह याचिकाएं खारिज किए जाने योग्य हैं और तद्नुसार, इन्हें खर्चों का आदेश किए बिना खारिज किया जाता है । नियम उन्मोचित किए जाते हैं । परिणामतः, वर्तमान याचिकाओं में पारित आदेश, क्रमशः सिविल आवेदनों में शेष नहीं रहते हैं और इनका भी निपटारा किया जाता है ।

आगे आदेश

आज का निर्णय उद्घोषित करने के पश्चात्, याची के विद्वान् अधिवक्ता श्री एस. एम. ठाकरे ने इस न्यायालय के समक्ष 6 सप्ताह की अतिरिक्त अवधि के लिए अन्तरिम अनुतोष बढ़ाने का निवेदन किया है ताकि वे माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील फाइल कर सकें ।

मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए, तद्द्वारा पूर्ववर्ती मंजूर अंतरिम अनुतोष को आज से 4 सप्ताह की अवधि तक बढ़ाया जाता है, इस विनिर्दिष्ट निर्देश के साथ कि किसी भी आधार पर और किसी भी अवधि का विस्तार मंजूर नहीं किया जाएगा ।

याचिकाएं खारिज की गईं ।

क.

दिलीप कुमार रे और एक अन्य

बनाम

श्रीमती गीता रे और अन्य

तारीख 25 अप्रैल, 2016

न्यायमूर्ति मनोजीत भूयन

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 227 [सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 12 का नियम 6, आदेश 7 का नियम 7 और 8 तथा साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 58] – सह-स्वामियों में एक स्वामी द्वारा संयुक्त संपत्ति में से एक भाग को किराए पर देना – किराएदार द्वारा सम्पूर्ण किराया उसी स्वामी को संदत्त किया जाना – अन्य सह-स्वामियों द्वारा अपने हिस्से के किराए की मांग करते हुए दावा करना – दावा मंजूर होना – यदि अभिलेख पर यह साबित हो जाता है कि सह-स्वामियों में से एक स्वामी जिसने स्वयं सह-स्वामी होना स्वीकार किया है, ने संयुक्त संपत्ति के एक भाग को किराए पर दिया है और उसके विभिन्न अन्य सह-स्वामियों से सहमति नहीं प्राप्त की है और उस भाग से अर्जित सम्पूर्ण किराया स्वयं ही ले लेता है तो उसे प्रत्येक सह-स्वामियों को सम्पत्ति में उनके हिस्से के अनुपात में उस किराए में से संदत्त करना होगा ।

वर्तमान मामले में, 1998 की धन वाद सं. 1 को आधारभूत तौर पर, तारीख 1 मार्च, 1995 से 31 जनवरी, 1998 की अवधि तक मासिक किराए की धनराशि 14,000/- रुपए में से 2/3 हिस्से का दावा करते हुए, प्रत्यर्थियों/वादियों द्वारा संस्थित किया गया था, जिसे याची सं. 1 ने अपने किराएदार अर्थात् याची सं. 2 से एकत्रित किया था । वादपत्र में अभिवाचित तात्विक तथ्य यह हैं कि प्रत्यर्थी/वादी, इसमें के याची सं. 1 के साथ ढुबरी सर्किल, जिला ढुबरी के अधीन ढुबरी शहर में स्थित डैग सं. 67, पट्टा संख्या 184 में सम्मिलित भूमि और गृहों के संबंध में सह-हिस्सेदार हैं । उक्त संपत्ति उनमें उत्तराधिकार के अधिकार द्वारा न्यागत हुई थी । प्रत्यर्थियों/वादियों के अनुसार, वे उक्त संपत्ति का 2/3 हिस्सा पाने के हकदार हैं जबकि प्रोफार्मा प्रतिवादियों के साथ प्रतिवादी सं. 1 उक्त संपत्ति के मात्र 1/3 हिस्से के ही हकदार हैं । उक्त संपत्ति के भीतर भवन के दो कमरों के संबंध में विवाद्यक उद्भूत हुए थे जो याची सं. 2/प्रतिवादी सं. 2

के अधिभोग में वर्ष 1986 से किराएदार के रूप में है जिसका किराया अनन्य रूप से याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 द्वारा एकत्रित किया जाता था । प्रत्यर्थियों/वादियों के अनुसार, किराए पर दिए गए कमरों का मासिक किराया 600/- रुपए प्रतिमाह था और चूंकि वे उक्त रकम का 2/3 हिस्सा पाने के हकदार हैं । इस प्रकार, उनका 400/- रुपए प्रतिमाह की दर से किराए के रूप में बकाया है । दावा, पूर्ववर्ती अवधि का किराया छोड़ने के बाद जो कि समय वर्जित था तारीख 1 मार्च, 1995 से तारीख 31 जनवरी, 1998 की अवधि तक की बकाया किराया 14,000/- रुपए बनता है । याची सं. 2/प्रतिवादी सं. 2 द्वारा फाइल लिखित कथन में, यह अभिवाचित किया गया था कि डा. एस. आर. राय के परिसरों, जिसके अधीन किराएदारी सृजित की गई थी, किराया याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 को मकान-मालिक की हैसियत में संदत्त किया गया था । दिलीप कुमार राय अर्थात् याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 फाइल लिखित कथन में यह कथन किया गया है कि प्रश्नगत भूमि, वादियों और प्रतिवादियों के पूर्वाधिकारियों के नाम में अभिलिखित की गई थी । तथापि, डैग सं. 67 में स्थित भूमि और गृह डा. एस. आर. राय के कब्जे में थी और उनकी मृत्यु के पश्चात् उक्त संपत्ति दिलीप कुमार राय और डा. एस. आर. राय के अन्य उत्तराधिकारियों के कब्जे में आ गई थीं । वादियों के स्वामित्व को भूमि के ऊपर होने से इनकार करते हुए, यह कथन किया गया है कि वादी किराए पर दिए गए परिसरों से कोई भी किराया पाने के हकदार नहीं हैं । उक्त धन वाद में, निर्णय और डिक्री तारीख 13 जून, 2005 को पारित किया गया था । विचारण न्यायालय ने वाद विनिश्चित करते समय, कम-से-कम 8 विवाद्यक विरचित किए थे, जो इस प्रकार थे – "(1) क्या वाद को इसके वर्तमान प्ररूप में कायम रखा जा सकता है ? (2) क्या वाद के लिए कोई वाद हेतुक है ? (3) क्या वादी किराए के 2/3 हिस्से के हकदार हैं ? (4) क्या वाद, विबंधन, त्यजन और उपमति के सिद्धांतों द्वारा वर्जित है ? (5) क्या वाद पक्षकारों के असंयोजन के कारण दूषित है ? (6) क्या वादी डिक्री पाने के हकदार हैं, जैसी कि प्रार्थना की गई है ? (7) क्या कोई अनुतोष दिया जा सकता है, यदि वादी ऐसे किसी अनुतोष को पाने के लिए हकदार पाए जाते हैं ? (8) क्या संपत्ति, जिसमें किराए पर दिए गए कमरे स्थित हैं, अनन्य तौर पर प्रतिवादी सं. 1 के पिता डा. एस. आर. राय की हैं ?" दोनों ओर से क्रमशः एक साक्षी की परीक्षा की गई थी । विवाद्यक सं. 8 को सर्वप्रथम विचार के लिए लिया गया और याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 के अभिसाक्ष्य के साथ ही जमाबंदी प्रदर्श 4 पर विचार

करते हुए, विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि प्रश्नगत संपत्ति, अनन्य तौर पर डा. एस. आर. राय अर्थात् याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 के पिता द्वारा धारित नहीं थी । जहां तक विवाद्यक सं. 1 का संबंध है, विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि याची सं. 2/प्रतिवादी सं. 2 के विरुद्ध किराए के लिए वाद कायम रखे जाने योग्य नहीं है, क्योंकि उक्त प्रतिवादी द्वारा मकान-मालिक को किराए का संदाय किया जा रहा था, इसलिए उसे व्यतिक्रमी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है । उक्त विवाद्यक सं. 1 का उत्तर नकारात्मक और प्रत्यर्थियों/वादियों के विरुद्ध दिया गया था । विवाद्यक सं. 1 पर निकाले गए निष्कर्ष और विनिश्चय को ध्यान में रखते हुए, विवाद्यक सं. 3 का भी उत्तर नकारात्मक दिया गया था, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि प्रत्यर्थी/वादी, किराए में से 2/3 हिस्से पाने के हकदार नहीं हैं । प्राथमिक तौर पर, विवाद्यक सं. 1 पर निकाले गए निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए, प्रत्यर्थियों/वादियों को कोई अनुतोष मंजूर नहीं करते हुए, धन वाद खारिज कर दिया गया था । तद्नुसार, डिक्री तैयार की गई थी । विचारण न्यायालय के उक्त निर्णय और डिक्री के विरुद्ध 2005 की धन अपील सं. 2 फाइल की गई थी । अपील न्यायालय ने माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय, जिसका अवलंब याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 द्वारा अपनी प्रतिपरीक्षा में स्वीकृति करते समय, इस प्रभाव का लिया गया था कि याची सं. 2/प्रतिवादी सं. 2 दोनों वादियों और प्रतिवादी सं. 1 के किराएदार हैं और प्रत्यर्थी/वादी वाद संपत्ति के 2/3 हिस्से के स्वामी हैं, को विभेद करते हुए, वर्तमान मामले में लागू नहीं किया । इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 के साक्ष्य को खारिज नहीं किया था, इस प्रकार यह अभिनिर्धारित किया गया कि विवाद्यक सं. 3 का विनिश्चय करते समय त्रुटिपूर्ण निष्कर्ष निकाला गया था । अपील न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि एक सह-स्वामी किराएदार से किराए के अपने हिस्से की वसूली कर सकता है और वर्तमान मामले में, दिलीप कुमार राय अर्थात् प्रतिवादी सं. 1 ने स्वयं अपनी प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया था कि प्रतिवादी सं. 2/याची सं. 2, वादियों और प्रतिवादी सं. 1 दोनों के किराएदार हैं और यह भी कि वादी स्वयं द्वारा दावाकृत बकाया किराया पाने के हकदार हैं, तद्नुसार, अपील न्यायालय का यह मत था कि विवाद्यक सं. 6 और 7 वादियों के पक्ष में विनिश्चित किया जाना चाहिए था । अपील मंजूर कर ली गई थी और तद्नुसार, विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री को अपास्त कर दिया

गया था । अपील न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को आक्षेपित करते हुए, वर्तमान पुनरीक्षण याचिका फाइल की गई । न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – विनिश्चय के लिए, विवाद्यक यह है कि क्या प्रत्यर्थी/वादी मासिक किराया के 2/3 हिस्से के बराबर बकाया किराया 14,000/- रुपए की रकम पाने के हकदार हैं या नहीं, जिन्हें अनन्य तौर पर याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 द्वारा एकत्रित किया गया था । प्रदर्श 4 जो जमाबंदी है, में वादियों और प्रतिवादियों, दोनों के पूर्वाधिकारियों के नाम प्रश्नगत संपत्ति डैग सं. 67 के सह-स्वामियों के रूप में अभिलिखित है । प्रदर्श 5, अतिरिक्त उपायुक्त, ढुबरी द्वारा एम. ए. संख्या 1/96-97 में पारित तारीख 26 नवम्बर, 1996 का आदेश, जिसके द्वारा डैग सं. 67 में माप 1 कट्ठा 8 लेचस भूमि, वादियों और प्रतिवादियों दोनों के पूर्वाधिकारियों के नाम में अभिनिर्धारित किया गया था । उक्त आदेश द्वारा सर्किल अधिकारी, ढुबरी द्वारा पारित तारीख 6 जून, 1996 के एक अन्य आदेश में हस्तक्षेप किया गया था जिसके द्वारा स्वर्गीय सत्य रंजन राय के उत्तराधिकारियों, जिनमें याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 सम्मिलित थे, के पक्ष में सम्पूर्ण भूमि का नामांतरण मंजूर किया गया था । वाद में दावा मात्र पट्टाधृत परिसरों के मासिक किराए में 2/3 हिस्से के संबंध में है । इस पहलू पर याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 के साक्ष्य अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं । प्रतिपरीक्षा में याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 के साक्ष्य का बेहतर मूल्यांकन करने के लिए इसे नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है – "वाद संपत्तियों के संबंध में, हमारे बीच में कोई विभाजन नहीं हुआ है । प्रदर्श 4 पट्टा सं. 184 (नया) का जमाबंदी हैं जो श्रीमती स्वर्ण लता राय और अन्य सह-स्वामियों के संयुक्त नाम में हैं । मेरे पिता का नाम सत्य रंजन राय है । मेरे चाचा शारदा नन्दन राय हैं । स्वर्ण लता राय हमारी दादी थीं । मैंने, अपने पिता के हिस्से का दावा किया है । तथ्य यह नहीं है कि वादी, वाद संपत्ति में 2/3 हिस्सा पाने के हकदार नहीं हैं । प्रतिवादी सं. 2 ने एक कमरा किराए पर लिया है । एक अन्य कमरा भी है । वाद कमरे का किराया 750/800/- रुपए है । मैं, अकेले ही मासिक किराए का उद्ग्रहण करता हूं । वादी ने किराए का एक भाग देने के लिए मुझसे निवेदन किया किन्तु मैंने इनकार कर दिया । मैंने, सुना है कि मेरे पिता ने वाद संपत्ति क्रय की थी और मैंने उस प्रभाव का कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया है । मैंने, यह दर्शित करने के लिए कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया है कि मेरे पिता ने वाद गृह का निर्माण किया

था । निर्माण, वर्ष 1951 में हुआ था । मेरे पिता ने मुझे यह बताया है कि उसने निर्माण किया था । मुझे कोई दस्तावेज प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं है । तथ्य यह नहीं है कि वाद गृह, दोनों पक्षकारों के पूर्वाधिकारियों के संयुक्त निधि से निर्मित हुआ था । वृद्ध होने के नाते वर्तमान में ज्योत्सना राय नहीं आ सकी थीं । किन्तु, वह आई थी किन्तु, मैं विस्तारपूर्वक नहीं कह सकता हूं । मैंने, सगत राय को वाद संपत्ति की देखभाल करते हुए नहीं देखा है । वादी, संयुक्त संपत्ति के एक भाग में हैं । तथ्य यह नहीं है कि मैं वादी संपत्ति के अनन्य कब्जे में नहीं हूं । तथ्य यह नहीं है कि प्रतिवादी सं. 2, वादियों और प्रतिवादी सं. 1 का किराएदार नहीं है । तथ्य यह नहीं है कि वादी, हमारे साथ संयुक्त रूप से शौचालय, स्नानघर और मूत्रालय का प्रयोग कर रहे हैं । तथ्य यह नहीं है कि मैं अकेले किराया एकत्र करने का हकदार नहीं हूं । तथ्य यह नहीं है कि वादी डिक्री पाने के हकदार हैं ।" याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 के उपर्युक्त साक्ष्य से यह स्पष्ट होता है कि प्रश्नगत संपत्ति एक संयुक्त संपत्ति है और प्रत्यर्थी/वादी उसके 2/3 हिस्से के हकदार हैं । इस प्रभाव की भी स्वीकृति की गई है कि याची सं. 2/प्रतिवादी सं. 2 भी दोनों वादियों और प्रतिवादी सं. 1 के किराएदार हैं । प्रत्यर्थियों/वादियों का पक्षकथन यह है कि उनके एकांकी कृत द्वारा किराएदारी समाप्त नहीं की जा सकती है । वाद संपत्ति में 2/3 हिस्से को ध्यान में रखते हुए वह किराए के उस भाग का हकदार था जिसे याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 द्वारा स्वयं स्वीकार किया है । मामले के इस पहलू को ध्यान में रखते हुए, भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 58 लागू होती है । संपत्ति में 2/3 हिस्से तक वादियों के हक के बारे में जिसे याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 की स्वीकृति ही प्रत्यर्थियों/वादियों को अनुतोष मंजूर करने के लिए पर्याप्त है और इसके लिए और सबूत अपेक्षित नहीं हैं । यद्यपि ऐसी स्वीकृति को अनन्य सबूत के रूप में प्रवर्तित नहीं की जा सकती है किन्तु, इसे कम-से-कम इस प्रकार की गई स्वीकृति से मुकरने से याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 के विरुद्ध विबंधन के रूप में प्रवर्तित किया जा सकता है । प्रतिपरीक्षा में जिसे याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 का साक्ष्य महत्वपूर्ण साक्ष्य का एक भाग था जिस पर, विचारण न्यायालय द्वारा विचार करने से पूर्णतया इनकार कर दिया गया था । मामले के इस पहलू पर, अपील न्यायालय द्वारा सही ही निर्वचन करते हुए, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि प्रत्यर्थी/वादी, वाद संपत्ति के 2/3 हिस्से के स्वामी हैं और वे किराएदार से किराए में अपने हिस्से की वसूली करने के हकदार हैं ।

अपील न्यायालय ने सही ही यह निष्कर्ष निकाला है कि विचारण न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करना चाहिए था कि प्रत्यर्थी/वादी उन बकाया किरायों को पाने के हकदार हैं जैसा कि उन्होंने दावा किया है और विवाद्यक सं. 6 को प्रत्यर्थियों/वादियों के पक्ष में विनिश्चित किया जाना चाहिए था । याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 से बकाया किराए के रूप में 14,000/- रुपए उद्गृहीत करने के लिए आदेश, पट्टाधृत परिसरों के मासिक किराए के 2/3 हिस्से के बराबर है, के बारे में, यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है कि विद्वान् अपील न्यायालय ने धन वाद में इस प्रभाव की कोई सुनिश्चित प्रार्थना न होते हुए भी मासिक किराए के 2/3 हिस्से का स्वामित्व घोषित करते हुए अपनी अधिकारिता के बाहर कार्य किया था । अपील न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री में कोई गलती नहीं पाई जा सकती है, सुस्पष्टतः, इस कारण से कि प्रत्यर्थियों/वादियों का हक एक तथ्य है जिसे स्वयं याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 द्वारा सम्यक् रूप से स्वीकार किया गया था । इस स्वीकृति को याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 के विरुद्ध विबंधन के रूप में प्रवर्तित किया जा सकता है और उसे इसके लिए मुकरने नहीं दिया जा सकता है । (पैरा 10, 11, 12 और 13)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2014]	(2014) 2 एस. सी. सी. 269 = ए. आई. आर. 2014 एस. सी. 937 : **भारत संघ और अन्य** बनाम **वसावी को-आपरेटिव हाउसिंग सोसाइटी लिमिटेड** ;	7
[2012]	(2012) 8 एस. सी. सी. 148 = 2013 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 2752 : **भारत संघ** बनाम **इब्राहिम उद्दीन और एक अन्य** ;	8
[2008]	(2008) 7 एस. सी. सी. 85 = ए. आई. आर. 2009 एस. सी. (सप्ली.) 636 : **गौतम सरूप** बनाम **लीला जेटली और अन्य** ;	8
[2006]	(2006) 1 एस. सी. सी. 125 = ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 362 : **मैसर्स कर्ता राम रामेश्वर दास** बनाम **रामविलास और अन्य** ;	7

[2003] (2003) 6 एस. सी. सी. 675 = ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 3044 : **सूर्य देव राय** बनाम **राम चन्दर राय और अन्य** ; 7

[1997] ए. आई. आर. 1997 एस. सी. 998 : **एस. के. सत्तार मोहम्मद चौधरी** बनाम **गुड़प्पा अम्बादास बुकाटे** । 5

पुनरीक्षण (सिविल) अधिकारिता : 2007 की सिविल पुनरीक्षण याचिका सं. 230.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन पुनरीक्षण याचिका ।

याचियों की ओर से श्री ए. डी. चौधरी, विद्वान् काउंसेल

प्रत्यर्थी की ओर से श्री एस. के. घोष, विद्वान् काउंसेल

न्यायमूर्ति मनोजीत भूयन – संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन यह पुनरीक्षण याचिका, विद्वान् सिविल न्यायाधीश, ज्येष्ठ खंड, ढुबरी द्वारा 2005 की धन अपील सं. 2 में पारित तारीख 21 मार्च, 2007 के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध निदेशित है, जिसके द्वारा उन्होंने प्रत्यर्थियों/वादियों द्वारा प्रस्तुत अपील को मंजूर कर लिया था और विद्वान् सिविल न्यायाधीश, कनिष्ठ खंड सं. 1, ढुबरी द्वारा 1998 की धन वाद सं. 1 में पारित तारीख 13 जून, 2005 के निर्णय और डिक्री को उलट दिया था । मूल वाद की विषय-वस्तु और सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 102 द्वारा लगाए गए निषेध को ध्यान में रखते हुए, संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन इस न्यायालय की पर्यवेक्षणात्मक अधिकारिता का अवलंब लिया गया है ।

2. 1998 की धन वाद सं. 1 को आधारभूत तौर पर, तारीख 1 मार्च, 1995 से 31 जनवरी, 1998 की अवधि तक मासिक किराए की धनराशि 14,000/- रुपए में से 2/3 हिस्से का दावा करते हुए, प्रत्यर्थियों/वादियों द्वारा संस्थित किया गया था, जिसे याची सं. 1 ने अपने किराएदार अर्थात् याची सं. 2 से एकत्रित किया था । वादपत्र में अभिवाचित तात्विक तथ्य यह है कि प्रत्यर्थी/वादी, इसमें के याची सं. 1 के साथ ढुबरी सर्किल, जिला ढुबरी के अधीन ढुबरी शहर में स्थित डैग सं. 67, पट्टा संख्या 184 में सम्मिलित भूमि और गृहों के संबंध में सह-हिस्सेदार हैं । उक्त संपत्ति

उनमें उत्तराधिकार के अधिकार द्वारा न्यागत हुई थी । प्रत्यर्थियों/वादियों के अनुसार, वे उक्त संपत्ति का 2/3 हिस्सा पाने के हकदार हैं जबकि प्रोफार्मा प्रतिवादियों के साथ प्रतिवादी सं. 1 उक्त संपत्ति के मात्र 1/3 हिस्से के ही हकदार हैं । उक्त संपत्ति के भीतर भवन के दो कमरों के संबंध में विवाद्यक उद्भूत हुए थे जो याची सं. 2/प्रतिवादी सं. 2 के अधिभोग में वर्ष 1986 से किराएदार के रूप में है जिसका किराया अनन्य रूप से याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 द्वारा एकत्रित किया जाता था । प्रत्यर्थियों/वादियों के अनुसार, किराए पर दिए गए कमरों का मासिक किराया 600/- रुपए प्रतिमाह था और चूंकि वे उक्त रकम का 2/3 हिस्सा पाने के हकदार हैं । इस प्रकार, उनका 400/- रुपए प्रतिमाह की दर से किराए के रूप में बकाया है । दावा, पूर्ववर्ती अवधि का किराया छोड़ने के बाद जो कि समय वर्जित था तारीख 1 मार्च, 1995 से तारीख 31 जनवरी, 1998 की अवधि तक की बकाया किराया 14,000/- रुपए बनता है ।

3. याची सं. 2/प्रतिवादी सं. 2 द्वारा फाइल लिखित कथन में, यह अभिवाचित किया गया था कि डा. एस. आर. राय के परिसरों, जिसके अधीन किराएदारी सृजित की गई थी, किराया याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 को मकान-मालिक की हैसियत में संदत्त किया गया था । दिलीप कुमार राय अर्थात् याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 फाइल लिखित कथन में यह कथन किया गया है कि प्रश्नगत भूमि, वादियों और प्रतिवादियों के पूर्वाधिकारियों के नाम में अभिलिखित की गई थी । तथापि, डैग सं. 67 में स्थित भूमि और गृह डा. एस. आर. राय के कब्जे में थी और उनकी मृत्यु के पश्चात् उक्त संपत्ति दिलीप कुमार राय और डा. एस. आर. राय के अन्य उत्तराधिकारियों के कब्जे में आ गई थीं । वादियों के स्वामित्व को भूमि के ऊपर होने से इनकार करते हुए, यह कथन किया गया है कि वादी किराए पर दिए गए परिसरों से कोई भी किराया पाने के हकदार नहीं हैं ।

4. उक्त धन वाद में, निर्णय और डिक्री तारीख 13 जून, 2005 को पारित किया गया था । विचारण न्यायालय ने वाद विनिश्चित करते समय, कम-से-कम 8 विवाद्यक विरचित किए थे, जो इस प्रकार थे :–

"(1) क्या वाद को इसके वर्तमान प्ररूप में कायम रखा जा सकता है ?

(2) क्या वाद के लिए कोई वाद हेतुक है ?

(3) क्या वादी किराए के 2/3 हिस्से के हकदार हैं ?

(4) क्या वाद, विबंधन, त्यजन और उपमति के सिद्धांतों द्वारा वर्जित है ?

(5) क्या वाद पक्षकारों के असंयोजन के कारण दूषित है ?

(6) क्या वादी डिक्री पाने के हकदार हैं, जैसी कि प्रार्थना की गई है ?

(7) क्या कोई अनुतोष दिया जा सकता है, यदि वादी ऐसे किसी अनुतोष को पाने के लिए हकदार पाए जाते हैं ?

अतिरिक्त विवाद्यक

(8) क्या संपत्ति, जिसमें किराए पर दिए गए कमरे स्थित हैं, अनन्य तौर पर प्रतिवादी सं. 1 के पिता डा. एस. आर. राय की हैं ?"

दोनों ओर से क्रमशः एक साक्षी की परीक्षा की गई थी ।

5. विवाद्यक सं. 8 को सर्वप्रथम विचार के लिए लिया गया और याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 के अभिसाक्ष्य के साथ ही जमाबंदी प्रदर्श 4 पर विचार करते हुए, विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि प्रश्नगत संपत्ति, अनन्य तौर पर डा. एस. आर. राय अर्थात् याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 के पिता द्वारा धारित नहीं थी । जहां तक विवाद्यक सं. 1 का संबंध है, विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि याची सं. 2/ प्रतिवादी सं. 2 के विरुद्ध किराए के लिए वाद कायम रखे जाने योग्य नहीं है, क्योंकि उक्त प्रतिवादी द्वारा मकान-मालिक को किराए का संदाय किया जा रहा था, इसलिए उसे व्यतिक्रमी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है । अतिरिक्त तौर पर, **एस. के. सत्तार मोहम्मद चौधरी** बनाम **गुड़प्पा अम्बादास बुकाटे**[1] वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय को ध्यान में रखा जा सकता है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि सह-हिस्सेदार, किराए पर दिए गए आवास के एक भाग से किराएदार की बेदखली के लिए वाद आरम्भ नहीं कर सकता है न ही भूमि में के अपने भाग के लिए वाद कर सकता है और किराएदारी, या तो संपदा

[1] ए. आई. आर. 1997 एस. सी. 998.

में या सह-स्वामियों में से एक के एकांकी कृत्यों द्वारा किराए में विभाजित नहीं की जा सकती है, उक्त विवाद्यक सं. 1 का उत्तर नकारात्मक और प्रत्यर्थियों/वादियों के विरुद्ध दिया गया था । विवाद्यक सं. 1 पर निकाले गए निष्कर्ष और विनिश्चय को ध्यान में रखते हुए, विवाद्यक सं. 3 का भी उत्तर नकारात्मक दिया गया था, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि प्रत्यर्थी/वादी, किराए में से 2/3 हिस्से पाने के हकदार नहीं हैं । प्राथमिक तौर पर, विवाद्यक सं. 1 पर निकाले गए निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए, प्रत्यर्थियों/वादियों को कोई अनुतोष मंजूर नहीं करते हुए, धन वाद खारिज कर दिया गया था । तद्नुसार, डिक्री तैयार की गई थी ।

6. विचारण न्यायालय के उक्त निर्णय और डिक्री के विरुद्ध 2005 की धन अपील सं. 2 फाइल की गई थी । अपील न्यायालय ने माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय, जिसका अवलंब याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 द्वारा अपनी प्रतिपरीक्षा में स्वीकृति करते समय, इस प्रभाव का लिया गया था कि याची सं. 2/प्रतिवादी सं. 2 दोनों वादियों और प्रतिवादी सं. 1 के किराएदार हैं और प्रत्यर्थी/वादी वाद संपत्ति के 2/3 हिस्से के स्वामी हैं, को विभेद करते हुए, वर्तमान मामले में लागू नहीं किया । इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 के साक्ष्य को खारिज नहीं किया था, इस प्रकार यह अभिनिर्धारित किया गया कि विवाद्यक सं. 3 का विनिश्चय करते समय त्रुटिपूर्ण निष्कर्ष निकाला गया था । अपील न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि एक सह-स्वामी किराएदार से किराए के अपने हिस्से की वसूली कर सकता है और वर्तमान मामले में, दिलीप कुमार राय अर्थात् प्रतिवादी सं. 1 ने स्वयं अपनी प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया था कि प्रतिवादी सं. 2/याची सं. 2, वादियों और प्रतिवादी सं. 1 दोनों के किराएदार हैं और यह भी कि वादी स्वयं द्वारा दावाकृत बकाया किराया पाने के हकदार हैं, तद्नुसार, अपील न्यायालय का यह मत था कि विवाद्यक सं. 6 और 7 वादियों के पक्ष में विनिश्चित किया जाना चाहिए था । अपील मंजूर कर ली गई थी और तद्नुसार, विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री को अपास्त कर दिया गया था ।

7. अपील न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को आक्षेपित करते हुए, याचियों के विद्वान् काउंसेल श्री ए. डी. चौधरी ने यह निवेदन किया कि हक, संपत्ति के 2/3 हिस्से तक प्रत्यर्थियों/वादियों के पक्ष में विवक्षित

तौर पर घोषित किया जा चुका है, जबकि वाद मात्र 14,000/- रुपए के बकाया किराए के बारे में है । श्री चौधरी ने यह भी निवेदन किया कि प्रत्यर्थियों/वादियों ने संपत्ति के 2/3 हिस्से पर अपने कोई अधिकार और हित और अथवा मासिक किराए के 2/3 हिस्से के अपने अधिकार और हित को सिद्ध करने के लिए कोई भी साक्ष्य, जो भी हो, प्रस्तुत नहीं किया है । वादियों को ईप्सित अनुतोष मंजूर करने के लिए अपने मामले को स्पष्ट तौर पर कथन करने और सिद्ध करने का भार वादियों के ऊपर था जिनसे वे उन्मोचित नहीं थे, इस प्रकार, प्रतिवादियों द्वारा स्थापित मामले की किसी कमजोरी, यदि कोई हो, का लाभ वादियों को उठाने नहीं दिया जा सकता है । अंत में, श्री चौधरी ने भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 101 और 103 के उपबंधों का अवलंब लिया । उन्होंने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 7 के नियम 7 और 8 का भी अवलंब लेते हुए यह कथन किया कि मासिक किराए के 2/3 हिस्से के लिए दावा पृथक्तः नहीं किया गया था और सुभिन्न तौर पर वाद में दावा किया गया था । इस प्रश्न पर कि अपने मामले को सिद्ध करने का भार हमेशा ही वादियों पर होता है, इस बात के होते हुए भी कि क्या प्रतिवादियों ने अपने मामले को साबित किया है या नहीं, इस संबंध में, **भारत संघ और अन्य** बनाम **वसावी को-आपरेटिव हाउसिंग सोसाइटी लिमिटेड**[1] वाले मामले का भी अवलंब लिया गया । **एस. के. सत्तार मोहम्मद चौधरी** (उपर्युक्त) वाले मामले को निर्दिष्ट करते हुए, यह निवेदन किया कि यद्यपि स्वामियों के पास आपस में किराया विभाजित करने का विकल्प खुला था, तथापि, ऐसा कोई विभाजन नहीं किया गया इसलिए, किराएदार की बाध्यता एकल रह गई थी और ऐसी स्थिति में, पट्टाकर्ता को किराए की मात्र एक भाग की वसूली करने के लिए किराएदारी को समाप्त करना मंजूर नहीं किया जा सकता है । श्री चौधरी ने यह निवेदन किया कि सह-स्वामियों के बीच भूमि के किसी विभाजन के अभाव में और सह-स्वामियों के बीच में किराए के विभाजन के बारे में किसी करार या सहमति के अभाव में, वादियों को सह-स्वामियों के रूप में मासिक किराए के एक भाग की वसूली करने के लिए किराएदारी समाप्त करना मंजूर नहीं किया जा सकता है । दूसरे शब्दों में, यह निवेदन किया गया कि किराएदारी न तो संपदा में समाप्त की जा सकती है अथवा न ही किराएदारी में अथवा न ही सह-स्वामियों में से किसी एक के

---

[1] (2014) 2 एस. सी. सी. 269 = ए. आई. आर. 2014 एस. सी. 937.

एकांकीकृत द्वारा किसी अन्य बाध्यताओं के अधीन समाप्त की जा सकती है । अपवाद यह है कि यदि सभी सह-स्वामी आपस में सहमत होते हैं तथा माप और सीमांकन द्वारा पट्टाधृत संपत्ति का विभाजन करते हैं और उस संपत्ति में सुनिश्चित निश्चायक और शनाख्त योग्य भाग का विभाजन करते हैं तो वे प्रत्येक विभाजित भाग के पृथक्तः वैयक्तिक स्वामी होंगे और उस भाग के बारे में उसके किराएदार के साथ भी वैयक्तिक स्वामी/पट्टाकर्ता के रूप में व्यवहार कर सकते हैं । ऐसी परिस्थिति में, संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 109 में अनुध्यात संयुक्त पट्टाकर्ताओं के अधिकारों को उनमें से प्रत्येक द्वारा पृथक्तः और स्वतंत्र रूप से उपभोग किया जा सकता है । श्री चौधरी के अनुसार, न तो विभाजन द्वारा पट्टाधृत संपत्ति विभाजित की गई थी न ही सह-स्वामियों के बीच विभाजन करने का कोई करार हुआ था । माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि को ध्यान में रखते हुए, श्री चौधरी ने यह निवेदन किया कि प्रत्यर्थियों/वादियों को अपील न्यायालय द्वारा कोई अनुतोष मंजूर नहीं किया जा सकता था । **एस. के. सत्तार मोहम्मद चौधरी** (उपर्युक्त) वाले मामले में अधिकथित निर्णयज विधि का अवलंब, **मैसर्स कर्ता राम रामेश्वर दास** बनाम **रामविलास और अन्य**[1] वाले मामले में भी लिया गया था । संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के क्षेत्र के बारे में अवलंब, **सूर्य देव राय** बनाम **राम चन्दर राय और अन्य**[2] वाले मामले में भी लिया गया था ।

8. प्रत्यर्थियों/वादियों के विद्वान् काउंसेल श्री एस. के. घोष ने यह निवेदन किया कि वादपत्र में प्रार्थना, याचियों/प्रत्यर्थियों से 14,000/- रुपए, जो 1 मार्च, 1995 से 31 जनवरी, 1998 की अवधि के दौरान कमरों का प्रतिमाह किराए के 2/3 हिस्से के बराबर रकम थी, के उद्ग्रहण करने के लिए की गई थी । यह निवेदन किया गया है कि 14,000/- रुपए की अंकित रकम को न्यायोचित ठहराने के लिए तात्विक तथ्यों का वादपत्र में सुस्पष्टतः कथन किया गया है । वादपत्र के पैराग्राफ 8, 12 और 13 के प्रति निर्देश किया गया है, जिसमें यह कथन किया गया है कि किराए पर दिए गए कमरों के 2/3 हिस्से की रकम के लिए दावा 1 मार्च, 1995 से 31 जनवरी, 1998 की अवधि के लिए 400/- रुपए प्रतिमाह की रकम के बराबर है । श्री घोष ने यह भी निवेदन किया कि विवाद्यक सं. 1, जो वाद

---

[1] (2006) 1 एस. सी. सी. 125 = ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 362.

[2] (2003) 6 एस. सी. सी. 675 = ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 3044.

को कायम रखने से संबंधित है, का विचारण न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थियों/वादियों के विरुद्ध अनुचित तौर पर विनिश्चित किया गया है क्योंकि विवाद्यक सं. 1 के संबंध में निष्कर्ष मात्र याची सं. 2/प्रतिवादी सं. 2 के विरुद्ध वाद कायम रखने तक सीमित नहीं था । इसके अतिरिक्त, प्राथमिक विवाद्यक सं. 3 जो किराए के 2/3 हिस्से के वादियों के हक के बारे में था, पर सभी प्रकार से चर्चा नहीं की गई थी और उनका उत्तर भी विवाद्यक सं. 1 पर निष्कर्ष निकालते हुए साधारण तौर पर नकारात्मक दिया गया था । विवाद्यक सं. 8 पर निकाले गए निष्कर्षों और विनिश्चयों के प्रति भी निर्देश किया गया है, यह कथन करते हुए कि विचारण न्यायालय का यह समाधान होते हुए भी कि वाद संपत्ति वादियों और प्रोफार्मा प्रतिवादियों के पूर्वाधिकारियों की संयुक्त संपत्ति थी और यह कि संपत्ति अनन्य तौर पर डा. एस. आर. राय अर्थात् याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 के पिता द्वारा धारित नहीं थी, वाद खारिज कर दिया था । श्री घोष के अनुसार, यह तथ्य कि प्रश्नगत संपत्ति, वादियों और प्रतिवादियों के बीच उत्तराधिकार के अधिकार द्वारा सह-स्वामित्व में थी, प्रदर्श 4 जमाबंदी से साबित होती है । जहां तक वाद संपत्ति के 2/3 हिस्से की प्रत्यर्थियों/वादियों के हकदार होने का संबंध है, श्री घोष ने यह निवेदन किया कि इसे याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 द्वारा अपनी प्रतिपरीक्षा में स्वीकार किया गया है । साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 58 के प्रति निर्देश करते हुए श्री घोष ने यह निवेदन किया कि याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 द्वारा की गई स्वीकृति से बिना किसी अन्य सबूत के ईप्सित अनुतोष मंजूर होने से वादियों का हक साबित होता है । इसके अंत में, **भारत संघ** बनाम **इब्राहिम उद्दीन और एक अन्य**[1] वाले मामले का अवलंब लेते हुए, यह कथन किया कि विचारण के प्रयोजन के लिए स्वीकृति, विशिष्ट तथ्य को साबित करने के साथ त्यक्त किए जा सकते हैं । विचारण के दौरान स्वीकृति न्यायिक स्वीकृति होती है अथवा सबूत के साथ अनुध्यात त्यजन होता है और यद्यपि स्वीकृतियां अनन्य सबूत नहीं हो सकती हैं किन्तु, इसे करने वाले के विरुद्ध विबंधन के रूप में प्रवर्तित किया जा सकता है । इसी अनुक्रम में, **गौतम सरूप** बनाम **लीला जेटली और अन्य**[2] वाले मामले का भी अवलंब लिया गया ।

---

[1] (2012) 8 एस. सी. सी. 148 = 2013 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 2752.
[2] (2008) 7 एस. सी. सी. 85 = ए. आई. आर. 2009 एस. सी. (सप्ली.) 636.

9. अपीली निर्णय और डिक्री को निर्दिष्ट करते हुए, श्री घोष ने यह निवेदन किया कि याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 के साक्ष्यों का इसके सही परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन किया गया था, जिन पर दुर्भाग्यपूर्ण रूप से विचारण कार्यवाहियों के दौरान विचार नहीं किया गया था । इसमें कोई कमी नहीं थी, चाहे जो भी हो, यह निवेदन किया कि अपील न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय और डिक्री में कोई हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है ।

10. मैंने, पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना और अभिलेख पर के सम्पूर्ण सामग्रियों का परिशीलन किया । विनिश्चय के लिए, विवाद्यक यह है कि क्या प्रत्यर्थी/वादी मासिक किराया के 2/3 हिस्से के बराबर बकाया किराया 14,000/- रुपए की रकम पाने के हकदार हैं या नहीं, जिन्हें अनन्य तौर पर याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 द्वारा एकत्रित किया गया था । प्रदर्श 4 जो जमाबंदी है, में वादियों और प्रतिवादियों, दोनों के पूर्वाधिकारियों के नाम प्रश्नगत संपत्ति डैग सं. 67 के सह-स्वामियों के रूप में अभिलिखित है । प्रदर्श 5, अतिरिक्त उपायुक्त, ढुबरी द्वारा एम. ए. संख्या 1/96-97 में पारित तारीख 26 नवम्बर, 1996 का आदेश, जिसके द्वारा डैग सं. 67 में माप 1 कट्ठा 8 लेचस भूमि, वादियों और प्रतिवादियों दोनों के पूर्वाधिकारियों के नाम में अभिनिर्धारित किया गया था । उक्त आदेश द्वारा सर्किल अधिकारी, ढुबरी द्वारा पारित तारीख 6 जून, 1996 के एक अन्य आदेश में हस्तक्षेप किया गया था जिसके द्वारा स्वर्गीय सत्य रंजन राय के उत्तराधिकारियों, जिनमें याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 सम्मिलित थे, के पक्ष में सम्पूर्ण भूमि का नामांतरण मंजूर किया गया था ।

11. वाद में दावा मात्र पट्टाधृत परिसरों के मासिक किराए में 2/3 हिस्से के संबंध में है । इस पहलू पर याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 के साक्ष्य अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं । प्रतिपरीक्षा में याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 के साक्ष्य का बेहतर मूल्यांकन करने के लिए इसे नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है :–

> "वाद संपत्तियों के संबंध में, हमारे बीच में कोई विभाजन नहीं हुआ है ।
>
> प्रदर्श 4 पट्टा सं. 184 (नया) का जमाबंदी हैं जो श्रीमती स्वर्ण लता राय और अन्य सह-स्वामियों के संयुक्त नाम में हैं । मेरे पिता का नाम सत्य रंजन राय है । मेरे चाचा शारदा नन्दन राय हैं । स्वर्ण लता राय हमारी दादी थीं । मैंने, अपने पिता के हिस्से का दावा किया है ।

तथ्य यह नहीं है कि वादी, वाद संपत्ति में 2/3 हिस्सा पाने के हकदार नहीं हैं ।

प्रतिवादी सं. 2 ने एक कमरा किराए पर लिया है । एक अन्य कमरा भी है । वाद कमरे का किराया 750/800/- रुपए है । मैं, अकेले ही मासिक किराए का उद्ग्रहण करता हूं । वादी ने किराए का एक भाग देने के लिए मुझसे निवेदन किया किन्तु मैंने इनकार कर दिया ।

मैंने, सुना है कि मेरे पिता ने वाद संपत्ति क्रय की थी और मैंने उस प्रभाव का कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया है ।

मैंने, यह दर्शित करने के लिए कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया है कि मेरे पिता ने वाद गृह का निर्माण किया था । निर्माण, वर्ष 1951 में हुआ था । मेरे पिता ने मुझे यह बताया है कि उसने निर्माण किया था । मुझे कोई दस्तावेज प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं है ।

तथ्य यह नहीं है कि वाद गृह, दोनों पक्षकारों के पूर्वाधिकारियों के संयुक्त निधि से निर्मित हुआ था । वृद्ध होने के नाते वर्तमान में ज्योत्सना राय नहीं आ सकी थीं । किन्तु, वह आई थीं किन्तु, मैं विस्तारपूर्वक नहीं कह सकता हूं । मैंने, सगत राय को वाद संपत्ति की देखभाल करते हुए नहीं देखा है ।

वादी, संयुक्त संपत्ति के एक भाग में हैं ।

तथ्य यह नहीं है कि मैं वादी संपत्ति के अनन्य कब्जे में नहीं हूं ।

तथ्य यह नहीं है कि प्रतिवादी सं. 2, वादियों और प्रतिवादी सं. 1 का किराएदार नहीं है ।

तथ्य यह नहीं है कि वादी, हमारे साथ संयुक्त रूप से शौचालय, स्नानघर और मूत्रालय का प्रयोग कर रहे हैं ।

तथ्य यह नहीं है कि मैं अकेले किराया एकत्र करने का हकदार नहीं हूं ।

तथ्य यह नहीं है कि वादी डिक्री पाने के हकदार हैं ।"

याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 के उपर्युक्त साक्ष्य से यह स्पष्ट होता है

कि प्रश्नगत संपत्ति एक संयुक्त संपत्ति है और प्रत्यर्थी/वादी उसके 2/3 हिस्से के हकदार हैं । इस प्रभाव की भी स्वीकृति की गई है कि याची सं. 2/प्रतिवादी सं. 2 भी दोनों वादियों और प्रतिवादी सं. 1 के किराएदार हैं ।

12. प्रत्यर्थियों/वादियों का पक्षकथन यह है कि उनके एकांकी कृत द्वारा किराएदारी समाप्त नहीं की जा सकती है । वाद संपत्ति में 2/3 हिस्से को ध्यान में रखते हुए वह किराए के उस भाग का हकदार था जिसे याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 द्वारा स्वयं स्वीकार किया है । मामले के इस पहलू को ध्यान में रखते हुए, भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 58 लागू होती है । संपत्ति में 2/3 हिस्से तक वादियों के हक के बारे में जिसे याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 की स्वीकृति ही प्रत्यर्थियों/वादियों को अनुतोष मंजूर करने के लिए पर्याप्त है और इसके लिए और सबूत अपेक्षित नहीं हैं । यद्यपि ऐसी स्वीकृति अनन्य सबूत के रूप में प्रवर्तित नहीं की जा सकती है किन्तु, इसे कम-से-कम इस प्रकार की गई स्वीकृति से मुकरने से याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 के विरुद्ध विबंधन के रूप में प्रवर्तित किया जा सकता है । प्रतिपरीक्षा में जिसे याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 का साक्ष्य महत्वपूर्ण साक्ष्य का एक भाग था जिस पर, विचारण न्यायालय द्वारा विचार करने से पूर्णतया इनकार कर दिया गया था । मामले के इस पहलू पर, अपील न्यायालय द्वारा सही ही निर्वचन करते हुए, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि प्रत्यर्थी/वादी, वाद संपत्ति के 2/3 हिस्से के स्वामी हैं और वे किराएदार से किराए में अपने हिस्से की वसूली करने के हकदार हैं । अपील न्यायालय ने सही ही यह निष्कर्ष निकाला है कि विचारण न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करना चाहिए था कि प्रत्यर्थी/वादी उन बकाया किरायों को पाने के हकदार हैं जैसा कि उन्होंने दावा किया है और विवाद्यक सं. 6 को प्रत्यर्थियों/वादियों के पक्ष में विनिश्चित किया जाना चाहिए था ।

13. याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 से बकाया किराए के रूप में 14,000/- रुपए उद्गृहीत करने के लिए आदेश, पट्टाधृत परिसरों के मासिक किराए के 2/3 हिस्से के बराबर है, के बारे में, यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है कि विद्वान् अपील न्यायालय ने धन वाद में इस प्रभाव की कोई सुनिश्चित प्रार्थना न होते हुए भी मासिक किराए के 2/3 हिस्से का

स्वामित्व घोषित करते हुए अपनी अधिकारिता के बाहर कार्य किया था । अपील न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री में कोई गलती नहीं पाई जा सकती है, सुस्पष्टतः, इस कारण से कि प्रत्यर्थियों/वादियों का हक एक तथ्य है जिसे स्वयं याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 द्वारा सम्यक् रूप से स्वीकार किया गया था । इस स्वीकृति को याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 के विरुद्ध विबंधन के रूप में प्रवर्तित किया जा सकता है और उसे इसके लिए मुकरने नहीं दिया जा सकता है ।

14. जहां तक श्री चौधरी के इस निवेदन का संबंध है कि अपील न्यायालय, धन वाद में विवक्षित तौर पर हक घोषित नहीं कर सकता था, में स्वयं याची सं. 1/प्रतिवादी सं. 1 द्वारा वाद संपत्ति के 2/3 हिस्से तक प्रत्यर्थियों/वादियों के हक के बारे में स्वीकृति से ही कोई आधार नहीं रह जाता है ।

15. उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए, वर्तमान याचिका, गुणागुण रहित है, तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है । तद्नुसार, विद्वान् सिविल न्यायाधीश, ज्येष्ठ खंड, ढुबरी द्वारा 2005 की धन अपील सं. 2 में पारित तारीख 21 मार्च, 2007 के निर्णय और डिक्री को कायम रखा जाता है । मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, खर्चे का कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

याचिका खारिज की जाती है । रजिस्ट्री द्वारा अभिलेखों को तुरन्त निचले न्यायालय को भेजा जाए ।

पुनरीक्षण याचिका खारिज की गई ।

क.

कमल चंद

बनाम

गंगाराम

तारीख 2 फरवरी, 2016

न्यायमूर्ति विनीत कोठारी

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 96 [सपठित संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53क] – भूस्वामी द्वारा बेदखली के लिए वाद – प्रतिवादी द्वारा वाद संपत्ति को खाली नहीं किया जाना – भूस्वामी और क्रेता के बीच संपत्ति अंतरण करने का करार होना – जहां पर भूस्वामी और प्रतिवादी के बीच प्रश्नगत मकान के बारे में विक्रय करार हुआ हो तो भूस्वामी उस प्रश्नगत मकान का कब्जा बेदखली के माध्यम से तभी प्राप्त कर सकता है जबकि विक्रय करार के अधीन देय प्रतिफल का उसके द्वारा संदाय कर दिया जाए ।

वर्तमान प्रथम अपील, प्रतिवादियों स्वर्गीय कमल चंद के विधिक प्रतिनिधियों, द्वारा प्रत्यर्थियों/वादियों, गंगाराम और जगदीश, श्री हजारी मल के दोनों पुत्रों के विरुद्ध फाइल की गई है । वाद संपत्ति, नागपुर में स्थित 2000 वर्ग गज की एक कृषि भूमि है जिसके लिए प्रत्यर्थियों/वादियों द्वारा फाइल विनिर्दिष्ट पालन के वाद को विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, नागपुर द्वारा अर्थात् वाद संख्या 1/1975-गंगाराम और अन्य बनाम कमल चंद के विधिक प्रतिनिधि और अन्य में, अक्तूबर, 1967 में पक्षकारों के बीच एक अभिकथित मौखिक करार 8 रुपए प्रति वर्ग गज की दर से 2000 वर्ग गज के क्षेत्रफल वाली प्रश्नगत भूमि का अंतरण किया गया था, जिसके आधार पर तारीख 18 सितम्बर, 1987 को डिक्री की गई । इससे व्यथित होकर वर्तमान प्रथम अपील फाइल की गई । न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – एक बार जब विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष यह साक्ष्य लाया गया है कि स्वयं संपत्ति का अंतरण करने के लिए करार के अस्तित्व के बारे में पक्षकारों के बीच गंभीर विवाद था, वह भी एक मौखिक करार, तो विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री जो निर्विवाद रूप से विद्वान् विचारण न्यायालय के विवेकाधिकार के निष्पक्ष कार्यक्षेत्र के दायरे में निहित था, को निचले न्यायालय द्वारा मंजूर नहीं किया जाना चाहिए था । मात्र तथ्य यह है

कि स्वयं पक्षकारों के बीच करार के संबंध में, दो स्वतंत्र साक्षी और शहर के प्रतिष्ठित दो दखलंदाजों के बयान से पर्याप्त रूप से यह दर्शित होता है कि विद्यमान पक्षकारों के बीच में लेखबद्ध कोई विधिमान्य करार उपलब्ध नहीं था । प्रश्नगत भूमि निर्विवाद रूप से प्रतिवादी कमल चंद की थी और अभिकथित तौर पर सहमत 14,500/- रुपए के विरुद्ध मात्र एक छोटी राशि 3,000/- रुपए ही प्रतिवादियों को अग्रिम तौर पर दी गई थी और जिसे वादियों द्वारा कभी भी संदत्त या दिया नहीं गया । प्रथमदृष्ट्या 8 रुपए प्रति वर्ग गज की दर काफी कम थी और भूमि के बाजार मूल्य में बढ़ोतरी काफी समय बीतने के पश्चात् मूल्य में विचारणीय स्तर तक वृद्धि स्वाभाविक थी । यदि पक्षकार इस दर पर वाद संपत्ति का अंतरण करने के लिए और उसके रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख को निष्पादित करते हुए भूमि का अंतरण करने के लिए संपूर्ण प्रतिफल लेने से कोई चीज नहीं रोकती है । मध्यस्थ, श्री दामोदर दास आचार्य, अधिवक्ता का भी कथन, जो एक कैबिनेट मंत्री भी थे, से यह दर्शित होता है कि मौखिक करार को कभी भी अंतिम रूप नहीं दिया गया था क्योंकि दर या मूल्य के बारे में विवाद था । उपर्युक्त वर्णित तथ्यों और परिस्थितियों, विशेष रूप से, वर्तमान अपीलार्थियों/प्रतिवादियों अर्थात् कमल चंद के विधिक प्रतिनिधियों के पक्ष में कब्जे के लिए वाद की डिक्री किया जाना, से यह स्पष्ट रूप से सिद्ध होता है कि वे उक्त भूमि के स्वामित्व और हक के लिए पूरी शक्ति से नहीं लड़ रहे थे अपितु वे किसी भी तरह उसको पाना चाहते थे और यहां तक कि उन्होंने अपने पक्ष में, इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ से सक्षम न्यायालय की डिक्री को भी कायम करवा लिया है । इस मुकदमे के लंबित रहने के तथ्य, विनिर्दिष्ट पालन के लिए वर्तमान वाद में विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष बहुत ही अच्छे से रखे गए थे और विशिष्ट रूप से उपर्युक्त उद्धृत विवाद्यक संख्या 7-ए के निष्कर्ष, प्रत्यर्थियों/वादियों, गंगाराम और जगदीश के विरुद्ध अभिलिखित किए गए थे जो सुनिश्चित रूप से यह सिद्ध करता है कि इसमें उनके पक्ष में ऐसी भूमि के अंतरण के लिए वादियों के पक्ष में ऐसा कोई मौखिक करार नहीं हुआ था । इन परिस्थितियों में, प्रतिवादियों/अपीलार्थियों के पक्ष में कब्जे की प्रतिकूल डिक्री में संपत्ति का अंतरण करने के लिए विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री मंजूर करना, स्पष्टतः, इस संबंध में विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा विवेक का प्रयोग निष्पक्ष प्रयोग करना नहीं कहा जा सकता है और वह भी इस कमजोर आधार पर कि डिक्री के विरुद्ध प्रतिवादियों की अपील उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित थी, जिसे अंततः विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा

और इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा भी खारिज कर दिया गया था । इस प्रकार, इस न्यायालय की यह स्पष्ट राय यह है कि वर्तमान मामले में, विनिर्दिष्ट पालन के वाद खारिज किए जाने योग्य है और वादियों, गंगाराम और जगदीश के पक्ष में ऐसा कोई आनुतोष मंजूर नहीं किया जा सकता है । इसलिए, प्रतिवादियों/अपीलार्थियों की अपील सफल होती है और तद्नुसार, इसे मंजूर किया जाता है और वाद संख्या 1/1974 में तारीख 18 सितम्बर, 1987 को पारित आक्षेपित निर्णय और डिक्री को अपास्त किया जाता है, प्रतिवादियों/प्रत्यर्थियों को यह निदेश दिया जाता है कि वे प्रतिवादियों को उनके द्वारा संदत्त अग्रिम धनराशि 3,000/- रुपए वापस करने के अध्यधीन प्रतिवादियों/अपीलार्थियों को वाद भूमि का कब्जा वापस सौंप दें । ऐसी 3,000/- रुपए की धनराशि, आज की तारीख से एक मास की अवधि के भीतर प्रतिवादियों/अपीलार्थियों द्वारा विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष जमा की जाए और प्रश्नगत भूमि का कब्जा, आज से तीन मास की अवधि के भीतर प्रतिवादियों/प्रत्यर्थियों को सौंपा जाए । (पैरा 10, 11 और 12)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 1988 की एस. बी. सिविल अपील सं. 14.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी-प्रतिवादी की ओर से श्री डी. आर. भंडारी

प्रत्यर्थी/वादी की ओर से श्री संदीप भंडावत

न्यायमूर्ति विनीत कोठारी – वर्तमान प्रथम अपील, प्रतिवादियों स्वर्गीय कमल चंद के विधिक प्रतिनिधियों, द्वारा प्रत्यर्थियों/वादियों, गंगाराम और जगदीश, श्री हजारी मल के दोनों पुत्रों के विरुद्ध फाइल की गई है । वाद संपत्ति, नागपुर में स्थित 2000 वर्ग गज की एक कृषि भूमि है जिसके लिए प्रत्यर्थियों/वादियों द्वारा फाइल विनिर्दिष्ट पालन के वाद को विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, नागपुर द्वारा (जिसे संक्षिप्त में इसमें इसके पश्चात् "विचारण न्यायालय" कहा गया है) अर्थात् वाद संख्या 1/1975-गंगाराम और अन्य बनाम कमल चंद के विधिक प्रतिनिधि और अन्य में, अक्तूबर, 1967 में पक्षकारों के बीच एक अभिकथित मौखिक करार 8 रुपए प्रति वर्ग गज की दर से 2000 वर्ग गज के क्षेत्रफल वाली प्रश्नगत भूमि का अंतरण किया गया था, जिसके आधार पर तारीख 18 सितम्बर, 1987 को डिक्री की गई । प्रत्यर्थियों/वादियों के पक्ष में विचारण न्यायालय के निष्कर्ष वर्तमान संदर्भ के लिए नीचे उद्धृत हैं :–

"तनकी नं. 3ए –

प्रस्तुत वाद में वादीगण के विद्वान् अधिवक्ता ने सेक्शन 11 सी पी सी के संबंधी के यह दलील देते हुए कहा कि यदि इसी वादग्रस्त भूमि को लेकर मेहता सिटी में प्रतिवादीगण के हक में बेदखली की डिक्री प्राप्त हुई है उसकी अपील माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय में विचाराधीन है इसलिए सेक्सन एप्लीकेबल नहीं है । वादी के अधिवक्ता ने अपनी दलील में यह भी कहा कि जब किसी भी निर्णय की अपील माननीय उच्च न्यायालय में हो जाती है तो वह सब जुडिस मेटर हो जाता है । वादीगण के अधिवक्ता ने रेस जेडिकेटा के संबंध में अनेक नजीरें प्रस्तुत कीं जिनका भली प्रकार से अवलोकन किया गया । पत्रावली पर यह भी आया है कि जो वादी एवं प्रतिवादी के बीच बेदखली निर्णय की डिक्री हुई थी । वह अंतिम रूप से इसलिए नहीं मानी जा सकती क्योंकि अभी तक वह राजस्थान उच्च न्यायालय में विचाराधीन है । इसलिए अंतिम रूप से निर्णय होना नहीं कहा जा सकता है । पी. डब्ल्यू. 1 वादी गंगाराम ने अपनी जिरह में भी यह बताया कि यह सही है कि इस जमीन के संबंध में एक दावा सेशन न्यायालय, मेड़ता में चला, एक दावा मैंने किया व एक दावा कमल चंद ने किया । यह सही है कि कमल चंद द्वारा मेरे विरुद्ध किया गया दावा डिक्री हुआ था जिसकी अपील राजस्थान उच्च न्यायालय में पेश है व लंबित है । इसलिए यह अंतिम निर्णय नहीं माना जा सकता, इसके अलावा वादी एवं प्रतिवादी के बीच में बेदखली का दावा चला था जिसका सबजेक्ट मेटर भी अलग था । पत्रावली पर प्रतिवादीगण द्वारा जो दस्तावेज पेश किए गए हैं वह भी न्यायालय द्वारा प्रदर्शित नहीं हुए इसलिए उन्हें साक्ष्य में पढ़ा जाना भी उचित नहीं समझता । यदि इसी परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो प्राणी न्याय पर सिद्धांत एक लोक नीति सिद्धांत है । पूर्ववर्ती वाद में यदि दोनों पक्षकारों के बीच में एक ही विषय को लेकर वाद लंबित था और वह वाद अंतिम रूप से निर्णय हो चुका हो, ऐसी स्थिति में दोनों पक्षकारों को उसी विषय को लेकर पुनः किसी भी न्यायालय में वाद नहीं लाया जा सकता । लेकिन इस वाद में विषयवस्तु भी दोनों पक्षकारों के बीच में अलग थे । इसके अलावा वादीगण के खिलाफ जो बेदखली की डिक्री हुई थी पूर्व वाद की अपील वादीगण द्वारा माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय में कर दी जो वहां पर लंबित है । इसलिए इस वाद पर निर्णय करने में

कोई प्रभाव नहीं डालता । इसलिए भी स्वतः ही पूर्व वाद का निर्णय सबजुडिस मेटर हो जाता है । इसलिए यह वाद पूर्व न्याय से बाधित नहीं है । इस तनकी को साबित करने में प्रतिवादी असफल रहा है ।

तनकी नं. 1 –

इस तनकी को साबित करने का भार वादी पर है । वादी पी. डब्ल्यू. 1 गंगाराम ने अपने सशपथ बयानों में बताया कि कमल चंद को मैं जानता हूं जो फौत हो चुका है । इसकी जमीन नए दरवाजा, नागौर में आई हुई है । इस जमीन का सौदा अक्तूबर, 1967 में हुआ । मैं मेरे भाई जगदीश, कमल चंद सांवलराम बैठे हुए थे, 2752 वर्ग गज में से दो हजार वर्ग गज जमीन उत्तरादी आठ रुपए प्रति वर्ग गज की दर से मुझे बेचना तय किया तीन हजार रुपए मैंने कमल चंद को दिए थे । यह रुपए मैंने बातचीत के समय ही दे दिए थे । फिर कहा कि दामोदार दास जी वकील के यहां गए उसके पास कमल चंद ले गया । कागजात वगैरा पूछने व लिखा-पढ़ी करने के लिए वहां गए थे । एग्रीमेंट नहीं लिखा गया था । श्री दामोदार दास ने मुझे कहा कि तुमको क्या डर है, मेरी जिम्मेदारी है । वहां उस समय किशनलाल भी बैठा था, फिर बेचान की रजिस्ट्री नहीं करवाई, क्योंकि कमल चंद ने कहा कि इस जमीन के कागज मद्रास में पड़े हैं, बकाया रुपए के लिए मैंने वकील मदनलाल से नोटिस दिलवाया । नोटिस की नकल एक्जी. 1ए है, जिसे नोटिस का जवाब वादी को नहीं दिया गया था । नोटिस देने के बाद कमल चंद वकील मदनलाल से मिला तीन-चार बार मिला व कहा कि जमीन के भाव बढ़ गए हैं, इसलिए ज्यादा रुपए दिलवा दो व हमारा समझौता करवा दो, तो मैंने कहा कि 16 हजार रुपए में सौदा हुआ है, तीन हजार दे दिए तेरह हजार रुपए देने को तैयार हूं पी. डब्ल्यू. 7ए श्री दामोदर दास ने अपने सशपथ बयान में बताया कि मैं फेरीकेन मुकदमा को जानता हूं । नया दरवाजा के बाहर जो जमीन है उसके खरीद फरोक्त के संबंध में कमल चंद ने मेरे दफ्तर में आकर के कहा, एरिया कितना था, अब जुबानी याद नहीं । यह गवाह भी इस मुकदमे में इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि राज्य स्टेट का मंत्री है और अपने सशपथ बयानों में यह बात बताई है कि गंगाराम व कमल चंद के बीच में जमीन का सौदा हुआ था । बेचने वाला कमल चंद था और खरीदने वाला गंगाराम था । आगे इस गवाह ने यह भी कहा कि मेरे सामने इनके जमीन की दर का झगड़ा

था । दोनों पक्षकार यह चाहते थे कि मैं मध्यस्थता करूं । मैंने कहा कि दोनों मिलने वाले हो इसलिए आप आपस में तय कर लो । करीब 19 साल पहले की बात है, जब मैं वकालत करता था । मेरे से दोनों मिलने आए थे मेरे से यह तसल्ली लेने आए थे, क्योंकि दोनों मेरे मिलने वाले थे । इसलिए मेरे पास आए । मेरे सामने दर के बारे में कोई फाइनल नहीं हुआ । मेरे सामने लिखा-पढ़ी नहीं हुई । इस तथ्य की पुष्टि वादी पी. डब्ल्यू. 1 गंगाराम भी करता है कि मौखिक सौदा हुआ, क्योंकि दोनों ही वादी एवं प्रतिवादीगण प्रतिष्ठित एवं व्यापारिक वर्ग के लोग थे, इसलिए एक दूसरे पर जबानी विश्वास होने से मौखिक संविदा हुई थी, इसी कथन को पी. डब्ल्यू. 7ए श्री दामोदर दास आचार्य भी यह कहते हुए प्रमाणित करते हैं और बेचने वाला पक्षकार जमीन बेचने को तैयार था । आगे इस गवाह ने यह भी कहा कि अगर आपके आपस में तय हो जाता है और कोई लिखा-पढ़ी नहीं भी हो तो कोई बात नहीं । इसलिए इस गवाह के समक्ष वादीगण एवं प्रतिवादीगण के बीच में विवादग्रस्त जमीन का सौदा होना तो निश्चित हुआ है । पी. डब्ल्यू. 1 ने यह भी बताया कि श्री दामोदर दास आचार्य जब कमल चंद प्रतिवादी को ले गया तब वहां पर किशनलाल पी. डब्ल्यू. 2 भी बैठा हुआ था । पी. डब्ल्यू. 2 किशनलाल ने अपने सशपथ बयान में बताया कि मैं पक्षकारान को जानता हूं । करीब सौलह-साढ़े सौलह साल की बात है मैं श्री दामोदार दास आचार्य के आफिस में मुकदमे के सिलसिले में गया था । श्री दामोदर दास आचार्य थे और आदमी बैठे थे और आदमी कितने थे मैं नहीं जानता । वहां पर गंगाराम और कमल चंद आए और कमल चंद ने कहा कि गंगाराम के आखली की जमान नए दरवाजे के बाहर सड़क के पास ली है उसमें से दो हजार वर्ग गज जमीन आठ रुपया प्रति वर्ग गज के हिसाब से बेचना कमल चंद ने तय किया और साई के पेटे रुपए तीन हजार कमल चंद ने लेने बताए । यह बात उन्होंने श्री दामोदर दास को कही । कमल चंद ने कहा कि कागजात मद्रास में पड़े हैं, मंगवा कर रजिस्ट्री करवा दूंगा । गंगाराम ने कहा रजिस्ट्री करवा दो दामोदर दास जी ने कहा कि लिखा-पढ़ी की क्या जरूरत है । रजिस्ट्री करवा दूंगा । कागजात आते ही जबानी बात हुई थी । लिखा-पढ़ी नहीं हुई । इस गवाह ने यह भी बताया कि श्री दामोदर दास के सामने प्रतिवादी ने यह भी स्वीकार किया कि तीन हजार रुपए साई पेटे वादीगण गंगाराम से कमल चंद ने लेना बताया था । पी.

डब्ल्यू. 4 सांवता ने भी अपने सशपथ बयानों में बताया कि कमल चंद मेरी छकड़ी में सामान डलवाता था और कमठा का काम करवाता था । आज से करीब 17 साल पहले आसोज के नौरता के समय गंगाराम और कमल चंद के बीच नए दरवाजे के बाहर की आखली में बातचीत हुई थी । मैं वहां पर माल बाहर ले जाता कोई ग्राहक आया इसलिए वहां गया था । नए दरवाजा बाहर आखली वाली जमीन उत्तरदायी दो हजार वर्गगज जमीन बेचने का कमल चंद ने गंगाराम को बेचने का सौदा किया था । आठ रुपया प्रति वर्ग गज के हिसाब से बेचने का साथ किया था । आठ रुपया प्रति वर्ग गज के हिसाब से बेचने का सौदा किया था । साई के पेटे तीन हजार रुपए मेरे सामने दिए थे । बाकी पैसे बाद में देने के लिए बात हुई थी । कि मद्रास में पट्टा है वहां से लाकर रजिस्ट्री करवा दूंगा और पैसे ले लूंगा । पी. डब्ल्यू. 5 मदनलाल ने अपने सशपथ बयान में बताया कि मैं पक्षकारों को जानता हूं । मैंने गंगाराम के निर्देशानुसार कमल चंद को एक नोटिस दिया था । वह नोटिस एक जमीन के सौदे के बाबत था, उस समय सौदे में तय अनुसार अग्रिम दी गई राशि को काट कर बकाया रकम लेकर रजिस्ट्री करवाने बाबत दिया था । आज से 15-16 साल पहले दिया था । नोटिस उन्हें मिलने की रसीद मेरे पास आई । कमल चंद नोटिस मिलने के बाद आया और मुझे जमीन की कीमत बढ़ जाने के कारण कुछ और रकम ज्यादा दिलाने को कहा, जहां गंगाराम अपनी पट्टियों की आखली नए दरवाजे के बाहर लगा रखी है उसके वाली थी । इस गवाह ने यह भी बताया कि मेरे व गंगाराम के समक्ष प्रतिवादी ने सौदा होना मंजूर किया था और यह भी मंजूर किया कि गंगाराम से तीन हजार रुपए लेना भी स्वीकार किया । गोपुराम ने भी अपने सशपथ बयान में बताया कि मैं कमल चंद के ऊन गोदाम की आखली पर मुझे मिला । कमल चंद ने मेरे को कहा कि थोड़ा रुको मैं रुपए लेकर दूंगा । कमल चंद ने गंगाराम से तीन हजार रुपए लिए, मेरे को एक हजार रुपए दिए व दो हजार रुपए अपने पास रखे । कमल चंद ने कहा कि इस जमीन में से दो हजार गज जमीन बेची है जिसके तीन हजार रुपए लिए थे । इस गवाह ने भी इस बात की ताईद की है कि वादीगण गंगाराम से तीन हजार रुपए प्रतिवादी कमल चंद को साई पेटे से लिए, उसमें उसे एक हजार रुपया उसी वक्त दिए थे । इसलिए यह गवाह भी इस बात की पुष्टि करता है कि वादीगण गंगाराम व कमल चंद के बीच में जमीन के बेचने बाबत

सौदा हुआ था और उस बेजान कमल चंद ने साई पेटे तीन हजार रुपए वादी गंगाराम से लिए थे, पी. डब्ल्यू. 7 ने भी अपने सशपथ बयानों में बताया कि मैं पक्षकारान को जानता हूं । कमल चंद जीवित नहीं है । 16-17 साल पहले की बात है कि अस्पताल से घर जा रहा था तो कमल चंद ने कहा कि हमने दो हजार वर्ग गज जमीन गंगाराम को आठ रुपए प्रति वर्ग गज के हिसाब से दी और तीन हजार रुपए साई के लिए थे और कब्जा दे दिया है बाकी रुपए देने पर रजिस्ट्री करवा दूंगा । अस्पताल से नया दरवाजा की तरफ जाते हैं तो जीवने हाथ की तरफ जमीन है जो बेची है । पी. डब्ल्यू. 3 रामपाल ने अपने सशपथ बयान में बताया कि गंगाराम व कमल चंद को जानता हूं । करीब 13 साल पहले इन दोनों के बीच आपस में बातचीत हुई । गंगाराम की आखली की बात हुई थी । मैं वहां पट्टिया लेने गया था । डी. डब्ल्यू. 1 रेवन्तचंद ने अपने सशपथ बयानों में बताया कि गंगाराम, जगदीश को मैं जानता हूं, मेरे पिताजी का 17 नवम्बर, 1970 को स्वर्गवास हुआ । मेरे नए दरवाजे के बाहर जमीन है जिसका वर्ग गज कुल 2752-1/4 है । जिसका पट्टा कमल चंद, रतनचंद के नाम का है । रतनचंद बीमार रहता है जो 15-20 साल से बीमार है तथा इस जमीन बाबत मेरे पिता से वादी को जमीन बेचने, बाबत कभी नहीं कहा । 1977 में जमीन वादी को बरतने के लिए मांगने पर दी जो दो हजार वर्ग गज जमीन दी थी । यह गवाह यह तो स्वीकार करता है कि दो हजार वर्ग गज जमीन हमने वादीगण को दी थी । वादीगण के बीच और इस गवाह के पिता के बीच कोई जमीन बेचने का सौदा नहीं हुआ । इस गवाह ने यह भी कहा कि मेरे पिता कोई सौदा क्या-क्या काम करते तो घर आकर बात करते । उन्होंने गंगाराम को जमीन बेचने की बात कभी भी नहीं कही । वादी ने कभी साई के पेटे तीन हजार रुपए नहीं दिए । श्री दामोदर दास शिक्षा मंत्री को जानता हूं । जमीन के सौदा के मुलालिक मैं वकील साहब श्री दामोदर दास के घर वादी के साथ कभी नहीं गया और न ही मेरे पिता ही गए । यह गवाह यह भी कहता है कि श्री दामोदर दास के घर हम नहीं गए । पी. डब्ल्यू. 7ए श्री दामोदर दास ने स्वयं यह कहा कि वादी गंगाराम प्रतिवादी कमल चंद दोनों मेरे पास आए थे और दोनों ने यह बात चलाई कि जमीन बेचने वाला जमीन बेचने को तैयार था । मैंने यह भी कहा था कि दोनों मेरे जान पहचान के व्यक्ति हैं और यदि सौदा हो जाने के बाद कोई लिखा-पढ़ी नहीं हो तो कोई बात नहीं ।

श्री दामोदर दास ने इस बात की पुष्टि की है कि सौदा जमीन बेचने की बाबत दोनों ही पक्षकारों के बीच हुआ था और दो हजार वर्ग गज जमीन पी. डब्ल्यू. 7ए श्री दामोदर को भली प्रकार से जानते हैं । इसलिए यह डी. डब्ल्यू. 1 गवाह का यह कहना कि मेरे पिताजी कभी भी वादी के साथ श्री दामोदर दास के घर नहीं गए । यह बात स्वाभाविक रूप से मेल नहीं खाती क्योंकि श्री दामोदर दास के वादी एवं प्रतिवादी दोनों ही मिलने वाले थे । इसलिए यह स्वाभाविक रूप से भी माना जा सकता कि जमीन बाबत दोनों ही दामोदर दास के पास गए और जमीन का सौदा के संबंध में उनके सामने भी बातचीत हुई थी । डी. डब्ल्यू. 1 ने आगे यह भी कहा कि श्री दामोदर दास ने कभी भी जमीन बेचने के सौदे के बाबत कोई बात नहीं करवाई और न ही उन्होंने कभी अपनी तरफ बात ही जमीन के सौदे के बाबत की । मदनलाल वकील साहब का जब नोटिस मिला उसके बाद हम बेचान बाबत वादी से कोई सौदा नहीं किया । मैं मेरे पिता के साथ कभी भी मदनलाल वकील के पास मिलने नहीं गया और न ही वादी कोई जमीन बेचने बाबत सौदा किया और न ही भाव बढ़ा कर ही जमीन बेचान बाबत कोई वकील साहब को ही कहा । जब इस गवाह ने अपनी जिरह में यह स्वीकार किया है कि मेरे पिताजी व दामोदर के बीच अच्छे संबंध थे । यह बात भी जिरह में स्वीकार है कि 68 व 78 के बीच में मेरे पिताजी मकान के बाबत व्यापार करते थे और मद्रास आते जाते रहे थे । मकान खरीदने का काम नहीं करते थे । डी. डब्ल्यू. 2 हुक्मीचंद ने अपने सशपथ बयानों में बताया कि पक्षकारान को मैं जानता हूं । कमल चंद का 1974 में स्वर्गवास हुआ था उनकी जमीन का कोई सौदा नहीं किया । मेरा प्रतिवादी के यहां आना जाना था । मैंने सितम्बर, 1974 में सुना कि उसने प्रतिवादी से जमीन ली है । मैंने प्रतिवादी को पूछा कि जमीन नए दरवाजे वाली जमीन मोल ली है या नहीं वादीगण ने कोई जमीन मोल नहीं ली और न ही इस बाबत कोई सौदा हुआ । जब यह गवाह स्वाभाविक से यह बात स्वीकार की है कि वादी एवं प्रतिवादी के बीच जमीन बेचान वाले सौदे बाबत उसने सुना था । जबकि यह गवाह चालीस साल का है और सौदा होने के वक्त 19-20 साल की अवस्था के लगभग होगा, तो परिपक्व विचार वाले व्यक्ति में यह बैठकर यह सौदे वाली बात पूछे यह स्वाभाविक से भी मेल नहीं खाता है । डी. डब्ल्यू. 3 हुलास चंद ने अपने सशपथ बयानों में बताया कि पक्षकार को जानता हूं और इनके

टंटे वाली जमीन को भी जानता हूं । इस जमीन की बाबत पक्षकार के बीच सौदा नहीं हुआ । 17-18 साल हो गए मैं इसके घर आता जाता रहता हूं, कमल चंद व उसके घरवाले थे जमीन के सौदे बाबत पूछा तो उन्होंने कहा कि कोई सौदा नहीं हुआ । प्रतिवादी रेवन्तचंद व गंगाराम में झगड़ा हुआ था तो मैंने पूछा क्या बात हुई तो कमल चंद ने बताया कि गंगाराम को मांगने पर जमीन दी थी, वापिस लेने गया तो झगड़ा हुआ । इस गवाह ने यह स्वीकार किया कि बल्लभचंद को जमीन की बाबत सलटाने के लिए पंच मुकर्रर किया था, लेकिन बल्लभचंद पर शक होने से पंच पद से हटा दिया, उसके बाद मैंने जमीन बाबत कोई बात नहीं सुनी, पी. डब्ल्यू. 1 गंगाराम ने अपनी जिरह में यह बताया कि जमीन को बेचने का इकरार मेरे व कमल चंद के बीच जमीन पर हुआ था, यह बात सन् 1967 की 10वें महीने की है । यह सही है कि हम दोनों यह बात करने वकील श्री दामोदर दास के घर चले गए । यह सही है कि जमीन पर लिखा-पढ़ी नहीं तो जमीन पर हुई और न ही श्री दामोदर दास के घर पर हुई । लेकिन इस गवाह ने यह भी कहा कि श्री दामोदर दास ने यह कहा कि अब मेरे जिम्मेदारी है । मैं बेचना करवा दूंगा । श्री दामोदर दास के घर बात यह चल रही थी तब मैं कमल चंद दामोदर दास व किशनलाल व अन्य आदमी थे, जिनका नाम नहीं जानता हूं, पी. डब्ल्यू. 2 किशनलाल ने भी इसकी पुष्टि करते हुए कहा कि वहां पर गंगाराम व कमल चंद आए थे और कमल चंद ने कहा कि गंगाराम के आखली की जमीन नए दरवाजे के बाहर सड़क के पास में है उसमें से दो हजार वर्ग गज जमीन आठ रुपया प्रति वर्ग गज के हिसाब से बेचना तय किया और साई के रुपए तीन हजार कमल चंद ने लेना बतलाया था, यह बात उन्होंने श्री दामोदर दास आचार्य को भी कही । जिरह में इसने यह भी स्वीकार किया कि मैं रोजाना श्री दामोदर दास के पास बैठ जाता हूं । श्री दामोदर दास ने मेरे सामने कहा कि रजिस्ट्री मैं करवा दूंगा, मेरी जिम्मेदारी है । पी. डब्ल्यू. 7ए श्री दामोदर दास आचार्य ने अपने सशपथ बयानों में यह बात बतलाई थी, कि मेरे सामने लिखा-पढ़ी इसलिए नहीं हुई क्योंकि दोनों में सौदा तय नहीं हुआ था, खरीदने वाला पक्षकार खरीदने को तैयार था व बेचने वाला पक्षकार बेचने को तैयार था । मैंने कहा अगर आपके आपस में तय हो जाता है और लिखा-पढ़ी नहीं भी हो तो कोई बात नहीं । जबकि डी. डब्ल्यू. 1 प्रतिवादी रेवन्तचंद ने अपने बयानों में यह भी बताया कि श्री दामोदर दास के समक्ष विवादग्रस्त जमीन का बेचान का कोई सौदा

नहीं हुआ और न ही मेरे पिताजी उनके पास ही गए, बल्कि यहां तक कहा कि यदि कोई सौदा पिताजी करते तो घर जाकर कहते । डी. डब्ल्यू. 1 ने जिरह में यदि कोई सौदा पिताजी करते तो घर जाकर कहते । डी. डब्ल्यू. 1 ने जिरह में यह बताया कि मेरे पिताजी जमीन को बेचने कोई सौदा नहीं करते । जबकि गंगाराम ने साई के पेटे तीन हजार रुपए कमल चंद को दिए थे और उस वक्त रजिस्ट्री करवाने को कहा तो उसने कहा कागजात मद्रास में हैं, यह बात कमल चंद को कही थी, जिसकी पुष्टि डी. डब्ल्यू. 1 भी करता है कि कमल चंद से बात की तब पास और कोई बैठा हुआ नहीं था, बातचीत की तारीख नहीं बता सकता, कमल चंद के पंच मुकर्रर करने की बात मैंने सुनी थी । यह सन् 1971 के अगस्त में होनी चाहिए, तारीख याद नहीं । डी. डब्ल्यू. 3 ने अपनी जिरह में बताया कि कमल चंद के जमीन जायदाद का काम है किराया देने का धंधा है क्योंकि उनके पास बहुत सारी जमीन है, खरीदना व बेचने का काम कमल चंद का नहीं है, इस जमीन बाबत इसके अलावा और किसी जमीन बाबत कमल चंद से मेरी बात नहीं हुई । कमल चंद के नागौर में जमीन काफी है । स्टेशन, नया दरवाजा, हीरावाडी मंदिर के पास जमीन है । डी. डब्ल्यू. 2 और डी. डब्ल्यू. 3 भी सुनी सुनाई बात कहते हैं क्योंकि जिस वक्त सौदा हुआ था उस वक्त प्रतिवादीगण वादी एवं प्रतिवादीगण के बीच माह अक्तूबर, 1967 जमीन जिस बाबत सौदा हुआ था । उस वक्त डी. डब्ल्यू. 2 हुक्मीचंद व डी. डब्ल्यू. 3 हुलास चंद करीब 18-19 साल के व्यक्ति थे और इसलिए महत्वपूर्ण सौदे के बारे में वे प्रतिवादीगण को पूछे यह भी स्वाभाविक नहीं लग सकता, सौदा संविदा के मुताबिक जब तय हुआ तब भी यह लोग मौजूद नहीं थे, इसके अलावा प्रतिवादीगण के जवाब दावा का पैरा नं. 5 के मुताबिक यदि तारीख 2 अगस्त 1978 वाके उसे प्रतिवादी अमरचंद, प्रसन्नचंद व रतनचंद को भी साक्ष्य में प्रस्तुत नहीं किया है । इसलिए डी. डब्ल्यू. 2 व डी. डब्ल्यू. 3 की गवाह विश्वसनीय नहीं मानी जा सकती । डी. डब्ल्यू. 1 रेवंतचंद ने अपने जवाब दावा में जमीन के सौदे के बाबत कतई इनकार किया गया है जबकि वह साक्ष्य में आकर यह स्वीकार करता है कि वल्लभसिंह को पंच मुकर्रर किया गया और वल्लभसिंह ने वादी एवं प्रतिवादीगण के बीच मध्यस्थता की थी । इसके अलावा श्री दामोदर दास ने भी उसके पिता के अच्छे संबंध होना बताया है । पी. डब्ल्यू. 1 की सम्पूर्ण साक्ष्य

का अवलोकन एवं विश्लेषण करने से यह प्रमाणित हो जाता है कि माह अक्तूबर, 1967 में वादीगण व कमल चंद के बीच दो हजार वर्ग गज जमीन उतरादी आठ रुपया प्रति वर्गगज की दर से बेचान तय किया गया था जिसके साई पेटे तीन हजार रुपए वादी गंगाराम ने कमल चंद को दिए थे । यह संविदा मौखिक रूप से हुई और लिखा-पढ़ी करने के लिए कमल चंद, श्री दामोदर दास के पास लाए, श्री दामोदर दास के वादी एवं प्रतिवादी दोनों ही अच्छे मिलने वाले थे जिन्होंने अदालत में आकर साक्ष्य भी दिया है कि जमीन की बाबत सौदा उनके सामने हुआ था तथा बेचान वाली बेचान को तैयार था और खरीदने वाला खरीदने को तैयार था तथा श्री दामोदर दास पी. डब्ल्यू. 7ए ने इस बात की ताई की है लिखा-पढ़ी करने की कोई आवश्यकता नहीं है । पी. डब्ल्यू. 2 किशनलाल ने भी यह साक्ष्य इस परिप्रेक्ष्य में दी है कि वादीगण गंगाराम व कमल चंद प्रतिवादीगण श्री दामोदर दास के पास आए थे और कमल चंद ने साई पेटे तीन हजार रुपए लेना स्वीकार किया था और दो हजार वर्ग गज जमीन आठ रुपया वर्ग गज के हिसाब से बेचना स्वीकार किया था । जबकि पी. डब्ल्यू. 7ए श्री दामोदर दास ने कहा कि दोनों के सौदा तय हो जाए तो लिखा-पढ़ी करने की आवश्यकता नहीं है । इसलिए यह गवाह भी इस बात की ताईद करता है कि वादीगण एवं प्रतिवादीगण के बीच सौदा जमीन बेचान बाबत निश्चित हुआ था । पी. डब्ल्यू. 4 सांवताराम ने बताया कि नए दरवाजे के बाहर आकली वाली जमीन तादादी दो हजार वर्ग गज जमीन बेचने का कमल चंद ने गंगाराम को तय किया । आठ रुपया गज के हिसाब से बेचना तय किया गया था साई के तीन हजार रुपए मेरे सामने दिए थे, बाकी रुपए देने के लिए यह बात हुई थी कि मद्रास में पट्टे हैं वहां से लाकर रजिस्ट्री करवा दूंगा । गोपुराम ने अपनी साक्ष्य में यह बतलाया कि मैं कमल चंद को जानता हूं जो ऊन के क्रय विक्रय का धंधा करता था, मैं उनके ऊन गोदाम पर गया, ऊन गोदाम पर नहीं गया तो मैं घर गया तथा गंगाराम के आकली पर मुझे मिला । कमल चंद ने मेरे को कहा था कि रुक मैं रुपए लेकर दूंगा । कमल चंद ने गंगाराम से तीन हजार रुपए लिए, मेरे को उनमें से एक हजार रुपए दिए और बाकी दो हजार अपने पास रख लिए । यह गवाह भी इस बात की पुष्टि करता है कि कमल चंद से उनके पैसे इस को लेने थे, उसको मांगने गया तो कमल चंद ने कहा कि अभी पैसे गंगाराम से लूंगा तब दूंगा, तब गंगाराम ने

कमल चंद को विवादग्रस्त जमीन के साई पेटे रुपए तीन हजार दिए तो उनमें से एक हजार रुपए इस गवाह को (गोपुराम पी. डब्ल्यू. 4) को दिए व बाकी दो हजार अपने पास रख लिए । यह गवाह भी वादीगण के कथन की सम्पूर्ण ताईद करता है ।

यदि पी. डब्ल्यू. 1 गंगाराम, पी. डब्ल्यू. 2 किशनलाल, पी. डब्ल्यू. 3 रामपाल, पी. डब्ल्यू. 6ए गोपुराम, पी. डब्ल्यू. 5 मदनलाल और पी. डब्ल्यू. 7 भंवरलाल इन सभी के साक्ष्य से यह प्रमाणित हो जाता है कि माह अक्तूबर, 1967 में वादीगण गंगाराम, जगदीश, प्रतिवादीगण कमल चंद के बीच तनाजा भूमि की बात दो हजार वर्ग गज जमीन बेचान की बाबत सौदा आठ रुपया प्रति वर्ग गज के हिसाब से होना तय हुआ जिसके बाबत तीन हजार रुपए साई पेटे कमल चंद प्रतिवादी ने प्राप्त किए और कहा कि कागज मद्रास में हैं और कागज देने के बाद रजिस्ट्री करवा दूंगा । तनकी नं. 1 को वादीगण साबित करने में पूर्ण सफल रहे हैं । अतः तनकी नं. 1 वादीगण के हक में तय की जाती है ।

दादरसी –

उपर्युक्त विवेचन एवं पत्रावली के अवलोकन करने व विधि का परिशीलन करने के पश्चात् मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचता हूं कि वादी पी. डब्ल्यू. 1 की साक्ष्य के मुताबिक माह अक्तूबर, 1967 में मेरे भाई जगदीश मैं कमल चंद सांवरलाल बैठे हुए थे, 2752 वर्ग गज जमीन में से दो हजार वर्ग गज जमीन उतरादी आठ रुपया प्रति वर्ग गज के हिसाब से बेचना तय किया गया बेचान कमल चंद ने तय किया जिस साई पेटे तीन हजार रुपए लिए गए । बाद में लिखा-पढ़ी करने हेतु श्री दामोदर दास के पास गए जो पी. डब्ल्यू. 7 उनकी साक्ष्य को इसी परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो उन्होंने यह बात अपने बयान में बताई है कि वादीगण एवं प्रतिवादी को भली प्रकार से जानता हूं और वादीगण उनके पास आए थे और जमीन के सौदे के बाबत मेरे सामने बातचीत हुई थी । यहां तक कहा कि बेचान वाले बेचने को व खरीदने वाला खरीदने को तैयार था तथा जिस जमीन बाबत सौदा हुआ था उसको भी श्री दामोदर दास भली प्रकार से जानते थे तथा साक्ष्य में यह भी आया है कि वादीगण तथा प्रतिवादीगण दोनों ही उनके विश्वास पात्र आदमी थे, इसलिए उन्होंने कहा कि यदि सौदा तय हो

जाता है तो लिखा-पढ़ी करने की कोई जरूरत नहीं है । इसके अलावा किशनलाल पी. डब्ल्यू. 2 ने भी यह साक्ष्य दिया है कि जब वह श्री दामोदर दास के मकान पर था तब वादी एवं प्रतिवादीगण दोनों आए थे और प्रतिवादीगण ने यह बात स्वीकार की थी तनाजा भूमि के बाबत तीन हजार रुपए साई पेटे लिए थे और बाकी रुपए देने पर रजिस्ट्री करवा दूंगा लेकिन प्रतिवादी ने रजिस्ट्री नहीं करवाई और जब वादीगण बकाया राशि देने के तैयार थे तब विवादग्रस्त भूमि को लेकर फौजदारी मुकदमे हुए और दोनों ने फिर नवीनीकरण संविदा के आधार पर नई संविदा के वल्लभसिंह पी. डब्ल्यू. 6 की मध्यस्थ में तारीख 1 अगस्त, 1971 को किया उसके मुताबिक वादीगण प्रतिवादीगण को बकाया राशि देने को तैयार था और यहां तक कहा कि रजिस्ट्री खर्चा भी सम्पूर्ण इसी का होगा, लेकिन फिर भी कमल चंद प्रतिवादी ने पैसा लेने से इनकार कर दिया, इसी वजह से नई संविदा के मुताबिक काज ऑफ एक्सन एराइज हुआ और नया दावा प्रस्तुत किया । डी. डब्ल्यू. 1 ने अपनी साक्ष्य में सौदे होने वाली बात शुरू से लेकर आखिर नवीनीकरण संविदा की भी बात को भी पूर्णतया इंकार किया है लेकिन पत्रावली पर आई हुई सम्पूर्ण साक्ष्य का अवलोकन एवं विश्लेषण करने के पश्चात् मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचता हूं कि वादीगण एवं प्रतिवादीगण के पिता कमल चंद के बीच तनाजा भूमि दो हजार वर्ग गज आई रुपए प्रति गज के हिसाब से देना तय हुआ जिसकी साई पेटे तीन हजार रुपए गंगाराम द्वारा कमल चंद को दिए गए व बकाया राशि संविदा के मुताबिक 13,551/- रुपए देना तय हुआ । जिसे देने के लिए तैयार होने के बावजूद भी प्रतिवादी उक्त जमीन की रजिस्ट्री रुपए लेकर प्रतिवादी ने नहीं करवाई । अतः वाद वादी डिक्री है ।

आदेश

वादीगण का वाद प्रतिवादीगण के खिलाफ इस प्रकार से डिक्री किया जाता है कि प्रतिवादीगण मुतनाजा जमीन 2000 वर्ग गज जो नए दरवाजे, नागौर आखली में उतरादी तरफ की है का रजिस्टर्ड बेचान नामा वादीगण के हक में वादीगण से संविदा के मुताबिक बकाया 13,551/- रुपए लेकर करवाए, इस जमीन की रजिस्ट्री करवाने का खर्चा वादीगण अदा करेंगे एवं उक्त जमीन से संबंधित

पूर्ण कार्यवाही प्रतिवादीगण तारीख 18 नवंबर, 1987 तक निष्पादित कर दें । इस वाद का खर्चा वादीगण प्रतिवादीगण से प्राप्त करेंगे ।

हस्ताक्षर

(बृजलाल बुन्देल)
अपर जिला एवं सेशन न्यायाधीश
नागौर (राजस्थान)"

2. इससे व्यथित होकर, अपीलार्थियों/प्रतिवादियों ने तारीख 30 नवंबर, 1987 को इस न्यायालय में सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 96 के अधीन वर्तमान प्रथम अपील फाइल की है ।

3. अपीलार्थियों/प्रतिवादियों के श्री डी. आर. भंडारी, विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया है कि उक्त कृषि भूमि के अंतरण के लिए पक्षकारों के बीच कोई करार नहीं हुआ था और उक्त करार के अस्तित्व को शुरू से ही प्रतिवादियों ने इनकार किया है । उन्होंने यह निवेदन किया है कि वर्तमान अपीलार्थी, कमल चंद द्वारा फाइल पूर्ववर्ती वाद, प्रत्यर्थियों गंगाराम और जगदीश से संपत्ति का कब्जा प्राप्त करने के लिए था, विद्वान् विचारण न्यायालय ने वाद संख्या 5/173 के उक्त वाद को तारीख 5 फरवरी, 1980 को डिक्री कर दी थी और अन्य बातों के साथ उस मामले में, विवाद्यक सं. 7 को विनिश्चित करते हुए, विद्वान् विचारण न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह निष्कर्ष निकाला था कि अपीलार्थी कमल चंद की उक्त भूमि को प्रत्यर्थियों, गंगाराम और जगदीश को अंतरित करने की ईप्सा करने के लिए मौखिक या लिखित में ऐसा कोई करार नहीं हुआ था और इन निष्कर्षों को, इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने भी कायम रखा है और कब्जे की उस डिक्री की निष्पादन कार्यवाहियां अभी तक सक्षम न्यायालय में लंबित हैं ।

4. इसलिए, अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया कि तत्पश्चात् ऐसी परिस्थितियों में वादियों/प्रत्यर्थियों गंगाराम और जगदीश ने विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद फाइल किया था और इस मुकदमे की कार्यवाही के दौरान जगदीश की मृत्यु हो गई थी, विद्वान् विचारण न्यायालय ने विवाद्यक सं. 7 पर निकाले गए निष्कर्षों की उपेक्षा करते हुए, उनके के पक्ष में विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री नहीं दे सकता मात्र इस कारण से कि उस समय पर उस निर्णय के विरुद्ध अपील उच्च न्यायालय में लंबित था, तथापि, अंततः जिसे उनके विरुद्ध खारिज कर दिया गया था ।

वाद सं. 5/1973 कमल चंद के विधिक प्रतिनिधियों बनाम गंगाराम और अन्य में, तारीख 5 फरवरी, 1980 के निर्णय में विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा विवाद्यक सं. 7 पर निकाले गए उक्त निष्कर्ष का, इस न्यायालय के समक्ष परिशीलन किया गया है, जो वर्तमान संदर्भ के लिए नीचे इस प्रकार उद्धृत है :–

"वाद पद नं. 7 –

इस प्रकरण का सबसे महत्वपूर्ण वाद यही है । प्रतिवादीगण का कथन है कि उन्होंने यह भूमि मांग कर नहीं ली बल्कि अक्तूबर 1967 में 8 रुपए प्रति वर्ग गज की दर से 2000 वर्ग गज जमीन का सौदा हुआ है । ..... में कब्जा प्राप्त किया गया कहते हैं । यह ऊपर किए गए विवेचन से स्पष्ट है कि प्रतिवादीगण का यह कहना गलत है कि उन्होंने भूमि मांग कर नहीं ली । प्रदर्श-4 नोटिस और मदनलाल पी. ड. 9 के बयान से यह पूर्णतया सिद्ध हो चुका है कि प्रतिवादीगण ने यह भूमि मांग कर ली थी फिर भी प्रतिवादीगण ने जो साक्ष्य प्रस्तुत की है उसका विवेचन किया जाना आवश्यक है ।

भंवरलाल डी. ड. 1 का बयान है कि 10-11 वर्ष पूर्व वह अस्पताल से आ रहा तो कमल चंद, गंगाराम और जगदीश बैठे थे । कमल चंद ने उसको बुला लिया और कहा कि 2000 वर्ग गज भूमि 8 रुपए प्रतिवर्ग गज से देना तय किया है और 3,000/- रुपए लेकर कब्जा दे दिया है । प्रति परीक्षा में भंवरलाल इस तथाकथित बात का तारीख महीना सन् तथा मिति महीना सम्भवतः कुछ भी नहीं बता सका । इसलिए मेरी राय में उसका बयान मानने योग्य नहीं है । जगदीश डी. डी. 3 जो कि प्रतिवादी है का बयान है कि उसने कमल चंद और रेवतचंद से कोई भूमि मांग कर नहीं ली बल्कि उसको भाई गंगाराम से 11 वर्ष पूर्व 2000 वर्ग गज भूमि का सौदा हुआ था और उसके भाई ने 3,000/- रुपए दिए । जगदीश डी. डी. 3 का बयान तारीख 27 जुलाई, 1979 को हुआ और 11 वर्ष पूर्व की तिथि तारीख 27 जुलाई, 1968 आती है जबकि उत्तरवाद में सौदा 1967 में होना बताया जाता है । गंगाराम डी. डी. 4 प्रतिवादी का बयान है कि उसके बयान से 12 वर्ष पूर्व विवादग्रस्त भूमि का सौदा हुआ था जो 8 रुपए प्रति वर्ग गज की दर से हुआ और 3,000/- रुपए साई के दिए हैं । सौदे की लिखा-पढ़ी इसलिए नहीं लिखाई गई कि श्री दामोदर आचार्य

ने कहा था कि वे जिम्मेदार है । बाद में कमल चंद अधिक कीमत मांगने लगा । वह 13,551/- रुपए लेकर दूसरे दिन कमल चंद के पास गया तो उसने नहीं लिए और कहा कि मद्रास से कागजात आने के बाद रुपए लेगा । गंगाराम का बयान भी इसलिए मानने योग्य नहीं है क्योंकि वह इस तथ्य को अस्वीकार करता है कि शुरू में भूमि मांग कर ली थी । प्रतिवादीगण जगदीश और गंगाराम का यह बयान है कि उन्होंने सौदे की लिखा-पढ़ी इसलिए नहीं कराई क्योंकि श्री दामोदर आचार्य एडवोकेट यही कहते रहे कि वे जिम्मेदार है लेकिन डी. ड. 8 श्री दामोदर आचार्य एडवोकेट प्रतिवादी के कथन का समर्थन नहीं करते हैं । श्री दामोदर दास आचार्य का बयान है कि कमल चंद और गंगाराम ने उनके आफिस में बैठ कर भूमि के खरीदने व बेचने की बात अवश्य की थी लेकिन बातचीत तय नहीं हो सकी । बाद में भी दोनों पक्ष उनसे मिलते रहे थे लेकिन जमीन का भाव तय हो नहीं पा रहा था । दोनों पक्षों ने मध्यस्थता करने को कहा लेकिन उन्होंने कहा कि आपस में तय कर लो इसलिए जगदीश और गंगाराम का यह बयान अपने आप ही गलत हो जाता है कि दो हजार वर्ग गज भूमि का सौदा हुआ जो जबानी हुआ और 3,000/- रुपए साई के कमल चंद को दिए उसकी रसीद नहीं ली और यह सब इसलिए किया कि श्री दामोदर दास ने आश्वासन दे दिया था ।

जहां तक वल्लभसिंह लोढा डी. ड. 6 के घर पर हुए तथाकथित दूसरे सौदे का प्रश्न है वल्लभसिंह डी. ड. 6 का बयान है कि तारीख 1 अगस्त, 1971 को पक्षकार उसे पंच नियुक्त किया और यह तय था कि 13,551/- रुपए प्रतिवादीगण कमल चंद वादी को देंगे और कमल चंद प्रतिवादीगण के पक्ष में दो हजार वर्ग गज जमीन की रजिस्ट्री करा देगा । उसने यह निर्णय मौखिक किया और पक्षकारों ने कहा कि कल इसी माफिक कार्यवाही हो जाएगी इसलिए लिखा-पढ़ी की क्या आवश्यकता है । मेरी राय में वल्लभसिंह डी. ड. 6 का यह बयान किसी प्रकार से मानने योग्य नहीं है । वल्लभसिंह को पंच नियुक्त करना रेवन्तचंद पी. ड. 1 ने स्वीकार किया है । चार दिन बाद ही श्री सीताराम माथुर वकील द्वारा वल्लभसिंह का नोटिस दिला दिया था कि वह निर्णय नहीं करे । मेरी राय दोनों पक्षों के मध्य इतने फौजदारी प्रकरण उस समय तक चल चुके थे कि 550/- रुपए अधिक लेने के लिए कमल चंद तैयार नहीं हो सकता था । पहले

कथित सौदा मौखिक होना कहा जाता है और इसी कारण से झगड़ा पड़ा । इन परिस्थितियों में वल्लभसिंह द्वारा मौखिक पंच निर्णय देना और दोनों पक्षों का फिर से यह कहना कि रजिस्ट्री कल हो जाएगी अतः लिखा-पढ़ी की क्या आवश्यकता है मानने योग्य बात नहीं है । प्रतिवादीगण का यह बयान है कि दूसरा सौदा वल्लभसिंह के घर पर हुआ लेकिन वल्लभसिंह का सौदा होना नहीं कहता बल्कि यह कहता है कि उसने पंच फैसला किया था ।

श्री मदनलाल डी. ड. 9 का बयान है कि कमल चंद ने उससे यह कहा कि दो हजार वर्ग गज जमीन 8 रुपए प्रतिवर्ग गज से बेचना तय किया है और 3,000/- रुपए साई के लिए और भाव बढ़ गया है और अधिक रुपए दिला दो तो वह रजिस्ट्री कराने को तैयार है जिस समय वह बात उनके घर में होना कहते है उस समय पक्षकारों के मध्य फौजदारी प्रकरण चल रहे थे । दोनों पक्षों ने एक दूसरे पर फौजदारी मुकदमे कर रखे थे । श्री मदनलाल ने अपने बयान के विपरीत बात कही है । पहले तो उन्होंने यह कहा कि नोटिस प्रदर्श-4 के पूर्वपक्ष का है में फौजदारी मुकदमे चले हों तो पता नहीं लेकिन आगे प्रतिपरीक्षा में यह कहा कि उनके घर पर बात 1970 में हुई थी और 1969-70 में पक्षकारों के मध्य फौजदारी मुकदमा चल रहे थे । श्री मदनलाल से यह प्रश्न पूछा गया कि वे फौजदारी मुकदमों में गंगाराम की ओर से वकील थे । यह प्रश्न पूछे जाने का आशय यह था कि गंगाराम उनका मुवक्किल था इसलिए वे गंगाराम में हित रखते हैं । श्री मदनलाल ने उत्तर में यह कहने की चेष्टा की कि वे फौजदारी मुकदमा में गंगाराम के वकील थे लेकिन दीवानी मुकदमों में कमल चंद के वकील थे लेकिन बाद में श्री मदनलाल ने यह स्वीकार किया है कि जिस दीवानी प्रकरण में कमल चंद के वकील थे वह मुकदमा गंगाराम के विरुद्ध नहीं था इसलिए सारे तथ्यों को देखने से मदनलाल का यह बयान विश्वास करने योग्य नहीं है कि कमल चंद ने उनके समक्ष यह स्वीकार किया कि दो हजार वर्ग गज पर बेचान करने को तैयार है और 3,000/- रुपए साई के प्राप्त कर लिए है । इस संबंध में यह तथ्य उल्लेखनीय है कि श्री दामोदर दास डी. डी. 8 के अनुसार वे दोनों श्री मदनलाल के वकील श्री आचार्य के कार्यालय में ही कार्य करते थे । यह संभव नहीं है कि श्री मदनलाल के समक्ष तो कमल चंद सौदा होना साई पेटे 3,000/- रुपए लेना

स्वीकार किया दामोदर दास से दोनों पक्षकार यह कहते रहे कि भाव तय नहीं हो रहा है और वे भाव तय करा दें इसलिए मदनलाल के बयान को अमान्य करने के लिए बाध्य है ।

उपरोक्त विवेचना के आधार पर मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि कमल चंद द्वारा दो हजार वर्ग गज 8 रुपए प्रतिवर्ग गज से बेचने का सौदा करना और 3,000/- रुपए साई के प्राप्त करना मनगढ़ंत बात है । प्रतिवादीगण ने जमीन मांग कर ली थी और वे येन केन प्रकारेण भूमि का कब्जा बनाए रखना चाहते है इसलिए उन्होंने यह कहानी गढ़ी । प्रतिवादीगण इतने झूठे हैं कि वे जमीन मांग कर लेने के तथ्य को अस्वीकार करते हैं । यह वादीगण का सौभाग्य है कि नोटिस प्रदर्श 4 में यह बात लिखा दी गई कि जमीन प्रतिवादीगण ने मांग कर ली है । वरना वादीगण के लिए यह सिद्ध करना बहुत ही कठिन हो जाता कि प्रतिवादीगण ने भूमि बरतने के लिए ली थी । अतः वाद पद सं. 7, प्रतिवादीगण के विरुद्ध निर्णीत किया जाता है ।"

5. इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने भी डी. बी. विशेष अपील (सिविल) सं. 2/1996 गंगाराम और एक अन्य बनाम कमल चंद के विधिक प्रतिनिधि वाले मामले को खारिज कर दिया और पूर्वोक्त वाद सं. 5/1973 में तारीख 5 फरवरी, 1980 के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध उक्त इन्ट्रा-न्यायालय अपील संख्या 20/1980 को खारिज करते हुए तारीख 26 मई, 1994 के विद्वान् एकल न्यायाधीश के निर्णय को कायम रखा । खंड न्यायपीठ के निर्णय का सुसंगत सार वर्तमान संदर्भ के लिए नीचे इस प्रकार उद्धृत है :–

"वाद को प्रत्यर्थी कमल चंद (मृतक) ने अन्य बातों के साथ उस आधार पर प्रश्नगत संपत्ति का कब्जा लेने के लिए अपीलार्थी गंगाराम के विरुद्ध फाइल किया था कि वादी, प्रतिवादी की अनुज्ञप्तिधारी के रूप में प्रश्नगत संपत्ति के कब्जे में थी ।

प्रतिवादी ने अपने बचाव में यह अभिवाक् किया है कि वादी अन्य बातों के साथ उस आधार पर प्रश्नगत संपत्ति का कब्जा लेने से विबंधित था कि प्रश्नगत संपत्ति प्रतिवादी के विक्रय के एक करार के आंशिक अनुपालन से कब्जे में थी जो वादी और प्रतिवादी के बीच अस्तित्व में आया था ।

कमल चंद द्वारा वर्ष 1950 में प्रश्नगत संपत्ति 2,500/- रुपए में

क्रय की गई एक बड़े भूखण्ड का भाग नागौर में स्थित 2000 वर्ग गज की भूमि है ।

प्रतिवादी गंगाराम के अनुसार वर्ष 1967 के अक्तूबर माह में वादी कमल चंद 8 रुपए वर्ग गज की दर से प्रतिवादी को उक्त भूखण्ड में से 2000 वर्ग गज का विक्रय करने को सहमत हुआ था और उसने अग्रिम राशि के रूप में 3,000/- रुपए संदत्त किया था । संपूर्ण भूखण्ड 8352.25 वर्ग गज का था ।

दूसरे अन्य विवाद्यकों में से, विवाद्यक सं. 7 प्रतिवादी के अभिवचनों पर विरचित किया गया था कि क्या प्रतिवादियों ने वर्ष 1967 के अक्तूबर माह में 8 रुपए वर्ग गज की दर से वादी की 2752 वर्ग गज भूमि पलासूध भूमि में से 2000 वर्ग गज वादियों से क्रय किया था और उसके बदले में 3,000/- रुपए की अग्रिम राशि संदत्त की है, यदि ऐसा है, तो वाद पर इसका क्या प्रभाव हुआ है ।

विद्वान् विचारण न्यायालय ने विवाद्यक सं. 7 को प्रतिवादियों के विरुद्ध अभिनिर्धारित करते हुए यह विनिश्चय किया है कि प्रतिवादी द्वारा अपने पक्ष के विक्रय करने का कथित करार साबित नहीं किया गया है । परिणामस्वरूप, वादी का वाद हक के आधार पर डिक्री किया जाता है जो प्रतिवादी की स्वयं की स्वीकृति से साबित होता है । कब्जे की डिक्री के साथ तीन वर्षों के लिए अंतःकालीन लाभ की डिक्री भी वाद के फाइल करने तक पारित की गई ।

पूर्वोक्त निर्णय और आदेश से व्यथित होकर, प्रतिवादी ने सिविल प्रथम अपील सं. 20/80 फाइल की थी ।

* * * * *

धारा 53क के उपबंध इस संबंध में बिल्कुल स्पष्ट हैं । इस वाक्य से यह स्पष्ट हो जाता है कि जहां कि कोई व्यक्ति किसी स्थावर संपत्ति को प्रतिफलार्थ अंतरित करने के लिए अपने द्वारा या अपनी ओर से हस्ताक्षरित लेखबद्ध ऐसी संविदा जिससे उस अंतरण को गठित करने के लिए आवश्यक निबंधन युक्तियुक्त निश्चय के साथ अभिनिश्चित किए जा सकते हैं ।

इस प्रकार, संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53क के उपबंधों का स्पष्ट परिशीलन करने से यह स्पष्ट होता है कि

अंतरणकर्ता द्वारा या उसकी ओर से हस्ताक्षरित लेखबद्ध ऐसी संविदा जिसे गठित अंतरण करने के लिए आवश्यक निबंधन अभिनिश्चित किए जा सकते हैं, कब्जे में रहने वाला कोई व्यक्ति संविदा के भागिक सिद्धांत के आधार पर अपने कब्जे की प्रतिरक्षा उस व्यक्ति के विरुद्ध कर सकता है जो ऐसी स्थावर संपत्ति में हक धारित करता है । पक्षकारों में से किसी के भी द्वारा ऐसा कोई मामला स्थापित नहीं किया गया है कि अभिकथित अंतरणकर्ता द्वारा कोई हस्ताक्षरित लेखबद्ध किया गया था और प्रतिवादी द्वारा मात्र मौखिक करार को साबित करने की ईप्सा की गई है अतएव, धारा 53क का प्रश्न ही नहीं उठता है । पक्षकारों के बीच मौखिक करार के अस्तित्व के बारे में कोई विवाद्यक नहीं है जिसे उस वाद में पक्षकारों के बीच विनिश्चित किया जाना अनिवार्य था जिससे यह अपील उद्भूत हुई है । तथ्य यह है कि अपीलार्थी की प्रतिरक्षा में, वाद भूमि में वादी का हक अस्तित्व में तब तक बना रहता है जब तक कि उसके साथ अधिकथित करार है जो विवक्षित तौर पर स्वीकृत है । अतएव, यदि उसकी प्रतिरक्षा करने में धारा 53क प्रतिरक्षा करने में असफल रहता है तो उसे मौखिक करार के अस्तित्व में रहते हुए भी उसे कब्जे की डिक्री से इनकार नहीं किया जा सकता है । वस्तुतः विद्वान् एकल न्यायाधीश ने अपीलार्थी द्वारा की गई चुनौतियों पर विचार किए बिना मात्र इस सिद्धांत पर ही अपने विनिश्चय को आधारित किया है । अन्य विवाद्यकों के निष्कर्ष पर इस विनिश्चय को किए जाने के लिए आवश्यक नहीं है ।

वर्तमान परिस्थितियों में, जैसा कि हमने उल्लेख किया है, वर्तमान कार्यवाहियों में प्रतिवादी अपीलार्थी ने अभिकथित मौखिक करार को लागू कराने के अपने उपचार के लिए विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री की ईप्सा की है और पूर्ववर्ती गठित संस्थित वाद में मौखिक करार के अस्तित्व के बारे में विवाद्यक के लंबित रहने का कोई अभिवाक् नहीं किया है इस बात की ईप्सा करते हुए कि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 10 के अधीन पश्चात्वर्ती वाद पर रोक लगा दी जाए ।

वर्तमान परिस्थितियों में, हमारी यह राय है कि जहां तक विद्वान् एकल विचारण न्यायाधीश की डिक्री का संबंध है, जैसा कि विद्वान् एकल न्यायाधीश ने धारा 53क के अधीन प्रतिवादी के अभिवाक् को

नकारते हुए, हक के आधार पर कब्जे के लिए वादी-प्रत्यर्थी के पक्ष में अभिपुष्टि किया था जिसे लिखित में करार नहीं पाया गया है, इसलिए, इसमें कोई हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है ।

विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा मौखिक करार के विद्यमान या अविद्यमान होने के बारे में अभिलिखित कोई निष्कर्ष स्वीकृत तथ्यों पर इस अपील या वाद का विनिश्चय करने के प्रयोजन के लिए पूर्णतया अनावश्यक होने के नाते वाद का विनिश्चय करने के लिए आवश्यक नहीं होना अभिनिर्धारित किया जाता है और विनिर्दिष्ट पालन के लिए पश्चात्वर्ती वाद में पक्षकारों को अपने उपचारों के लिए सबूत के भार के रूप में आबद्धकर नहीं होंगे । यह वाद, उपलब्ध सामग्री के आधार पर स्वतंत्र रूप से विनिश्चय किया जाता है ।

इन परिस्थितियों में, अपील खारिज की जाती है ।

खर्चों के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

हस्ताक्षर
(आर. एस. चौहान), न्यायमूर्ति

हस्ताक्षर
(राजेशबलिया), न्यायमूर्ति"

6. इसलिए, अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल श्री डी. आर. भंडारी ने यह दलील दी है कि ऐसे मामलों में, विद्वान् विचारण न्यायालय ने वादी गंगाराम और जगदीश के पक्ष में विनिर्दिष्ट पालन का विवेकीय अनुतोष अनुचित तौर पर मंजूर किया और इसलिए, प्रतिवादी, कमल चंद की वर्तमान प्रथम अपील मंजूर किए जाने योग्य है ।

7. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी/वादी के विद्वान् काउंसेल श्री संदीप भंडावत ने यह तर्क दिया है कि मौखिक करार का मध्यस्थ, श्री दामोदर आचार्य और श्री वल्लभ लोढा के कथन द्वारा विधिवत् रूप से समर्थन होता और इसलिए, मौखिक करार के अस्तित्व को ध्यान में रखते हुए, वादी द्वारा भागतः संदाय पहले ही किया जा चुका है और संविदा के शेष भाग का पालन करने की अपनी तत्परता और रजामंदी स्थापित कर चुका है । विद्वान् विचारण न्यायालय विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री पारित करने में न्यायानुमत था, जिसमें वर्तमान अपील में, इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है । उन्होंने यह भी निवेदन किया है कि प्रश्नगत वाद संपत्ति पर वादियों का लम्बे समय से कब्जा है और प्रतिवादी ने विक्रेता के अतिरिक्त प्रतिकर का संदाय करने के लिए भी रजामंद है और इन परिस्थितियों में, प्रतिवादियों/अपीलार्थियों की वर्तमान अपील खारिज किए जाने योग्य है ।

8. मैंने पक्षकारों के काउंसेलों को विस्तार से सुना और अभिलेख का

परिशीलन किया है ।

9. इस न्यायालय का यह विचारणीय मत है कि अपीलार्थियों/प्रतिवादियों, स्वर्गीय श्री कमल चंद के विधिक प्रतिनिधियों की वर्तमान प्रथम अपील मंजूर किए जाने योग्य है और विनिर्दिष्ट पालन की आक्षेपित डिक्री अपास्त किए जाने योग्य है ।

10. एक बार जब विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष यह साक्ष्य लाया गया है कि स्वयं संपत्ति का अंतरण करने के लिए करार के अस्तित्व के बारे में पक्षकारों के बीच गंभीर विवाद था, वह भी एक मौखिक करार, तो विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री जो निर्विवाद रूप से विद्वान् विचारण न्यायालय के विवेकाधिकार के निष्पक्ष कार्यक्षेत्र के दायरे में निहित था, को निचले न्यायालय द्वारा मंजूर नहीं किया जाना चाहिए था । मात्र तथ्य यह है कि स्वयं पक्षकारों के बीच करार के संबंध में, दो स्वतंत्र साक्षी और शहर के प्रतिष्ठित दो दखलंदाजों के बयान से पर्याप्त रूप से यह दर्शित होता है कि विद्यमान पक्षकारों के बीच में लेखबद्ध कोई विधिमान्य करार उपलब्ध नहीं था । प्रश्नगत भूमि निर्विवाद रूप से प्रतिवादी कमल चंद की थी और अभिकथित तौर पर सहमत 14,500/- रुपए के विरुद्ध मात्र एक छोटी राशि 3,000/- रुपए ही प्रतिवादियों को अग्रिम तौर पर दी गई थी और जिसे वादियों द्वारा कभी भी संदत्त या दिया नहीं गया । प्रथमदृष्ट्या 8 रुपए प्रति वर्ग गज की दर काफी कम थी और भूमि के बाजार मूल्य में बढ़ोतरी काफी समय बीतने के पश्चात् मूल्य में विचारणीय स्तर तक वृद्धि स्वाभाविक थी । यदि पक्षकार इस दर पर वाद संपत्ति का अंतरण करने के लिए और उसके रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख को निष्पादित करते हुए भूमि का अंतरण करने के लिए संपूर्ण प्रतिफल लेने से कोई चीज नहीं रोकती है । मध्यस्थ, श्री दामोदर दास आचार्य, अधिवक्ता का भी कथन, जो एक केबिनेट मंत्री भी थे, से यह दर्शित होता है कि मौखिक करार को कभी भी अंतिम रूप नहीं दिया गया था क्योंकि दर या मूल्य के बारे में विवाद था ।

11. उपर्युक्त वर्णित तथ्यों और परिस्थितियों, विशेष रूप से, वर्तमान अपीलार्थियों/प्रतिवादियों अर्थात् कमल चंद के विधिक प्रतिनिधियों के पक्ष में कब्जे के लिए वाद की डिक्री किया जाना, से यह स्पष्ट रूप से सिद्ध होता है कि वे उक्त भूमि के स्वामित्व और हक के लिए पूरी शक्ति से नहीं लड़ रहे थे अपितु वे किसी भी तरह उसको पाना चाहते थे और यहां तक कि उन्होंने अपने पक्ष में, इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ से सक्षम न्यायालय की डिक्री को भी कायम करवा लिया है । इस मुकदमे के लंबित रहने के तथ्य, विनिर्दिष्ट पालन के लिए वर्तमान वाद में विद्वान् विचारण न्यायालय

के समक्ष बहुत ही अच्छे से रखे गए थे और विशिष्ट रूप से उपर्युक्त उद्धृत विवाद्यक संख्या 7-ए के निष्कर्ष, प्रत्यर्थियों/वादियों, गंगाराम और जगदीश के विरुद्ध अभिलिखित किए गए थे जो सुनिश्चित रूप से यह सिद्ध करता है कि इसमें उनके पक्ष में ऐसी भूमि के अंतरण के लिए वादियों के पक्ष में ऐसा कोई मौखिक करार नहीं हुआ था । इन परिस्थितियों में, प्रतिवादियों/अपीलार्थियों के पक्ष में कब्जे की प्रतिकूल डिक्री में संपत्ति का अंतरण करने के लिए विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री मंजूर करना, स्पष्टतः, इस संबंध में विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा विवेक का प्रयोग निष्पक्ष प्रयोग करना नहीं कहा जा सकता है और वह भी इस कमजोर आधार पर कि डिक्री के विरुद्ध प्रतिवादियों की अपील उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित थी, जिसे अंततः विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा और इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा भी खारिज कर दिया गया था ।

12. इस प्रकार, इस न्यायालय की यह स्पष्ट राय यह है कि वर्तमान मामले में, विनिर्दिष्ट पालन के वाद खारिज किए जाने योग्य है और वादियों, गंगाराम और जगदीश के पक्ष ऐसा कोई अनुतोष मंजूर नहीं किया जा सकता है । इसलिए, प्रतिवादियों/अपीलार्थियों की अपील सफल होती है और तद्नुसार, इसे मंजूर किया जाता है और वाद संख्या 1/1974 में तारीख 18 सितम्बर, 1987 को पारित आक्षेपित निर्णय और डिक्री को अपास्त किया जाता है, प्रतिवादियों/प्रत्यर्थियों को यह निदेश दिया जाता है कि वे प्रतिवादियों को उनके द्वारा संदत्त अग्रिम धनराशि 3,000/- रुपए वापस करने के अध्यधीन प्रतिवादियों/अपीलार्थियों को वाद भूमि का कब्जा वापस सौंप दें । ऐसी 3,000/- रुपए की धनराशि, आज की तारीख से एक मास की अवधि के भीतर प्रतिवादियों/अपीलार्थियों द्वारा विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष जमा किया जाए और प्रश्नगत भूमि का कब्जा, आंज से तीन मास की अवधि के भीतर प्रतिवादियों/प्रत्यर्थियों को सौंपा जाए । यदि प्रत्यर्थी/वादी तीन मास की अवधि के भीतर प्रश्नगत भूमि का कब्जा सौंपने में असफल रहते हैं तो वे प्रतिवादियों/अपीलार्थियों को 10,000/- रुपए प्रतिमास की दर से अंतःकालीन लाभ का संदाय करेंगे और अपीलार्थी, इस न्यायालय की अधिकारिता में, त्वरित निष्पादन करने और अवमानना का अवलम्ब लेने के हकदार होंगे । खर्चों के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता है । इस निर्णय की एक प्रति संबंधित पक्षकारों और निचले न्यायालय को तुरन्त भेजी जाए ।

अपील मंजूर की गई ।

मही./क.

एच. डी. एफ. सी. ई. आर. जी. ओ. जनरल इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड

बनाम

श्रीमती नीमाजी और अन्य

तारीख 3 फरवरी, 2017

न्यायमूर्ति गोवर्धन बरधर

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 163क और 173 – दुर्घटना – प्रतिकर के लिए दावा – बीमा कंपनी द्वारा अपने दायित्व से इनकार करना – जहां बीमा कंपनी, बीमाकृत के किसी दोष के कारण घटित दुर्घटना में प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से इनकार करती है तथापि, यदि उसे प्रतिकर संदाय करने के लिए दायी ठहराया जाता है और उसके द्वारा प्रतिकर संदत्त कर दिया जाता है तो वह बीमा पालिसी की शर्तों और निबंधनों के भंग के आधार पर बीमाकृत से ऐसी प्रतिकर धनराशि वसूल सकती है ।

वर्तमान मामले में, तथ्य इस प्रकार हैं कि तारीख 9 जून, 2012 को, जब मृतक जेपू खान रमजान की धानी से घर वापस आ रहा था तो लगभग दोपहर 1.15 बजे एक जीप जिसका नं. आर जे 19 टी ए 0433 के चालक ने उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाते हुए जेपू खान को टक्कर मारी और जिसके परिणामस्वरूप उसे गंभीर क्षतियां पहुंचीं, उसकी घटना स्थल पर ही मृत्यु हो गई । दावा याचिका के अनुसार, मृतक की आयु 19 वर्ष थी और वे 9,000/- रुपए प्रतिमास कमाता था । इसलिए, दावा याचिका में यह अनुरोध किया है कि दावेदारों के पक्ष में 48,75,000/- रुपए की धनराशि प्रतिकर के रूप में अधिनिर्णीत की जा सकती है । गैर-आवेदक सं. 1 और 2, स्वामी/बीमाकृत तथा यान के चालक ने दावा याचिका का प्रत्युत्तर फाइल किया और यह अभिकथन किया है दुर्घटना मृतक की उपेक्षा के कारण घटी थी और चूंकि यान बीमा कंपनी से बीमाकृत था, प्रतिकर संदाय करने का दायित्व बीमा कंपनी के ऊपर था । अपीलार्थी बीमा कंपनी ने अपना प्रत्युत्तर फाइल किया और यह प्राथमिक आपत्ति उठाई कि यान सं. आर जे 19 टी ए 0433 दुर्घटना के समय पर बीमा कंपनी से बीमाकृत नहीं था चूंकि पालिसी संख्या 23132002275427800000 तारीख

12 जून, 2012 से 11 जून, 2013 तक विधिमान्य थी जबकि दुर्घटना तारीख 9 जून, 2012 अर्थात् बीमा से पूर्व घटी थी और इसलिए, बीमा कंपनी प्रतिकर का संदाय करने के लिए दायी नहीं है । विद्वान् न्यायाधीश, मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण ने मामले के संपूर्ण तथ्यों को विचार में लेने के पश्चात् दावेदारों के पक्ष में विवाद्यक सं. 1 और 2 का विनिश्चय किया और मृतक की मासिक आय 3,822/- रुपए लेते हुए दावेदारों को 6,94,272/- रुपए की राशि के रूप में प्रतिकर अधिनिर्णीत किया और बीमा कंपनी, स्वामी और चालक को संयुक्त रूप से और व्यक्तिगत रूप से दायी ठहराया है । अपीलार्थी बीमा कंपनी द्वारा निर्णय से व्यथित होकर, अपील फाइल की गई, अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह प्रकट होता है कि दुर्घटना तारीख 9 जून, 2012 को घटी थी जिसके परिणामस्वरूप जेपू खान को गंभीर क्षतियां पहुंचीं जबकि प्रश्नगत यान का बीमा था । तथापि, बीमा कंपनी ने मामला इस प्रकार स्थापित किया है कि स्वामी द्वारा प्रस्तुत की गई बीमा पालिसी (प्रदर्श 11) जाली थी और बीमा पालिसी की सत्य प्रति अपीलार्थी कंपनी की ओर से पालिसी सं. 23132002275427800000 को प्रदर्श ए/1 के रूप में प्रस्तुत की गई थी जिसके अनुसार, यान तारीख 12 जून, 2012 से 11 जून, 2013 तक की अवधि के लिए बीमाकृत था जबकि दुर्घटना तारीख 9 जून, 2012 को घटी थी । इस प्रकार, इस तथ्य को साबित करने का भार बीमा कंपनी का था कि स्वामी द्वारा प्रस्तुत बीमा पालिसी जाली और बनावटी है और प्रश्नगत यान वस्तुतः तारीख 12 जून, 2012 से 11 जून, 2013 तक की अवधि के लिए बीमाकृत था । अपीलार्थी बीमा कंपनी ने अपनी दलील के समर्थन में एन.ए.डब्ल्यू./1 पंकज शर्मा को साक्ष्य में प्रस्तुत किया जिसमें यह कथन किया गया है कि स्वामी द्वारा प्रस्तुत बीमा पालिसी जाली है और इसके संबंध में शिकायत पुलिस अधीक्षक, जैसलमेर के समक्ष दर्ज की गई थी । तथापि, उक्त साक्षी ने सुस्पष्टतः यह कथन किया है कि इसके संबंध में शिकायत तारीख 15 सितम्बर, 2012 से 12 अप्रैल, 2016 तक चार वर्षों से फाइल नहीं हुई थी । उक्त साक्षी ने उस एजेंट के संबंध में कोई भी जानकारी होने से इनकार किया है जिसने उक्त बीमा पालिसी जारी की थी । उक्त साक्षी ने इन तथ्यों के संबंध में कोई भी जानकारी होने से इनकार किया है कि क्या किस्त के रूप में धनराशि चैक या नकद में प्राप्त की गई थी और वह कंपनी द्वारा किस्त प्राप्ति की रसीद के संबंध में कोई भी अभिलेख प्रस्तुत नहीं कर सका । यह ध्यान देने योग्य बात है कि प्रस्तुत

मामले में बीमा कंपनी ने बीमा पालिसी प्रदर्श ए/1 के माध्यम से यान का कवरेज स्वीकृत किया है किन्तु इस संबंध में कवरेज की अवधि से इनकार किया है जिस बीमा पालिसी प्रदर्श ए/1 के अधीन स्वामी/दावेदार द्वारा दावा याचिका फाइल किया गया है । दुर्घटना तारीख 9 जून, 2012 को घटी थी और दावा याचिका वर्ष 2012 से अधिकरण के समक्ष लंबित थी किन्तु बीमा कंपनी ने जाली और बनावटी पालिसी के लिए स्वामी के विरुद्ध कोई कार्यवाहियां नहीं की थीं और वर्ष 2016 में ही एक शिकायत पुलिस अधीक्षक, जैसलमेर को भेजी गई थी । अपीलार्थी बीमा कंपनी ने इसे साबित करने के लिए कंपनी द्वारा प्रस्तुत पालिसी असली है और उसे तारीख 12 जून, 2012 से 11 जून, 2013 तक की अवधि के लिए जारी किया था, प्रदर्श ए/1 ही है किस्त प्राप्ति की रसीद, प्रस्ताव फार्म, अभिकर्ता का नाम और कोड इत्यादि अभिलेख पर प्रस्तुत नहीं कर सकी । तथापि, जैसाकि विद्वान् न्यायाधीश, मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण मामले में उल्लिखित किया गया है, कि अपीलार्थी बीमा कंपनी इसे साबित करने में असफल रही है । जहां तक अपीलार्थी बीमा कंपनी के विद्वान् काउंसेल इस सबीना आकाई वाले मामले का अवलंब लिए जाने का संबंध है, वहां उस तारीख और समय से संबंधित है जिससे पालिसी प्रभावी होती है । माननीय उच्चतम न्यायालय ने उक्त मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि जब विशिष्ट समय और तारीख का उल्लेख होता है तो बीमा पालिसी उस समय से प्रभावी हो जाती है और न कि उस समय के पूर्व से । इस मामले में, प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी बीमा कंपनी द्वारा जारी उस बीमा पालिसी को प्रस्तुत किया था जो दुर्घटना की तारीख को प्रभावी थी और अपीलार्थी बीमा कंपनी यह साबित नहीं कर सकी कि उक्त बीमा पालिसी जाली या बनावटी थी और इसलिए, मामले में अपीलार्थी के काउंसेल द्वारा लिए गए मामले का अवलंब, वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में लागू नहीं होता है । (पैरा 11, 12, 13 और 14)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2007] (2007) 7 एस. सी. सी. 786 :
नेशनल बीमा कंपनी लि. बनाम **सबीना आकाई और अन्य** । 8

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2016 की एकलपीठ सिविल प्रकीर्ण अपील सं. 2623.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से श्री जगदीश व्यास

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री एच. एस. जोधा, पवन ओझा और शेर सिंह राठौर

न्यायमूर्ति गोवर्धन बरधर – वर्तमान अपील अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा दावा मामला संख्या 749/2012 में विद्वान् न्यायाधीश, मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण-1, जोधपुर द्वारा तारीख 22 अप्रैल, 2000 को पारित निर्णय और अधिनिर्णय के विरुद्ध मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन फाइल की गई है जिसके द्वारा विद्वान् न्यायाधीश, मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण ने मामलों में दावेदार-प्रत्यर्थियों को 6,94,272/- रुपए की धनराशि प्रतिकर के रूप में अधिनिर्णीत की है ।

2. संक्षिप्त में, मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि एक दावा याचिका मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण, जोधपुर के समक्ष प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 द्वारा इसमें यह कथन करते हुए फाइल की गई है कि तारीख 9 जून, 2012 को, जब मृतक जेपू खान रमजान की धानी से घर वापस आ रहा था तो लगभग दोपहर 1.15 बजे एक जीप जिसका नं. आर जे 19 टी ए 0433 के चालक ने उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाते हुए जेपू खान को टक्कर मारी और जिसके परिणामस्वरूप उसे गंभीर क्षतियां पहुंचीं, उसकी घटना स्थल पर ही मृत्यु हो गई । दावा याचिका के अनुसार, मृतक की आयु 19 वर्ष थी और वे 9,000/- रुपए प्रतिमास कमाता था । इसलिए, दावा याचिका में यह अनुरोध किया है कि दावेदारों के पक्ष में 48,75,000/- रुपए की धनराशि प्रतिकर के रूप में अधिनिर्णीत की जा सकती है ।

3. गैर-आवेदक सं. 1 और 2, स्वामी/बीमाकृत तथा यान के चालक ने दावा याचिका का प्रत्युत्तर फाइल किया और यह अभिकथन किया है दुर्घटना मृतक की उपेक्षा के कारण घटी थी और चूंकि यान बीमा कंपनी से बीमाकृत था, प्रतिकर संदाय करने का दायित्व बीमा कंपनी के ऊपर था । अपीलार्थी बीमा कंपनी ने अपना प्रत्युत्तर फाइल किया और यह प्राथमिक आपत्ति उठाई कि यान सं. आर जे 19 टी ए 0433 दुर्घटना के समय पर बीमा कंपनी से बीमाकृत नहीं था चूंकि पालिसी संख्या 23132002275427800000 तारीख 12 जून, 2012 से 11 जून, 2013 तक विधिमान्य थी जबकि दुर्घटना तारीख 9 जून, 2012 अर्थात् बीमा से पूर्व घटी थी और इसलिए, बीमा कंपनी प्रतिकर का संदाय करने के लिए

दायी नहीं है ।

4. अभिवचनों के आधार पर, विद्वान् न्यायाधीश, मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण ने मामले का विचारण करने के लिए निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए :–

> "1. क्या तारीख 9 जून, 2012 को लगभग दोपहर 1.15 बजे फलसूंद से भर्जगढ़ से आते हुए लाडू खान की धानी के नजदीक रोड पर, यान सं. आर जे 19 टी ए 0433 के गैर आवेदक सं. 1 चालक के द्वारा यान को उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक तरीके से चलाते हुए दुर्घटना घटी थी जिसके कारण जेपू खान को गंभीर क्षतियां पहुंचीं ?
>
> 2. क्या गैर-आवेदकों को, दावेदारों को प्रतिकर का संदाय करने के दायित्व से दोषमुक्त किया है ?
>
> 3. क्या दावेदार दावा याचिका में दावा किए गए प्रतिकर को पाने के हकदार हैं, यदि हां, तो किससे और कितना तथा दावेदारों को किस अनुपात में प्रतिकर की धनराशि प्राप्त करने का हकदार होगा ?"

5. दावा याचिका के समर्थन में, दावेदारों ने लतीफ खान और लाधे खान को तथा दस्तावेज प्रदर्श 12 पेश किए थे ।

6. विद्वान् न्यायाधीश, मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण ने मामले के संपूर्ण तथ्यों को विचार में लेने के पश्चात् दावेदारों के पक्ष में विवाद्यक सं. 1 और 2 का विनिश्चय किया और मृतक की मासिक आय 3,822/- रुपए मानते हुए दावेदारों को प्रतिकर के रूप में 6,94,272/- रुपए की राशि अधिनिर्णीत किया और बीमा कंपनी, स्वामी और चालक को संयुक्त रूप से और व्यक्तिगत रूप से दायी ठहराया ।

7. इस अपील में, बीमा कंपनी ने मुख्य रूप से इस आधार पर अधिनिर्णय को चुनौती दी है कि दावेदारों ने प्रदर्श 11 के रूप में बीमा पालिसी की प्रति प्रस्तुत की थी जिसमें जीप सं. आर जे 19 टी ए 0433 के संबंध में बीमा अवधि तारीख 25 मई, 2012 से 24 मई, 2013 दर्शाई गई है जबकि उक्त यान तारीख 12 जून, 2012 से 11 जून, 2013 तक की अवधि के लिए अपीलार्थी बीमा कंपनी से बीमाकृत था और इस प्रकार, यान दुर्घटना की तारीख अर्थात् 9 जून, 2012 को अपीलार्थी बीमा कंपनी से बीमाकृत नहीं था । अपीलार्थी बीमा कंपनी की ओर से यह भी निवेदन किया गया है कि दावेदारों द्वारा पेश की गई बीमा पालिसी (प्रदर्श 11) जाली है और बीमा

पालिसी की सही प्रति प्रदर्श ए/1 के रूप में अपीलार्थी बीमा कंपनी की ओर से साक्ष्य के रूप में पेश की गई है जिसके अनुसार, यान तारीख 12 जून, 2012 से 11 जून, 2013 तक की अवधि के लिए बीमाकृत था ।

8. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह तर्क दिया है कि विद्वान् न्यायाधीश ने अपीलार्थी कंपनी की ओर से पेश किए गए साक्ष्य पर विश्वास नहीं किया और दावेदारों की ओर से प्रस्तुत की गई पालिसी पर भरोसा किया है । विद्वान् काउंसेल ने यह भी तर्क दिया है कि बीमा पालिसी कंप्यूटर के माध्यम से तैयार की जाती है और इसमें जोड़-तोड़ की कोई गुंजाइश नहीं होती है जबकि दावेदारों द्वारा प्रस्तुत की गई पालिसी से यह प्रतीत होता है उसमें बीमा कवरेज के भीतर दुर्घटना की तारीख को लाने के लिए हेर-फेर किया गया है । अपीलार्थी बीमा कंपनी के विद्वान् काउंसेल ने यह भी तर्क दिया है कि यान के स्वामी ने अधिकरण के समक्ष स्वयं को प्रतिनिधित्व किया किन्तु वह साक्षी कठघरे में उपस्थित होने या उक्त बीमा पालिसी की असली रसीद पेश करने में असफल रहा और इसलिए, स्वामी के विरुद्ध प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए । यह निवेदन किया है कि चूंकि दुर्घटना की तारीख को प्रश्नगत यान के संबंध में कोई बीमा पालिसी अस्तित्व में नहीं थी, इसलिए, अपीलार्थी बीमा कंपनी प्रतिकर संदाय करने के लिए दायी नहीं है । अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने माननीय उच्चतम न्यायालय ने **नेशनल बीमा कंपनी लि.** बनाम **सबीना आकाई और अन्य**[1] वाले मामले का अवलंब लिया है ।

9. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी दावेदारों के विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया है कि अपीलार्थी बीमा कंपनी ने प्रतिकर के संदाय के दायित्व से बचने के उद्देश्य से मिथ्या और जाली बीमा पालिसी तैयार की है जिसको प्रदर्श ए/1 के रूप में प्रस्तुत करके यह दर्शाया है कि यान तारीख 25 मई, 2012 से 24 मई, 2013 तक की अवधि के लिए बीमाकृत था । यह भी तर्क दिया है कि दावेदार द्वारा प्रस्तुत की गई बीमा पालिसी के संबंध में वर्ष 2016 में की गई शिकायत मिथ्या और जाली थी । इसमें प्रबलता से यह तर्क दिया गया है कि विद्वान् अधिकरण ने सही प्रकार से यह अवलोकन किया है कि बीमा कंपनी यह साबित नहीं कर सकी कि दावेदारों द्वारा पेश की गई बीमा पालिसी जाली या बनावटी है क्योंकि बीमा कंपनी ने न तो कोई विभागीय जांच कराई न ही स्वामी के विरुद्ध कोई सिविल कार्यवाहियां आरंभ की थीं ।

---

[1] (2007) 7 एस. सी. सी. 786.

10. पक्षकारों के काउंसेलों को सुना । मैंने विद्वान् न्यायाधीश, मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण मामले, जोधपुर द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय/अधिनिर्णय का परिशीलन किया है ।

11. इसमें तथ्यों और निर्विवाद से यह प्रकट होता है कि दुर्घटना तारीख 9 जून, 2012 को घटी थी जिसके परिणामस्वरूप जेपू खान को गंभीर क्षतियां पहुंचीं जबकि प्रश्नगत यान का बीमा था । तथापि, बीमा कंपनी ने मामला इस प्रकार स्थापित किया है कि स्वामी द्वारा प्रस्तुत की गई बीमा पालिसी (प्रदर्श 11) जाली थी और बीमा पालिसी की सत्य प्रति अपीलार्थी कंपनी की ओर से पालिसी सं. 23132002275427800000 को प्रदर्श ए/1 के रूप में प्रस्तुत की गई थी जिसके अनुसार, यान तारीख 12 जून, 2012 से 11 जून, 2013 तक की अवधि के लिए बीमाकृत था जबकि दुर्घटना तारीख 9 जून, 2012 को घटी थी । इस प्रकार, इस तथ्य को साबित करने का भार बीमा कंपनी का था कि स्वामी द्वारा प्रस्तुत बीमा पालिसी जाली और बनावटी है और प्रश्नगत यान वस्तुतः तारीख 12 जून, 2012 से 11 जून, 2013 तक की अवधि के लिए बीमाकृत था । अपीलार्थी बीमा कंपनी ने अपनी दलील के समर्थन में एन.ए.डब्ल्यू./1 पंकज शर्मा को साक्ष्य में प्रस्तुत किया जिसमें यह कथन किया गया है कि स्वामी द्वारा प्रस्तुत बीमा पालिसी जाली है और इसके संबंध में शिकायत पुलिस अधीक्षक, जैसलमेर के समक्ष दर्ज की गई थी । तथापि, उक्त साक्षी ने सुस्पष्टतः यह कथन किया है कि इसके संबंध में शिकायत तारीख 15 सितम्बर, 2012 से 12 अप्रैल, 2016 तक चार वर्षों से फाइल नहीं हुई थी । उक्त साक्षी ने उस एजेंट के संबंध में कोई भी जानकारी होने से इनकार किया है जिसने उक्त बीमा पालिसी जारी की थी । उक्त साक्षी ने इन तथ्यों के संबंध में कोई भी जानकारी होने से इनकार किया है कि क्या किस्त के रूप में धनराशि चैक या नकद में प्राप्त की गई थी और वह कंपनी द्वारा किस्त प्राप्ति की रसीद के संबंध में कोई भी अभिलेख प्रस्तुत नहीं कर सका ।

12. यह ध्यान देने योग्य बात है कि प्रस्तुत मामले में बीमा कंपनी ने बीमा पालिसी प्रदर्श ए/1 के माध्यम से यान का कवरेज स्वीकृत किया है किन्तु इस संबंध में कवरेज की अवधि से इनकार किया है जिस बीमा पालिसी प्रदर्श ए/1 के अधीन स्वामी/दावेदार द्वारा दावा याचिका फाइल किया गया है ।

13. दुर्घटना तारीख 9 जून, 2012 को घटी थी और दावा याचिका

वर्ष 2012 से अधिकरण के समक्ष लंबित थी किन्तु बीमा कंपनी ने जाली और बनावटी पालिसी के लिए स्वामी के विरुद्ध कोई कार्यवाहियां नहीं की थीं और वर्ष 2016 में ही एक शिकायत पुलिस अधीक्षक, जैसलमेर को भेजी गई थी । अपीलार्थी बीमा कंपनी ने इसे साबित करने के लिए कंपनी द्वारा प्रस्तुत पालिसी असली है और उसे तारीख 12 जून, 2012 से 11 जून, 2013 तक की अवधि के लिए जारी किया था, प्रदर्श ए/1 ही है किस्त प्राप्ति की रसीद, प्रस्ताव फार्म, अभिकर्ता का नाम और कोड इत्यादि अभिलेख पर प्रस्तुत नहीं कर सकी । तथापि, जैसाकि विद्वान् न्यायाधीश, मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण मामले में उल्लिखित किया गया है, कि अपीलार्थी बीमा कंपनी इसे साबित करने में असफल रही है ।

14. जहां तक अपीलार्थी बीमा कंपनी के विद्वान् काउंसेल द्वारा इस **सबीना आकाई** (उपर्युक्त) वाले मामले का अवलंब लिए जाने का संबंध है, वहां उस तारीख और समय से संबंधित है जिससे पालिसी प्रभावी होती है । माननीय उच्चतम न्यायालय ने उक्त मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि जब विशिष्ट समय और तारीख का उल्लेख होता है तो बीमा पालिसी उस समय से प्रभावी हो जाती है और न कि उस समय के पूर्व से । इस मामले में, प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी बीमा कंपनी द्वारा जारी उस बीमा पालिसी को प्रस्तुत किया था जो दुर्घटना की तारीख को प्रभावी थी और अपीलार्थी बीमा कंपनी यह साबित नहीं कर सकी कि उक्त बीमा पालिसी जाली या बनावटी थी और इसलिए, मामले में अपीलार्थी के काउंसेल द्वारा लिए गए मामले का अवलंब, वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में लागू नहीं होता है ।

15. उपर्युक्त चर्चा का निष्कर्ष यह है कि प्रतिकर अधिनिर्णीत करने के लिए, विद्वान् न्यायाधीश, मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण मामले द्वारा अभिलिखित यह निष्कर्ष कि बीमा कंपनी संयुक्त रूप से और व्यक्तिगत रूप से दायी है, अभिलेख पर के साक्ष्य के उचित मूल्यांकन पर आधारित है । अस्तित्वान और विधिमान्य बीमा संविदा को दृष्टिगत करते हुए, बीमाकृत की क्षतिपूर्ति करने के लिए अपीलार्थी दायित्व के अधीन है । परिणामस्वरूप, एतद्द्वारा यह अपील खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

मही./क.

बिधि चन्द

बनाम

जगदीश चन्द और अन्य

तारीख 2 मई, 2016

न्यायमूर्ति राजीव शर्मा

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 100 [सपठित हिमाचल प्रदेश जोत (चकबन्दी और खण्डकरण का निवारण) अधिनियम, 1971 की धारा 54] – द्वितीय अपील – विवादित भूमि की अदला-बदली – प्रतिकूल कब्जे द्वारा हक प्राप्त करने का दावा करना – दस्तावेजी और मौखिक साक्ष्यों द्वारा साबित नहीं होना – यदि अभिलेख पर के दस्तावेजी और मौखिक साक्ष्यों से यह साबित नहीं होता है कि विवादित भूमि की अदला-बदली हुई थी और निरन्तर तथा निर्बाध कब्जे से प्रतिकूल कब्जे के द्वारा हक अर्जित हो गया है तो ऐसा हक नामंजूर होने योग्य होगा और इसके अधीन कब्जा अवैध और अविधिमान्य होगा ।

वर्तमान मामले में, प्रत्यर्थी-अपीलार्थी ने अपीलार्थी-प्रतिवादी अर्थात् बिधि चन्द और अन्यों तथा प्रोफार्मा-प्रतिवादियों के विरुद्ध घोषणा इत्यादि करने के लिए एक वाद फाइल किया था । वादपत्र में किए गए प्रकथनों के अनुसार, सिविल वाद के शीर्षक के अनुसार वादी के साथ ही प्रोफार्मा-प्रतिवादी सं. 8 से 12 प्रश्नगत भूमि में अपने हिस्से की सीमा तक कब्जे सहित स्वामी थे । उसके प्रोफार्मा-प्रतिवादियों या उनके पूर्वजों का प्रतिवादी सं. 1 से 7 के साथ कोई अदला-बदली नहीं हुआ था । टिक्का बल्ला में स्थित किसी भूमि का अदला-बदली नहीं हुआ था । तहसील बारसर में ऐसी कोई टिक्का नहीं थी । टिक्का बल्ला, तप्पा धतवल में स्थित भूमि के बदले प्रश्नगत भूमि के अअधिभोगी किराएदार के रूप में बिना किराया संदाय किए प्रतिवादी सं. 1 से 7 के नामों को दर्शित करते हुए, की गई राजस्व प्रविष्टियां गलत और अवैध हैं । वह प्रोफार्मा प्रतिवादियों के साथ उक्त प्रविष्टियों से आबद्ध नहीं था । वह प्रोफार्मा प्रतिवादी सं. 8 से 12, अपने पूर्वजों के समय से वाद भूमि के निरन्तर कब्जे में थे । पूर्ववर्ती उनके हित-उत्तराधिकारी विवादित भूमि के कब्जे में थे । टिक्का कोथी बंदोबस्त के अधीन था । मामले को नायब तहसीलदार (बंदोबस्त) सलोनी सर्किल द्वारा

गलत तौर पर खारिज किया गया था । उन्होंने सहायक बंदोबस्त अधिकारी [कलक्टर, (बंदोबस्त) की शक्तियों का प्रयोग करने वाले], धर्मशाला के समक्ष एक अपील फाइल की थी । अपील को तारीख 26 मई, 1998 को गलत तौर पर और अवैध तौर पर खारिज कर दिया गया था । वादी और प्रोफार्मा प्रतिवादी सं. 8 से 12 ने आयुक्त, मंडी खंड के समक्ष एक अपील फाइल की थी, जो अभी तक लम्बित है । टिक्का कोथी भी चकबन्दी के अधीन थी । वादी और प्रोफार्मा-प्रतिवादियों ने राजस्व कागजातों में संदिग्ध और मिथ्या राजस्व प्रविष्टियों के संबंध में, हिमाचल प्रदेश जोत (चकबंदी और खंडकरण का निवारण) अधिनियम, 1971 की धारा 54 के अधीन निदेशक, चकबन्दी के समक्ष एक याचिका फाइल की थी । निदेशक, चकबन्दी ने उन्हें सिविल न्यायालय जाने की सलाह दी । वाद हेतुक, बंदोबस्त कलक्टर के तारीख 26 मई, 1998 के विनिश्चय के पश्चात् उद्भूत हुआ था क्योंकि प्रतिवादी सं. 1 से 7 ने वाद संपत्ति का कब्जा लेने के लिए हस्तक्षेप और धमकी देना प्रारम्भ कर दिया था । वाद का, प्रतिवादी सं. 1 से 7 द्वारा लिखित कथन फाइल करते हुए, विरोध किया गया । प्रारम्भिक आक्षेप किए गए । यह विनिर्दिष्टतया अभिवाक् किया गया कि विवादित संपत्ति, वर्ष 1951-52 से उनके अनन्य कब्जे में थी । वे प्रश्नगत भूमि को जोतते और प्रबन्ध करते थे तथा भूमि राजस्व का भी संदाय करते थे । वादी या प्रोफार्मा-प्रतिवादी, विवादित भूमि के किसी भाग के कब्जे में नहीं थे । राजस्व अभिलेख सही हैं । वादी, 48 वर्षों के पश्चात् उनके पक्ष में मौजूद प्रविष्टियों को चुनौती नहीं दे सकता है । यह वादी और उसके हित-पूर्वाधिकारियों की पूर्ण बेदखली है । प्रतिवादी, वर्ष 1951-52 से वाद भूमि के खुले, निरन्तर और प्रतिकूल कब्जे में है और प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से भूमि के पूर्ण स्वामी हो गए हैं । विभिन्न प्राधिकारियों को पारित आदेश को सिविल न्यायालय में प्रश्नगत नहीं किया जा सकता है । सिविल न्यायालय चकबन्दी प्राधिकारियों द्वारा पारित आदेशों की औचित्यता और असलियत के बारे में विचार नहीं कर सकता है । विद्वान् उप-न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी, बारसर द्वारा तारीख 27 अप्रैल, 2000 को विवाद्यक विरचित किए गए थे । उन्होंने तारीख 14 जनवरी, 2003 को वाद खारिज कर दिया था । वादी ने तारीख 14 जनवरी, 2003 के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध विद्वान् जिला न्यायाधीश, हमीरपुर के समक्ष एक अपील फाइल की थी । उन्होंने तारीख 22 फरवरी, 2005 को उसे मंजूर कर लिया था । इन परिस्थितियों में ही प्रतिवादियों में से एक बिधि चन्द ने वर्तमान नियमित

द्वितीय अपील फाइल की है । न्यायालय द्वारा इस वर्तमान नियमित द्वितीय अपील को खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस लम्बित वाद में अन्तर्ग्रस्त मूल विवाद्यक यह है कि क्या प्रतिवादी सं. 1 से 7 के पास टिक्का बल्ला में कोई भूमि थी और उन्होंने टिक्का बल्ला की इस भूमि का वादी के साथ अदला-बदली की थी । प्रतिवादियों ने टिक्का बल्ला में भूमि के अदला-बदली और उन्हें देने का अभिवाक् नहीं किया है । प्रतिवादी सं. 1 बिधि चन्द ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया है कि उनके हित-उत्तराधिकारियों ने वादी इत्यादि के साथ अदला-बदली में भूमि दी थी । वे किराए का संदाय कर रहे थे तथापि, इस अभिवाक् को लिखित कथन में नहीं लिया गया है । अभि. सा. 2 केसर चन्द ने प्रमाणपत्र प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ए को साबित किया है । उसने प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ए में विनिर्दिष्टतः यह कथन किया है कि पटवर सर्किल, बारा में कोई टिक्का बल्ला नहीं है । इस प्रमाणपत्र को श्री बी. के. शर्मा, नायब तहसीलदार, धतवल (बिजहारी) द्वारा प्रति-हस्ताक्षरित किया गया था । राजस्व अभिलेखों से यह भी प्रकट होता है कि प्रतिवादियों का टिक्का खिलावत में स्वयं अपनी कोई भूमि नहीं थी । प्रतिवादी टिक्का बल्ला में अदला-बदली के बदले में किराए का संदाय किए बिना मात्र अअधिभोगी किराएदार के रूप में दर्शित किए गए हैं । यह मात्र एक कागजात प्रविष्टि है । कोई टिक्का बल्ला नहीं है । प्रतिवादियों का टिक्का खिलावत में स्वयं अपनी कोई भूमि नहीं है । इस प्रकार, प्रतिवादियों द्वारा लिया गया यह अभिवाक् कि उन्होंने वादी से अदला-बदली में भूमि ली है या वे वादी द्वारा किराएदार के रूप में रखे गए हैं, को विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा साबित नहीं किया गया है । वादियों ने यह साबित करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य प्रस्तुत किया है कि वादी और प्रोफार्मा प्रतिवादी, वाद भूमि के कब्जे सहित स्वामी हैं । प्रतिवादियों द्वारा प्रतिकूल कब्जे के बारे में लिए गए अभिवाक् को साबित नहीं किया गया है । प्रतिकूल कब्जे के अवयवों को प्रतिवादियों द्वारा साबित किया जाना चाहिए । प्रतिवादियों में से कोई भी साक्ष्य में यह साबित नहीं किया है कि कब उनका कब्जा असली स्वामी के हक के प्रतिकूल हो गया । मात्र लम्बे समय तक कब्जे में बने रहने से प्रतिकूल कब्जा नहीं हो सकता है । प्रतिकूल कब्जे का दावा करने वाले व्यक्ति को यह साबित करना चाहिए कि वह कब से कब्जे में है और असली स्वामी की जानकारी में कब्जे की प्रकृति क्या है । कब्जे का आशय होना चाहिए और न कि यह सद्भाविक विश्वास कि सम्पत्ति उसकी है ।

जहां तक कि परिसीमा अवधि का प्रश्न है, वादी ने यह साक्ष्य प्रस्तुत किया है कि बंदोबस्त कार्यवाहियों के दौरान राजस्व प्रविष्टियों के बारे में उसे जानकारी हुई । ये अभी भी अस्तित्व में हैं । उसने राजस्व अभिलेख प्राप्त किया और उसके पश्चात् वाद फाइल किया । इस प्रकार, यह नहीं कहा जा सकता है कि वाद परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित है । प्रथम अपील न्यायालय ने मौखिक के साथ ही दस्तावेजी साक्ष्यों का सही मूल्यांकन किया है और ऐसे सकारण निर्णय में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं है । (पैरा 19 और 20)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2005 की नियमित द्वितीय अपील सं. 268.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री जे. एल. भारद्वाज, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से श्री अजय शर्मा, अधिवक्ता

अन्य प्रत्यर्थियों की ओर से कोई नहीं

न्यायमूर्ति राजीव शर्मा – यह नियमित द्वितीय अपील, विद्वान् जिला न्यायाधीश, हमीरपुर द्वारा 2003 की सिविल अपील सं. 17 में दिए गए तारीख 22 फरवरी, 2005 के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध निदेशित है ।

2. इस अपील का न्यायनिर्णयन करने के लिए आवश्यक मुख्य तथ्य यह हैं कि प्रत्यर्थी-अपीलार्थी (सुविधा के लिए जिसे इसमें इसके पश्चात् "वादी" कहा गया है) ने अपीलार्थी-प्रतिवादी अर्थात् बिधि चन्द और अन्यों तथा प्रोफार्मा-प्रतिवादियों के विरुद्ध घोषणा इत्यादि करने के लिए एक वाद फाइल किया था । वादपत्र में किए गए प्रकथनों के अनुसार, सिविल वाद के शीर्षक के अनुसार वादी के साथ ही प्रोफार्मा-प्रतिवादी सं. 8 से 12 प्रश्नगत भूमि में अपने हिस्से की सीमा तक कब्जे सहित स्वामी थे । उसके प्रोफार्मा-प्रतिवादियों या उनके पूर्वजों का प्रतिवादी सं. 1 से 7 के साथ कोई अदला-बदली नहीं हुआ था । टिक्का बल्ला में स्थित किसी भूमि का अदला-बदली नहीं हुआ था । तहसील बारसर में ऐसी कोई टिक्का नहीं थी । टिक्का बल्ला, तप्पा धतवल में स्थित भूमि के बदले प्रश्नगत भूमि के अअधिभोगी किराएदार के रूप में बिना किराया संदाय किए प्रतिवादी सं. 1 से 7 के नामों को दर्शित करते हुए, की गई राजस्व प्रविष्टियां गलत और अवैध हैं । वह प्रोफार्मा प्रतिवादियों के साथ उक्त प्रविष्टियों से आबद्ध नहीं

था । वह प्रोफार्मा प्रतिवादी सं. 8 से 12, अपने पूर्वजों के समय से वाद भूमि के निरन्तर कब्जे में थे । पूर्ववर्ती उनके हित-उत्तराधिकारी विवादित भूमि के कब्जे में थे । टिक्का कोथी बंदोबस्त के अधीन था । मामले को नायब तहसीलदार (बंदोबस्त) सलोनी सर्किल द्वारा गलत तौर पर खारिज किया गया था । उन्होंने सहायक बंदोबस्त अधिकारी [कलक्टर, (बंदोबस्त) की शक्तियों का प्रयोग करने वाले], धर्मशाला के समक्ष एक अपील फाइल की थी । अपील को तारीख 26 मई, 1998 को गलत तौर पर और अवैध तौर पर खारिज कर दिया गया था । वादी और प्रोफार्मा प्रतिवादी सं. 8 से 12 ने आयुक्त, मंडी खंड के समक्ष एक अपील फाइल की थी, जो अभी तक लम्बित है । टिक्का कोथी भी चकबन्दी के अधीन थी । वादी और प्रोफार्मा-प्रतिवादियों ने राजस्व कागजातों में संदिग्ध और मिथ्या राजस्व प्रविष्टियों के संबंध में, हिमाचल प्रदेश जोत (चकबंदी और खंडकरण का निवारण) अधिनियम, 1971 की धारा 54 के अधीन निदेशक, चकबन्दी के समक्ष एक याचिका फाइल की थी । निदेशक, चकबन्दी ने उन्हें सिविल न्यायालय जाने की सलाह दी । वाद हेतुक, बंदोबस्त कलक्टर के तारीख 26 मई, 1998 के विनिश्चय के पश्चात् उद्भूत हुआ था क्योंकि प्रतिवादी सं. 1 से 7 ने वाद संपत्ति का कब्जा लेने के लिए हस्तक्षेप और धमकी देना प्रारम्भ कर दिया था ।

3. वाद का, प्रतिवादी सं. 1 से 7 द्वारा लिखित कथन फाइल करते हुए, विरोध किया गया । प्रारम्भिक आक्षेप किए गए । यह विनिर्दिष्टतया अभिवाक् किया गया कि विवादित संपत्ति, वर्ष 1951-52 से उनके अनन्य कब्जे में थी । वे प्रश्नगत भूमि को जोतते और प्रबन्ध करते थे तथा भूमि राजस्व का भी संदाय करते थे । वादी या प्रोफार्मा-प्रतिवादी, विवादित भूमि के किसी भाग के कब्जे में नहीं थे । राजस्व अभिलेख सही हैं । वादी, 48 वर्षों के पश्चात् उनके पक्ष में मौजूद प्रविष्टियों को चुनौती नहीं दे सकता है । यह वादी और उसके हित-पूर्वाधिकारियों की पूर्ण बेदखली है । प्रतिवादी, वर्ष 1951-52 से वाद भूमि के खुले, निरन्तर और प्रतिकूल कब्जे में है और प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से भूमि के पूर्ण स्वामी हो गए हैं । विभिन्न प्राधिकारियों को पारित आदेश को सिविल न्यायालय में प्रश्नगत नहीं किया जा सकता है । सिविल न्यायालय चकबन्दी प्राधिकारियों द्वारा पारित आदेशों की औचित्यता और असलियत के बारे में विचार नहीं कर सकता है ।

4. विद्वान् उप-न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी, बारसर द्वारा तारीख 27 अप्रैल,

2000 को विवाद्यक विरचित किए गए थे । उन्होंने तारीख 14 जनवरी, 2003 को वाद खारिज कर दिया था । वादी ने तारीख 14 जनवरी, 2003 के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध विद्वान् जिला न्यायाधीश, हमीरपुर के समक्ष एक अपील फाइल की थी । उन्होंने तारीख 22 फरवरी, 2005 को उसे मंजूर कर लिया था । इन परिस्थितियों में ही प्रतिवादियों में से एक बिधि चन्द ने वर्तमान नियमित द्वितीय अपील फाइल की है । इसे तारीख 2 मई, 2005 को निम्नलिखित विधि के सारवान् प्रश्नों पर स्वीकार कर लिया गया था :–

1. क्या विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय का यह निष्कर्ष कि वाद परिसीमा अवधि के भीतर है, अभिलेख पर के साक्ष्यों के प्रतिकूल है ?

2. क्या विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करने में त्रुटि की है कि अपीलार्थी-प्रतिवादी वाद संपत्ति के प्रतिकूल कब्जे में है, जो अभिलेख पर के साक्ष्य के प्रतिकूल है ?

5. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल श्री जे. एल. भारद्वाज ने विरचित विधि के सारवान् प्रश्नों के आधार पर, यह जोरदार तर्क दिया कि वाद परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित है । उसके बाद, उन्होंने यह दलील दी कि उनके मुवक्किल ने वर्ष 1951-52 से प्रतिकूल कब्जे को साबित कर दिया है ।

6. प्रत्यर्थी सं. 1 के विद्वान् काउंसेल श्री अजय शर्मा ने तारीख 22 फरवरी, 2005 के निर्णय और डिक्री का समर्थन किया है ।

7. मैंने, पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना और अभिलेखों का सावधानीपूर्वक परिशीलन किया ।

8. चूंकि, दोनों विधि के सारवान् प्रश्न एक दूसरे से जुड़े हुए और संबंधित हैं, इसलिए, इन्हें साक्ष्य की चर्चा की पुनरावृत्ति को रोकने के लिए अवधारण हेतु एक साथ लिया जाता है ।

9. अभि. सा. 1 जगदीश चन्द ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि वह और उसकी माता वाद भूमि के कब्जे सहित स्वामी हैं । प्रतिवादियों का इससे कोई संबंध नहीं हैं । वे कभी भी वाद संपत्ति के कब्जे में नहीं रहे । प्रतिवादी सं. 1 से 7 के साथ कोई अदला-बदली नहीं हुई थी । प्रतिवादी कभी भी प्रश्नगत भूमि के ऊपर किराएदार के रूप में नहीं रहे । प्रतिवादियों द्वारा कभी भी कोई किराया संदत्त नहीं किया गया है । राजस्व कर्मचारियों

द्वारा गलत प्रविष्टि की गई थी । तहसील बारसर में टिक्का बल्ला कोई स्थान नहीं है । उनके पूर्व, उनके पूर्वज कब्जे में थे । मई, 1998 में प्रतिवादियों ने वाद भूमि पर बलपूर्वक कब्जा करने की धमकी दी और वाद संस्थित किया । अपनी प्रतिपरीक्षा में उसने इस बात से इनकार किया कि टिक्का खिलावत का उप-नाम ही टिक्का बल्ला है । चकबन्दी कार्यवाहियां ग्राम कोथी में 10-12 वर्ष पूर्व हुई थी । उसने निदेशक के समक्ष एक अपील प्रस्तुत की ।

10. अभि. सा. 2 केसर चन्द, हल्का बारा, तहसील बारसर में पटवारी के रूप में कार्य कर रहा था । उसने स्वयं द्वारा जारी इस प्रभाव के प्रमाणपत्र प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ए को साबित किया है कि पटवर सर्किल 12 में कोई टिक्का बल्ला नहीं है । इस प्रमाणपत्र को श्री बी. के. शर्मा, नायब तहसीलदार, धतवल (बिजहारी) द्वारा प्रति-हस्ताक्षरित किया गया था ।

11. अभि. सा. 3 जगदीश चन्द, टिक्का कोथी में पटवारी (बंदोबस्त) के रूप में तैनात रहा था । उसने तारीख 12 जून, 1997 की रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए को साबित किया है । इस रिपोर्ट को उसके द्वारा फील्ड कानूनगो को भेजा गया है ।

12. अभि. सा. 4 हंस राज और अभि. सा. 5 धरम पाल ने भी वादी के पक्षकथन का समर्थन किया है । अपनी प्रतिपरीक्षा में अभि. सा. 4 हंस राज ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि प्रतिवादियों ने तारीख 26 मई, 1988 को विवादित भूमि में हस्तक्षेप करना आरम्भ कर दिया था । उसने इस बात से इनकार किया कि टिक्का खिलावत को टिक्का बल्ला के रूप में भी जाना जाता है ।

13. प्रतिवादी बिधि चन्द, प्रतिवादी सं. 1 के रूप में उपस्थित हुआ उसने यह अभिसाक्ष्य दिया कि वाद भूमि वर्ष 1951-52 से उनके कब्जे में थी । वे ज्ञान चन्द पुत्र रोशन लाल के द्वारा वाद भूमि को जोतवा रहे थे । वादी ग्राम बल्ला में रहता था जो वाद संपत्ति से 15-20 किलोमीटर की दूरी पर स्थित था ।

14. प्रतिवादी साक्षी 2 बक्शी राम, सथवीन पंचायत का पूर्व प्रधान था । उसने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि टिक्का खिलावत उसकी पंचायत में है । टिक्का खिलावत का एक साथ बल्ला के रूप में जाना जाता था ।

कोई गांव/टिक्का बल्ला नहीं था । वह वादी को जानता था ।

15. प्रतिवादी साक्षी 3 ज्ञान चन्द ने प्रतिवादियों के बयान का समर्थन किया है ।

16. प्रतिवादी साक्षी 4 शंभु राम, कानूनगो था । उसने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि टिक्का कोथी उसके क्षेत्र का एक भाग था । उसने स्वयं द्वारा तैयार तारीख 11 जुलाई, 1997 की स्थल निरीक्षण रिपोर्ट की प्रति प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 4/ए को साबित किया है । उसने घटनास्थल पर पक्षकारों का कथन अभिलिखित किया था ।

17. राम चन्द की इसके खंडन में परीक्षा की गई है । उसने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि प्रतिवादियों का टिक्का खिलावत में स्वयं की कोई भूमि नहीं थी । कोई अदला-बदली नहीं हुआ था । टिक्का खिलावत में बल्ला के रूप में ज्ञात कोई ग्राम या साथ नहीं था ।

18. वर्ष 1944-45 के लिए जमाबंदी के अनुसार, टिक्का कोथी का प्रदर्श पी-2, सर्वा राम, वादी इत्यादि का पिता, को माप 8-16 कनाल भूमि के स्वामी के रूप में दर्शित किया गया है । वजीरा पुत्र मोती का कब्जा किराएदार के रूप में उक्त भूमि के ऊपर अभिलिखित था । वर्ष 1952-53 के लिए जमाबंदी में और प्रदर्श डी-1 में सर्वा वादी का पिता गुजा में भूमि माप 8-16 कनाल का कब्जे सहित स्वामी के रूप में दर्शित हुआ है । लड़ने वाले प्रतिवादियों के हित-पूर्वाधिकारी सम्पूर्ण भूमि पर किराएदार के रूप में दर्शित हुए थे । "बेवजह तबादला खमवा हमरा अर्जी वाक्या टिक्का बल्ला मौजा धकवल" के किराया कालम में प्रविष्टि इस प्रकार थी – कोई लगान अदा नहीं होता है । इन प्रविष्टियों को वर्ष 1956-57, 1960-61 और 1965-66 के लिए जमाबंदियों में पुनः दोहराया गया था । वर्ष 1971-72 के लिए जमाबंदी में, सर्वा इत्यादि भूमि के स्वामियों के रूप में दर्शित है और प्रतिवादी किराएदारों के रूप में दर्शित हैं । इन्हीं प्रभाव की प्रविष्टियां वर्ष 1981-82 के लिए जमाबंदी में भी हैं । ग्राम कोथी से संबंधित वर्ष 1986-87 के लिए मिसल हैकियत इस्तेमाल की प्रति में वादी और प्रोफार्मा प्रतिवादी, वाद भूमि के स्वामियों के रूप में दर्शित है । प्रतिवादियों का कब्जा किराएदारों के रूप में दर्शित था । "बेवजह तबादला खमवा हमरा अर्जी टिक्का बल्ला मौजा धकवल" के कालम सं. 9 में यह प्रविष्टि है कि

कोई लगान अदा नहीं होता है । वर्ष 1970-71 के लिए जमाबंदी प्रदर्श पी-13 में प्रतिवादियों का कब्जा विवादित संपत्ति के ऊपर किराएदारों के रूप में दर्शित किया गया है । वर्ष 1991-92 के लिए जमाबंदी प्रदर्श डी-9 में वादी और प्रतिवादी विवादित भूमि में स्वामियों के रूप में दर्शित हैं । प्रतिवादियों का कब्जा किराएदारों के रूप में दर्शित किया गया है ।

19. इस लम्बित वाद में अन्तर्ग्रस्त मूल विवाद्यक यह है कि क्या प्रतिवादी सं. 1 से 7 के पास टिक्का बल्ला में कोई भूमि थी और उन्होंने टिक्का बल्ला की इस भूमि का वादी के साथ अदला-बदली की थी । प्रतिवादियों ने टिक्का बल्ला में भूमि के अदला-बदली और उन्हें देने का अभिवाक् नहीं किया है । प्रतिवादी सं. 1 बिधि चन्द ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया है कि उनके हित-उत्तराधिकारियों ने वादी इत्यादि के साथ अदला-बदली में भूमि दी थी । वे किराए का संदाय कर रहे थे तथापि, इस अभिवाक् को लिखित कथन में नहीं लिया गया है । अभि. सा. 2 केसर चन्द ने प्रमाणपत्र प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ए को साबित किया है । उसने प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ए में विनिर्दिष्टतः यह कथन किया है कि पटवर सर्किल, बारा में कोई टिक्का बल्ला नहीं है । इस प्रमाणपत्र को श्री बी. के. शर्मा, नायब तहसीलदार, धतवल (बिजहारी) द्वारा प्रति-हस्ताक्षरित किया गया था । राजस्व अभिलेखों से यह भी प्रकट होता है कि प्रतिवादियों का टिक्का खिलावत में स्वयं अपनी कोई भूमि नहीं थी । प्रतिवादी टिक्का बल्ला में अदला-बदली के बदले में किराए का संदाय किए बिना मात्र अअधिभोगी किराएदार के रूप में दर्शित किए गए हैं । यह मात्र एक कागजात प्रविष्टि है । कोई टिक्का बल्ला नहीं है । प्रतिवादियों का टिक्का खिलावत में स्वयं अपनी कोई भूमि नहीं है । इस प्रकार, प्रतिवादियों द्वारा लिया गया यह अभिवाक् कि उन्होंने वादी से अदला-बदली में भूमि ली है या वे वादी द्वारा किराएदार के रूप में रखे गए हैं, को विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा साबित नहीं किया गया है । वादियों ने यह साबित करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य प्रस्तुत किया है कि वादी और प्रोफार्मा प्रतिवादी, वाद भूमि के कब्जे सहित स्वामी हैं । प्रतिवादियों द्वारा प्रतिकूल कब्जे के बारे में लिए गए अभिवाक् को साबित नहीं किया गया है । प्रतिकूल कब्जे के अवयवों को प्रतिवादियों द्वारा साबित किया जाना चाहिए । प्रतिवादियों में से कोई भी साक्ष्य में यह साबित नहीं किया है कि कब उनका कब्जा असली स्वामी के

हक के प्रतिकूल हो गया । मात्र लम्बे समय तक कब्जे में बने रहने से प्रतिकूल कब्जा नहीं हो सकता है । प्रतिकूल कब्जे का दावा करने वाले व्यक्ति को यह साबित करना चाहिए कि वह कब से कब्जे में है और असली स्वामी की जानकारी में कब्जे की प्रकृति क्या है । कब्जे का आशय होना चाहिए और न कि यह सद्भाविक विश्वास कि सम्पत्ति उसकी है ।

20. जहां तक कि परिसीमा अवधि का प्रश्न है, वादी ने यह साक्ष्य प्रस्तुत किया है कि बंदोबस्त कार्यवाहियों के दौरान राजस्व प्रविष्टियों के बारे में उसे जानकारी हुई । ये अभी भी अस्तित्व में हैं । उसने राजस्व अभिलेख प्राप्त किया और उसके पश्चात् वाद फाइल किया । इस प्रकार, यह नहीं कहा जा सकता है कि वाद परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित है । प्रथम अपील न्यायालय ने मौखिक के साथ ही दस्तावेजी साक्ष्यों का सही मूल्यांकन किया है और ऐसे सकारण निर्णय में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं है ।

21. अब जहां तक कि प्रतिकूल कब्जे के अभिवाक् का संबंध है, यह कहना पर्याप्त होगा कि विवाद्यक सं. 9 को प्रतिवादियों द्वारा विचारण न्यायालय के समक्ष नहीं रखा गया था । इसके अतिरिक्त, प्रतिवादी विश्वसनीय साक्ष्य प्रस्तुत करते हुए, स्वयं द्वारा उद्भूत प्रतिकूल कब्जे के अभिवाक् को भी साबित करने में असफल रहे हैं ।

22. तद्नुसार, विधि के सारवान् प्रश्नों का उत्तर दिया जाता है ।

23. तद्नुसार, इसमें उपर्युक्त विश्लेषण और चर्चा को ध्यान में रखते हुए, अपील में कोई गुणागुण नहीं है और इसे खारिज किया जाता है । लम्बित आवेदन/आवेदनों, यदि कोई हो, का भी निपटारा किया जाता है । खर्चे का कोई आदेश पारित नहीं किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

क.

वेद प्रकाश

बनाम

टेक चन्द और अन्य

तारीख 3 मई, 2016

न्यायमूर्ति सुरेश्वर ठाकुर

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 100 और आदेश 2 का नियम 2 [सपठित संपत्ति अन्तरण अधिनियम, 1882 की धारा 6] – वाद संपत्ति का अन्यसंक्रामण करना – पैतृक या सहदायिकी संपत्ति होने का दावा करना – दावे की पुष्टि के लिए कोई भी मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं करना – अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य से वाद संपत्ति का स्व-अर्जित संपत्ति साबित होना – यदि अभिलेख पर के साक्ष्यों से यह साबित हो जाता है कि वाद संपत्ति स्व-अर्जित संपत्ति है तो उसका स्वामी उसे किसी भी व्यक्ति को अन्यसंक्रामण करने के लिए स्वतंत्र होता है – इसे इस आधार पर आक्षेपित नहीं किया जा सकता है कि वाद संपत्ति पैतृक या सहदायिकी है और अन्य सहदायिकों की सहमति से ही इसका अन्यसंक्रामण किया जा सकता है जब तक कि इसका पैतृक या सहदायिकी संपत्ति होना अभिलेख पर साबित नहीं कर दिया जाता है ।

वर्तमान मामले में, संक्षिप्त तथ्य यह है कि वादी ने इस प्रभाव की घोषणा करने के लिए एक वाद संस्थित किया था कि भाग चन्द द्वारा प्रतिवादी सं. 1 टेक चन्द के पक्ष में 50,000/- रुपए के प्रतिफल में, फती प्रीनी, कोठी जगतसुख, तहसील मनाली, जिला कुल्लू में स्थित खाता खतौनी सं. 71/105 से 109, खसरा सं. 1519, 1563, 1573, 1835, 1291, 1318, 1324, 1963, 2371, 1927, 2366, 1292, 2306, 1328, 1800, 1833, 1847, 1914, 1814, किटा 19 माप 13-3-0 बीघा में समाविष्ट भूमि में से माप 4-7-13 भूमि के 1/3 हिस्से के संबंध में तारीख 9 जुलाई, 1990 का विक्रय विलेख 990 और प्रतिवादी सं. 1 टेक चन्द द्वारा प्रतिवादी सं. 2 लाल चन्द के पक्ष में 40,000/- रुपए के प्रतिफल में खाता/ खतौनी सं. 80/118, खसरा सं. 1265 में समाविष्ट भूमि में से माप-0-10-0 के 10/11 हिस्से का तारीख 18 नवम्बर, 1996 का विक्रय विलेख सं. 1669 और सेवती (मूल प्रतिवादी सं. 1, अब

निरसित) के पति भाग चन्द द्वारा प्रतिवादी सं. 3 मणि देवी के पक्ष में 1,000/- रुपए के प्रतिफल में खाता/खतौनी सं. 58 मीन/93 मीन, खसरा सं. 1265, माप 0-11-0 बीघा में समाविष्ट भूमि में से माप 0-1-0 बीघा के 1/11 हिस्से तथा खाता/खतौनी सं. 59/95, खसरा सं. 1324, माप 0-1-0 बीघा में समाविष्ट भूमि में से माप 0-0-13 बीघा के 2/3 हिस्से का 13 नवम्बर, 1989 का विक्रय विलेख सं. 6040 और भाग चन्द द्वारा प्रतिवादी सं. 2 लाल चन्द के पक्ष में 2,500/- रुपए के प्रतिफल में खाता/खतौनी सं. 59 मीन/95 मीन, खसरा सं. 1291, 1318 और 2371, किटा 3, माप 10-10-0 बीघा में समाविष्ट भूमि में से माप 0-4-0 बीघा के 4/10 हिस्से का तारीख 13 अप्रैल, 1989 का विक्रय विलेख सं. 605 गलत, अकृत और शून्य है और वादी के अधिकारों पर कोई आबद्धकारी प्रभाव नहीं रखता है । उक्त अनुतोष का वादी द्वारा इन आधारों पर दावा किया गया था कि वाद भूमि वादी की पैतृक संपत्ति है और उसे भाग चन्द, सेवती के पति द्वारा उसके पूर्वजों से उत्तराधिकार में प्राप्त की गई थी, जिसके परिणामस्वरूप भाग चन्द के पास वादी को विधिक प्रतिनिधि होने के नाते उत्तराधिकार से वंचित करने और तंग करने के लिए अत्यधिक निम्न मूल्य पर किसी विधिक आवश्यकता के बिना वाद भूमि का विक्रय करने का कोई अधिकार नहीं था । यह अभिवाक् किया गया कि प्रतिवादी अत्यधिक चालाक व्यक्ति थे और दुर्भावनापूर्ण आशय से भाग चन्द को शराब पिलाकर नशे के अधीन बेईमानीपूर्वक दबाव डालकर अपने पक्ष में उक्त विक्रय विलेखों को निष्पादित और रजिस्टर करने के लिए सहमत करा लिया था । अतएव, उक्त विक्रय विलेख गलत और अवैध हैं । प्रतिवादियों ने वाद का विरोध किया और लिखित कथन फाइल किया । प्रतिवादियों ने अपने लिखित कथन में अन्य बातों के साथ वाद हेतुक सुने जाने का अधिकार वाद कायम रखने और आवश्यक पक्षकारों के कुसंयोजन और असंयोजन के बारे में प्रारम्भिक आक्षेप किया । गुणागुणों पर वादपत्र में किए गए प्रकथनों को गलत और सही होने से इनकार किया । यह अभिवाक् किया गया कि वाद भूमि, भाग चन्द के पास पैतृक संपत्ति के रूप में नहीं थी । विक्रय विलेखों को उक्त भाग चन्द द्वारा अपनी स्वतंत्र इच्छा और स्वेच्छा से निष्पादित किया गया था और उसे उक्त भूमि का विक्रय करने का सभी प्रकार से अधिकार था । वादी को प्रतिवादियों के पक्ष में मृतक भाग चन्द द्वारा किए गए अन्तरण को चुनौती देने का कोई अधिकार नहीं है और वाद भूमि को मृतक भाग चन्द द्वारा विधिक आवश्यकता के

लिए विक्रय किया गया था । वादी/अपीलार्थी ने प्रतिवादियों/प्रत्यर्थियों के लिखित कथन का प्रत्युत्तर फाइल किया जिसमें उन्होंने लिखित कथन की अन्तर्वस्तुओं से इनकार किया और वादपत्र में किए गए प्रकथनों की पुनः पुष्टि और प्रत्याख्यान किया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपने समक्ष प्रस्तुत साक्ष्यों का मूल्यांकन करने के पश्चात् अपीलार्थी/वादी का वाद खारिज कर दिया । विद्वान् विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध अपीलार्थी/वादी द्वारा विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई जिसे विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय ने खारिज कर दिया । इससे व्यथित होकर इस न्यायालय के समक्ष द्वितीय अपील फाइल की गई । न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – आक्षेपित विक्रय विलेखों के विक्रेता भाग चन्द और नानक चन्द भाई थे । वादी/अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा दोनों की यह दलील थी कि उन्होंने अपने हित-पूर्वाधिकारी से वाद भूमि में हक अर्जित किया है । उसके उपरान्त, वादी/अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने इस न्यायालय के समक्ष विक्रय विलेखों, जिसकी वैधता को चुनौती दी गई है, के विक्रेता के साथ वादी पर जोर दिया है, दोनों को ही वाद संपत्ति को अपने पुरुष वंशागत हित-पूर्वाधिकारी से उत्तराधिकार में प्राप्त करना अभिनिर्धारित किया गया है अतएव, जब तक इस प्रभाव का पारिणामिक प्रभाव कि संपत्ति पैतृक या सहदायिकी प्रकृति से अर्जित की गई है या हिस्सेदारी है तब तक वाद संपत्ति का अन्यसंक्रामण विधिमान्य नहीं हो सकता है जब तक कि इसे संपदा के फायदे या विधिक आवश्यकता के लिए विक्रय किया जाना दर्शित नहीं कर दिया जाता है जिसका साक्ष्य अब तक प्रस्तुत नहीं किया गया है, तब तक प्रतिकूल विक्रय विलेखों के प्रभाव को अकृत नहीं किया जा सकता है । दोनों निचले न्यायालयों ने अपने समक्ष मौजूद साक्ष्यों का सूक्ष्म मूल्यांकन करते हुए अपने-अपने निष्कर्ष निकाले हैं जो भाग चन्द और नानक चन्द के पूर्ववर्ती निर्विवाद वंशजों के दो पीढ़ियों तक के पुरुष हित-उत्तराधिकारियों के पक्ष में वाद संपत्ति के बारे में अनुप्रमाणित नामांतरणों के प्रतिकूल राजस्व अभिलेखों से चित्रित होता है, अतएव, आरम्भ में ही, वादी की वाद संपत्ति के बारे में पैतृक या सहदायिकी संपत्ति होने की दलील में कोई विशेषता, चरित्र या अवयव गठित नहीं होता है, वादी/अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल की प्रतिकूल विक्रय विलेखों के बारे में आरम्भ में ही दी गई दलील को, विधिक आवश्यकता या संपदा के फायदे के लिए प्रभावी उनके प्रतिकूल साक्ष्य द्वारा

वैधता दर्शित करने के अभाव में, कोई संरक्षण प्राप्त नहीं होता है । इसमें इसके पश्चात् अभिलिखित कारणों से दोनों विद्वान् निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए निष्कर्ष में कोई हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है । इस न्यायालय ने अभिलेख पर के सम्पूर्ण साक्ष्य का मूल्यांकन किया है । वादी की प्रेरणा पर प्रस्तुत मौखिक साक्ष्य के अलावा, पूर्ववर्ती दोनों पुरुष वंशज के हित-पूर्वाधिकारियों या दोनों नानक चन्द और भाग चन्द के पूर्वजों के पक्ष में वाद संपत्ति के बारे में निर्विवाद तौर पर अनुप्रमाणित उत्तराधिकार के नामांतरणों द्वारा उल्लिखित कोई भी उपयुक्त और सुसंगत दस्तावेजी साक्ष्य मौजूद नहीं है । दोनों नानक चन्द और भाग चन्द के ठीक पूर्ववर्ती दोनों पुरुष वंशजों के पक्ष में वाद संपत्ति के बारे में अनुप्रमाणित पूर्वोक्त निर्विवाद नामांतरणों के अभाव में, यह न्यायालय वाद संपत्ति के बारे में यह निष्कर्ष निकालने के लिए आबद्ध है कि इसमें पैतृक संपत्ति होने के लिए कोई पूर्वाभास गुण नहीं है । परिणामतः, भाग चन्द द्वारा प्रतिवादियों/प्रत्यर्थियों के पक्ष में प्रतिकूल विक्रय विलेखों के अधीन वाद संपत्ति का अन्यसंक्रामण करना विधिमान्य के साथ-ही-साथ विधिक है । इस तथ्य के होते हुए भी कि इसके लिए प्रभावी विधिक आवश्यकता या संपदा के फायदे के लिए कोई आधार साबित नहीं किया गया है । यद्यपि, अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा जमाबंदी प्रदर्श सी-1 और जमाबंदी प्रदर्श सी-2 का अवलंब लिया गया है । तथापि, जब वाद संपत्ति के बारे में क्रमशः पूर्वोक्त जमाबंदियों में देवी सरवारी के स्वामित्व और उमी के स्वामित्व को अभिलिखित होना चित्रित किया गया था तो सुस्पष्टतः निर्विवाद तौर पर इसे धारित करने के लिए नानक चन्द और भाग चन्द के ठीक पूर्व दो पुरुष वंशज, पूर्व-हिताधिकारी के स्वामित्व को दर्शित करने के लिए वादी/अपीलार्थी को कोई सहायता नहीं मिल सकती है । यद्यपि, वर्ष 1986-87 से संबंधित जमाबंदी प्रदर्श सी-3 में भाग चन्द द्वारा वाद संपत्ति को धारित और कब्जे के तथ्य को अभिलिखित किया गया है । तथापि, उसे अपने से ठीक पूर्व दो पुरुष वंशज हित-पूर्वाधिकारियों से वाद भूमि में नानक चन्द के साथ हक अर्जित करने के बारे में कोई वर्णन नहीं किया गया है जिससे कि वाद संपत्ति की प्रकृति, विशेषता और लक्षण से वाद संपत्ति के पैतृक या सहदायिकी संपत्ति होने के बारे में निष्कर्ष निकाला जा सके । ऐसा होते हुए भी, यह प्रतीत होता है कि इस न्यायालय के समक्ष आक्षेपित विक्रय विलेखों के विक्रेता ने हिमाचल प्रदेश अभिधृति भूमि सुधार अधिनियम की धारा 104 के स्वतः प्रवर्तन द्वारा वाद संपत्ति के स्वामियों के

अधीन गैर-अधिभोगी किराएदार की हैसियत से स्वामी के रूप में उसमें हक अर्जित कर लिया था । अतएव, आवश्यक तौर पर जब स्वतः कानूनी प्रवर्तन द्वारा वाद संपत्ति में हक अर्जित कर लिया था तो भाग चन्द द्वारा वाद संपत्ति में हक अर्जित करने के उक्त तरीके को सुस्पष्टतः उसके स्व-अर्जित संपत्ति की पुष्टि होती है । परिणामतः, जब वाद संपत्ति स्वयं स्वतः अर्जित की जाती है तो वह प्रत्यर्थियों/प्रतिवादियों के पक्ष में इसका हस्तांतरण करने के लिए निष्पादित रजिस्ट्री विलेखों द्वारा अन्यसंक्रामण करने में सक्षम हो गया है । पूर्वोक्त चर्चा से, ये तथ्य प्रकट होते हैं कि विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय के साथ ही विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा भी निकाले गए निष्कर्ष अभिलेख पर के साक्ष्यों के समुचित और बुद्धिमत्तापूर्ण विवेचन पर आधारित हैं । निष्कर्षों को निकालते समय विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय के साथ ही विद्वान् विचारण न्यायालय ने विचार करने में कोई सुसंगत और प्रतिकूल सामग्रियों को अपवर्जित नहीं किया है । तद्नुसार, विधि के सारवान् प्रश्न का उत्तर प्रतिवादियों/प्रत्यर्थियों के पक्ष में और वादी/ अपीलार्थी के विरुद्ध दिया जाता है । (पैरा 8, 9, 10, 11 और 13)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2004 की नियमित द्वितीय अपील सं. 566.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री विपुल शारदा, अधिवक्ता के साथ सुनील मोहन गोयल, अधिवक्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री मुकेश ठाकुर, अधिवक्ता

न्यायमूर्ति सुरेश्वर ठाकुर – वर्तमान नियमित द्वितीय अपील, विद्वान् जिला न्यायाधीश, कुल्लू द्वारा 2004 की सिविल अपील सं. 45 में पारित आक्षेपित निर्णय के विरुद्ध उद्भूत हुई है जिसके द्वारा वादी/अपीलार्थी की अपील को खारिज कर दिया गया था और विद्वान् विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री की पुष्टि कर दी गई थी । विद्वान् जिला न्यायाधीश, कुल्लू के निर्णय से व्यथित होकर इसमें के अपीलार्थी ने इसे आक्षेपित करते हुए, इस न्यायालय के समक्ष वर्तमान नियमित द्वितीय अपील फाइल की है ।

2. मामले के संक्षिप्त तथ्य यह है कि वादी ने इस प्रभाव की घोषणा करने के लिए एक वाद संस्थित किया था कि भाग चन्द द्वारा प्रतिवादी सं.

1 टेक चन्द के पक्ष में 50,000/- रुपए के प्रतिफल में, फती प्रीनी, कोठी जगतसुख, तहसील मनाली, जिला कुल्लू (जिसे इसमें इसके पश्चात् "वाद भूमि" कहा गया है) में स्थित खाता/खतौनी सं. 71/105 से 109, खसरा सं. 1519, 1563, 1573, 1835, 1291, 1318, 1324, 1963, 2371, 1927, 2366, 1292, 2306, 1328, 1800, 1833, 1847, 1914, 1814, किटा 19 माप 13-3-0 बीघा में समाविष्ट भूमि में से माप 4-7-13 भूमि के 1/3 हिस्से के संबंध में तारीख 9 जुलाई, 1990 का विक्रय विलेख 990 और प्रतिवादी सं. 1 टेक चन्द द्वारा प्रतिवादी सं. 2 लाल चन्द के पक्ष में 40,000/- रुपए के प्रतिफल में खाता/खतौनी सं. 80/118, खसरा सं. 1265 में समाविष्ट भूमि में से माप-0-10-0 के 10/11 हिस्से का तारीख 18 नवम्बर, 1996 का विक्रय विलेख सं. 1669 और सेवती (मूल प्रतिवादी सं. 1, अब निरसित) के पति भाग चन्द द्वारा प्रतिवादी सं. 3 मणि देवी के पक्ष में 1,000/- रुपए के प्रतिफल में खाता/खतौनी सं. 58 मीन/93 मीन, खसरा सं. 1265, माप 0-11-0 बीघा में समाविष्ट भूमि में से माप 0-1-0 बीघा के 1/11 हिस्से तथा खाता/खतौनी सं. 59/95, खसरा सं. 1324, माप 0-1-0 बीघा में समाविष्ट भूमि में से माप 0-0-13 बीघा के 2/3 हिस्से का 13 नवम्बर, 1989 का विक्रय विलेख सं. 6040 और भाग चन्द द्वारा प्रतिवादी सं. 2 लाल चन्द के पक्ष में 2,500/- रुपए के प्रतिफल में खाता/खतौनी सं. 59 मीन/95 मीन, खसरा सं. 1291, 1318 और 2371, किटा 3, माप 10-10-0 बीघा में समाविष्ट भूमि में से माप 0-4-0 बीघा के 4/10 हिस्से का तारीख 13 अप्रैल, 1989 का विक्रय विलेख सं. 605 गलत, अकृत और शून्य है और वादी के अधिकारों पर कोई आबद्धकारी प्रभाव नहीं रखता है । उक्त अनुतोष का वादी द्वारा इन आधारों पर दावा किंया गया था कि वाद भूमि वादी की पैतृक संपत्ति है और उसे भाग चन्द, सेवती के पति द्वारा उसके पूर्वजों से उत्तराधिकार में प्राप्त की गई थी, जिसके परिणामस्वरूप भाग चन्द के पास वादी को विधिक प्रतिनिधि होने के नाते उत्तराधिकार से वंचित करने और तंग करने के लिए अत्यधिक निम्न मूल्य पर किसी विधिक आवश्यकता के बिना वाद भूमि का विक्रय करने का कोई अधिकार नहीं था । यह अभिवाक् किया गया कि प्रतिवादी अत्यधिक चालाक व्यक्ति थे और दुर्भावनापूर्ण आशय से भाग चन्द को शराब पिलाकर नशे के अधीन बेईमानीपूर्वक दबाव डालकर अपने पक्ष में उक्त विक्रय विलेखों को निष्पादित और रजिस्टर करने के लिए सहमत करा लिया था । अतएव, उक्त विक्रय विलेख गलत और अवैध है ।

3. प्रतिवादियों ने वाद का विरोध किया और लिखित कथन फाइल किया । प्रतिवादियों ने अपने लिखित कथन में अन्य बातों के साथ वाद हेतुक सुने जाने का अधिकार वाद कायम रखने और आवश्यक पक्षकारों के कुसंयोजन और असंयोजन के बारे में प्रारम्भिक आक्षेप किया । गुणागुणों पर वादपत्र में किए गए प्रकथनों को गलत और सही होने से इनकार किया । यह अभिवाक् किया गया कि वाद भूमि, भाग चन्द के पास पैतृक संपत्ति के रूप में नहीं थी । विक्रय विलेखों को उक्त भाग चन्द द्वारा अपनी स्वतंत्र इच्छा और स्वेच्छा से निष्पादित किया गया था और उसे उक्त भूमि का विक्रय करने का सभी प्रकार से अधिकार था । वादी को प्रतिवादियों के पक्ष में मृतक भाग चन्द द्वारा किए गए अन्तरण को चुनौती देने का कोई अधिकार नहीं है और वाद भूमि को मृतक भाग चन्द द्वारा विधिक आवश्यकता के लिए विक्रय किया गया था ।

4. वादी/अपीलार्थी ने प्रतिवादियों/प्रत्यर्थियों के लिखित कथन का प्रत्युत्तर फाइल किया जिसमें उन्होंने लिखित कथन की अन्तर्वस्तुओं से इनकार किया और वादपत्र में किए गए प्रकथनों की पुनः पुष्टि और प्रत्याख्यान किया ।

5. पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर विद्वान् विचारण न्यायालय ने लड़ने वाले पक्षकारों के बीच निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किया :–

(1) क्या वादी इस घोषणा का अनुतोष पाने का हकदार है कि तारीख 9 जुलाई, 1990 का विक्रय विलेख सं. 990, तारीख 18 नवम्बर, 1996 का विक्रय विलेख सं. 1669 और तारीख 13 अप्रैल, 1989 का विक्रय विलेख सं. 6040 अकृत और शून्य होने के नाते कोई आबद्धकारी प्रभाव नहीं रखते हैं, जैसा कि अभिकथित है ?

(2) क्या वाद, कायम रखे जाने योग्य है, जैसा कि अभिकथित है ?

(3) क्या वाद, समुचित तौर पर संस्थित और गठित नहीं किया गया है, यदि ऐसा है तो इसका प्रभाव ?

(4) क्या वाद, एक मृत व्यक्ति श्रीमती सेवती देवी, प्रतिवादी सं. 1 के विरुद्ध फाइल किया गया है, यदि ऐसा है तो इसका प्रभाव ?

(5) क्या वादी को वर्तमान वाद फाइल करने के लिए सुने जाने का अधिकार नहीं है, जैसा कि अभिकथित है ?

(6) क्या वाद का न्यायालय शुल्क और अधिकारिता के प्रयोजन के लिए समुचित तौर पर मूल्यांकन नहीं किया गया है, यदि ऐसा है तो इसका प्रभाव ?

(7) क्या वाद, आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन और कुसंयोजन के कारण दूषित है, यदि ऐसा है तो इसका प्रभाव ?

(8) अनुतोष ।

6. विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपने समक्ष प्रस्तुत साक्ष्यों का मूल्यांकन करने के पश्चात् अपीलार्थी/वादी का वाद खारिज कर दिया । विद्वान् विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध अपीलार्थी/वादी द्वारा विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई जिसे विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय ने खारिज कर दिया ।

7. अब, विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा अपने आक्षेपित निर्णय और डिक्री में अभिलिखित निष्कर्षों को आक्षेपित करते हुए, अपीलार्थी/वादी ने इस न्यायालय के समक्ष वर्तमान नियमित द्वितीय अपील संस्थित की है । जब तारीख 24 दिसम्बर, 2004 को अपील स्वीकृति के लिए लाया गया तो इस न्यायालय ने इसमें इसके पश्चात् उद्धृत सारवान् विधि के प्रश्न पर वादी/अपीलार्थी द्वारा विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय और डिक्री के विरुद्ध फाइल अपील को स्वीकार कर लिया :–

(1) क्या विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष और प्रथम अपील न्यायालय द्वारा पुष्ट निष्कर्ष अभिलेख पर के साक्ष्यों से असंबद्ध है और ये मौखिक के साथ ही दस्तावेजी साक्ष्यों के गलत परिशीलन के परिणाम हैं ?

विधि का सारवान् प्रश्न सं. 1

8. आक्षेपित विक्रय विलेखों के विक्रेता भाग चन्द और नानक चन्द भाई थे । वादी/अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा दोनों की यह दलील थी कि उन्होंने अपने हित-पूर्वाधिकारी से वाद भूमि में हक अर्जित किया है । उसके उपरान्त, वादी/अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने इस न्यायालय के समक्ष विक्रय विलेखों, जिसकी वैधता को चुनौती दी गई है, के विक्रेता के साथ वादी पर जोर दिया है, दोनों को ही वाद संपत्ति को अपने पुरुष वंशागत हित-पूर्वाधिकारी से उत्तराधिकार में प्राप्त करना अभिनिर्धारित किया गया है अतएव, जब तक इस प्रभाव का पारिणामिक प्रभाव कि संपत्ति

पैतृक या सहदायिकी प्रकृति से अर्जित की गई है या हिस्सेदारी है तब वाद संपत्ति का अन्यसंक्रामण विधिमान्य नहीं हो सकता है जब तक कि इसे संपदा के फायदे या विधिक आवश्यकता के लिए विक्रय किया जाना दर्शित नहीं कर दिया जाता है जिसका साक्ष्य अब तक प्रस्तुत नहीं किया गया है, तब तक प्रतिकूल विक्रय विलेखों के प्रभाव को अकृत नहीं किया जा सकता है । दोनों निचले न्यायालयों ने अपने समक्ष मौजूद साक्ष्यों का सूक्ष्म मूल्यांकन करते हुए अपने-अपने निष्कर्ष निकाले हैं जो भाग चन्द और नानक चन्द के पूर्ववर्ती निर्विवाद वंशजों के दो पीढ़ियों तक के पुरुष हित-उत्तराधिकारियों के पक्ष में वाद संपत्ति के बारे में अनुप्रमाणित नामांतरणों के प्रतिकूल राजस्व अभिलेखों से चित्रित होता है, अतएव, आरम्भ में ही, वादी की वाद संपत्ति के बारे में पैतृक या सहदायिकी संपत्ति होने की दलील में कोई विशेषता, चरित्र या अवयव गठित नहीं होता है, वादी/अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल की प्रतिकूल विक्रय विलेखों के बारे में आरम्भ में ही दी गई दलील को, विधिक आवश्यकता या संपदा के फायदे के लिए प्रभावी उनके प्रतिकूल साक्ष्य द्वारा वैधता दर्शित करने के अभाव में, कोई संरक्षण प्राप्त नहीं होता है । इसमें इसके पश्चात् अभिलिखित कारणों से दोनों विद्वान् निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए निष्कर्ष में कोई हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है ।

9. इस न्यायालय ने अभिलेख पर के सम्पूर्ण साक्ष्य का मूल्यांकन किया है । वादी की प्रेरणा पर प्रस्तुत मौखिक साक्ष्य के अलावा, पूर्ववर्ती दोनों पुरुष वंशज के हित-पूर्वाधिकारियों या दोनों नानक चन्द और भाग चन्द के पूर्वजों के पक्ष में वाद संपत्ति के बारे में निर्विवाद तौर पर अनुप्रमाणित उत्तराधिकार के नामांतरणों द्वारा उल्लिखित कोई भी उपयुक्त और सुसंगत दस्तावेजी साक्ष्य मौजूद नहीं है । दोनों नानक चन्द और भाग चन्द के ठीक पूर्ववर्ती दोनों पुरुष वंशजों के पक्ष में वाद संपत्ति के बारे में अनुप्रमाणित पूर्वोक्त निर्विवाद नामांतरणों के अभाव में, यह न्यायालय वाद संपत्ति के बारे में यह निष्कर्ष निकालने के लिए आबद्ध है कि इसमें पैतृक संपत्ति होने के लिए कोई पूर्वाभास गुण नहीं है । परिणामतः, भाग चन्द द्वारा प्रतिवादियों/प्रत्यर्थियों के पक्ष में प्रतिकूल विक्रय विलेखों के अधीन वाद संपत्ति का अन्यसंक्रामण करना विधिमान्य के साथ-ही-साथ विधिक है । इस तथ्य के होते हुए भी कि इसके लिए प्रभावी विधिक आवश्यकता या संपदा के फायदे के लिए कोई आधार साबित नहीं किया गया है । यद्यपि, अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा जमाबंदी प्रदर्श सी-1 और जमाबंदी

प्रदर्श सी-2 का अवलंब लिया गया है । तथापि, जब वाद संपत्ति के बारे में क्रमशः पूर्वोक्त जमाबंदियों में देवी सरवारी के स्वामित्व और उमी के स्वामित्व को अभिलिखित होना चित्रित किया गया था तो सुस्पष्टतः निर्विवाद तौर पर इसे धारित करने के लिए नानक चन्द और भाग चन्द के ठीक पूर्व दो पुरुष वंशज, हित-पूर्वाधिकारी के स्वामित्व को दर्शित करने के लिए वादी/अपीलार्थी को कोई सहायता नहीं मिल सकती है ।

10. यद्यपि, वर्ष 1986-87 से संबंधित जमाबंदी प्रदर्श सी-3 में भाग चन्द द्वारा वाद संपत्ति को धारित और कब्जे के तथ्य को अभिलिखित किया गया है । तथापि, उसे अपने से ठीक पूर्व दो पुरुष वंशज हित-पूर्वाधिकारियों से वाद भूमि में नानक चन्द के साथ हक अर्जित करने के बारे में कोई वर्णन नहीं किया गया है जिससे कि वाद संपत्ति की प्रकृति, विशेषता और लक्षण से वाद संपत्ति के पैतृक या सहदायिकी संपत्ति होने के बारे में निष्कर्ष निकाला जा सके ।

11. ऐसा होते हुए भी, यह प्रतीत होता है कि इस न्यायालय के समक्ष आक्षेपित विक्रय विलेखों के विक्रेता ने हिमाचल प्रदेश अभिधृति भूमि सुधार अधिनियम की धारा 104 के स्वतः प्रवर्तन द्वारा वाद संपत्ति के स्वामियों के अधीन गैर-अधिभोगी किराएदार की हैसियत से स्वामी के रूप में उसमें हक अर्जित कर लिया था । अतएव, आवश्यक तौर पर जब स्वतः कानूनी प्रवर्तन द्वारा वाद संपत्ति में हक अर्जित कर लिया था तो भाग चन्द द्वारा वाद संपत्ति में हक अर्जित करने के उक्त तरीके को सुस्पष्टतः उसके स्व-अर्जित संपत्ति की पुष्टि होती है । परिणामतः, जब वाद संपत्ति स्वयं स्वतः अर्जित की जाती है तो वह प्रत्यर्थियों/प्रतिवादियों के पक्ष में इसका हस्तांतरण करने के लिए निष्पादित रजिस्ट्री विलेखों द्वारा अन्यसंक्रामण करने में सक्षम हो गया है ।

12. उपर्युक्त के अतिरिक्त, विद्वान् उप-न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी, कुल्लू द्वारा प्रतिवादी टेक चन्द द्वारा वादी के पिता श्री अल्लू राम और श्री वेदू राम के विरुद्ध संस्थित स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश के लिए वाद में डिक्री प्रदर्श डी-2 के विरुद्ध प्रस्तुत अपील को भी विद्वान् जिला न्यायाधीश द्वारा विद्वान् विचारण न्यायालय के निष्कर्षों प्रदर्श डी-2 की पुष्टि करते हुए खारिज कर दिया गया था, इसके अतिरिक्त, इस न्यायालय ने दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अल्लू के विरुद्ध अभिलिखित समवर्ती निष्कर्षों की प्रदर्श डी-1 द्वारा पुष्टि करते हुए, यह निष्कर्ष निकाला था कि वादी अपने पिता, जिसे प्रतिवादी के रूप में पूर्ववर्ती वाद में अभिवाचित किया गया था, के माध्यम से टेक चन्द, इसमें के प्रतिवादी द्वारा संस्थित वादपत्र में प्रतिकूल प्रतिदावा

संस्थित करते हुए, विक्रय विलेखों को आक्षेपित किया था, टेक चन्द द्वारा इसमें दावाकृत अनुतोषों को मंजूर नहीं किए जाने योग्य मानते हुए, यह अभिनिर्धारित किया था कि विक्रय विलेखों से इसमें यथाप्राथित तथ्य की वैधता अभिनिर्धारित नहीं की जा सकती है विनिर्दिष्टतया तब जब वे वाद संस्थित करने के पूर्व निष्पादित हुए थे, इसके अतिरिक्त, वाद संपत्ति के पुनः स्थापन के अनुतोष की ईप्सा करने के साथ इसमें के प्रतिवादी/वादी टेक चन्द के वादपत्र में प्रतिकूल प्रतिदावा संस्थित करते हुए, उसका लोप किया गया था, इसलिए, यह न्यायालय यह निष्कर्ष निकालने के लिए आबद्ध है कि विबंधन का आधार उसके द्वारा विक्रय विलेखों के लिए विलम्बित है । भाग चन्द द्वारा प्रतिवादियों के पक्ष में वाद संपत्ति के बारे में निष्पादित विक्रय विलेखों को आक्षेपित करने के प्रक्रम पर विबंधन के सिद्धांत को वादी के विरुद्ध तत्काल उठाया जाना चाहिए था जो सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "सी. पी. सी." कहा गया है) के आदेश 2 के नियम 2 के उपबंधों में उल्लिखित, जिसके उपबंध इसमें इसके पश्चात् उद्धृत किए गए हैं, चूंकि वादी के पिता अल्लू ने इसमें के प्रतिवादी/वादी टेक चन्द द्वारा संस्थित वादपत्र में लिखित कथन फाइल करते समय उपधारा (1) का अवलंब लिया है, इसमें सम्मिलित प्रतिकूल प्रतिदावा से सम्पूर्ण वाद हेतुक भी विक्रय विलेखों की वैधता से प्रभावित होता है जो उपधारा (2) में समाविष्ट परिणामों के बारे में उसकी ओर से पूर्वोक्त लोप किया गया है, अब परित्यक्त या प्रकटीकरण करने के बारे में तत्पश्चात्, इसके बारे में कोई दावा संस्थित करते हुए वाद हेतुक दर्शित करना होता है । इसके अलावा, अब इसमें का वादी/प्रतिवादी पूर्वोक्त कथित कारणों से वाद हेतुक का नवीकरण नहीं करा सकता है । सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 2 का नियम 2 निम्नलिखित है :–

> "2. **वाद के अन्तर्गत संपूर्ण दावा होगा** – (1) हर वाद के अन्तर्गत वह पूरा दावा होगा जिसे उस वाद हेतुक के विषय में करने का वादी हकदार है, किन्तु वादी वाद को किसी न्यायालय की अधिकारिता के भीतर लाने की दृष्टि से अपने दावे के किसी भाग का त्याग कर सकेगा ।
>
> (2) **दावे के भाग का त्याग** – जहां वादी अपने दावे के किसी भाग के बारे में वाद लाने का लोप करता है या उसे साशय त्याग देता है वहां उसके पश्चात् वह इस प्रकार लोप किए गए या त्यक्त भाग के बारे में वाद नहीं लाएगा ।
>
> (3) **कई अनुतोषों में से एक के लिए वाद लाने का लोप** – एक

ही वाद हेतुक के बारे में एक से अधिक अनुतोष पाने का हकदार व्यक्ति ऐसे सभी अनुतोषों या उनमें से किसी के लिए वाद ला सकेगा, किन्तु यदि वह ऐसे सभी अनुतोषों के लिए वाद लाने का लोप न्यायालय की इजाजत के बिना करता है तो उसके पश्चात् वह इस प्रकार लोप किए गए किसी भी अनुतोष के लिए वाद नहीं लाएगा ।"

सुस्पष्टतः, यह न्यायालय, प्रतिवादी टेक चन्द द्वारा वादी/अपीलार्थी के पिता के विरुद्ध स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश के लिए वाद फाइल करने के पूर्व निष्पादित विक्रय विलेखों के माध्यम से वादी की प्रेरणा पर आक्षेपित विलम्बित विक्रय विलेखों के बारे में निष्कर्ष निकालने के लिए आबद्ध है, विनिर्दिष्टतया तब जब इसमें के प्रतिवादी टेक चन्द के वादपत्र में उसके लिखित कथन के साथ प्रतिकूल प्रतिदावा फाइल किया था और इसमें के वादी ने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 2 के नियम 2 के उपधारा (2) के अनुसरण में निष्कर्ष निकालने में लोप किया था जो उसने तत्पश्चात् विबंधन के माध्यम से उस तरीके से अपने दावे को पुनः उठाने के लिए वर्तमान वाद में फाइल किया था, जिससे वह संबंधित है ।

13. पूर्वोक्त चर्चा से, यह तथ्य प्रकट होते हैं कि विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय के साथ ही विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा भी निकाले गए निष्कर्ष अभिलेख पर के साक्ष्यों के समुचित और बुद्धिमत्तापूर्ण विवेचन पर आधारित हैं । निष्कर्षों को निकालते समय विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय के साथ ही विद्वान् विचारण न्यायालय ने विचार करने में कोई सुसंगत और प्रतिकूल सामग्रियों को अपवर्जित नहीं किया है । तद्नुसार, विधि के सारवान् प्रश्न का उत्तर प्रतिवादियों/प्रत्यर्थियों के पक्ष में और वादी/अपीलार्थी के विरुद्ध दिया जाता है ।

14. उपर्युक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, वर्तमान नियमित द्वितीय अपील खारिज की जाती है । परिणामतः, दोनों विद्वान् निचले न्यायालयों द्वारा दिए गए निर्णय और डिक्रियां कायम रखी जाती हैं और पुष्ट की जाती हैं । सभी लम्बित आवेदनों को भी निपटाया जाता है । खर्चे का कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

क.

मनसा देवी (श्रीमती)

बनाम

श्री वरिन्दर कुमार और अन्य

तारीख 16 जून, 2016

न्यायमूर्ति चन्दर भूषण बरोवालिया

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 100 [हिमाचल प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम की धारा 46] – द्वितीय अपील – वाद सम्पत्ति का पूर्ण विभाजन – प्रत्येक सह-अंशधारियों का अपने-अपने हिस्से पर कब्जे सहित स्वामित्व स्थापित होना – विभाजन को आक्षेपित करना – आक्षेप निरस्त होना – यदि अभिलेख पर यह साबित हो जाता है कि वाद सम्पत्ति का पूर्ण विभाजन हो चुका है और प्रत्येक सह-अंशधारियों ने अपने-अपने हिस्से पर कब्जे सहित स्वामित्व प्राप्त कर लिया है तो वाद में विभाजन को आक्षेपित करते हुए सह-अंशधारी के रूप में अन्य के हिस्से की सम्पत्ति में दावा करना गलत, अवैध और अविधिमान्य होगा और ऐसा दावा रद्द किए जाने योग्य है ।

वर्तमान मामले में, संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि प्रत्यर्थियों/वादियों ने चतर सिंह जो तत्कालीन प्रतिवादी था और वर्तमान अपीलार्थी (मनसा देवी) का पति था, के विरुद्ध घोषणा और स्थायी व्यादेश के लिए एक वाद फाइल किया था जो टीका खोरार, मौजा गलौरे, तहसील नादौन, जिला हमीरपुर, हिमाचल प्रदेश में स्थित खाता सं. 19, खतौनी सं. 43, पुराना खसरा सं. 91 और नया खेवट सं. 22, खतौनी सं. 22, खसरा सं. 205 में समाविष्ट 5 कनाल, 1 मरला वाद भूमि के में, यह अभिकथन करते हुए कि उनके हित-पूर्वाधिकारी श्री चौधरी पुत्र श्री तोता वर्ष 1910-11 में बंदोबस्त के समय पर वाद भूमि के अनन्य कब्जे में सह-अंशधारियों के रूप में अभिलिखित थे और वाद भूमि विभाजन होने के पश्चात् वाद भूमि उनके हिस्से में आ गई थी । इस प्रभाव का उसके पक्ष में, वर्ष 1919 का नामांतरण सं. 9 अनुप्रमाणित हुआ था । तारीख 2 मई, 1919 को विनिश्चित 1986 का वाद सं. 221, शीर्षक बारर बनाम चूहा वाले विभाजन वाद में, वादियों के हित-पूर्वाधिकारी श्री चौधरी के हिस्से में वाद भूमि आ गई थी । उन्होंने यह भी प्रकथन किया कि वर्ष 1919-20 में जमाबंदी

तैयार होने के समय पर राजस्व कर्मचारियों की भूल के कारण वाद भूमि में श्री तोता, श्री चौधरी के पिता का स्वामित्व और कब्जा दर्शित हो गया था । उन्होंने यह भी प्रकथन किया कि उनके हित-पूर्वाधिकारी श्री चौधरी वाद भूमि के कब्जे सहित अनन्य स्वामी थे और उसे उसके पिता मृतक श्री तोता के नाम में अन्तरित नहीं किया जा सकता था । इसलिए, वाद भूमि की प्रविष्टि जो वर्ष 1919-20 में श्री तोता के पक्ष में की गई थी, अवैध, गलत और मनमाना है और अपास्त किए जाने तथा सुधार किए जाने योग्य है । उन्होंने यह भी प्रकथन किया कि उनके हित-पूर्वाधिकारी के कब्जे में कभी भी किसी भी व्यक्ति द्वारा निर्विघ्न नहीं डाला गया था और इसलिए, भूल का पूर्ववर्ती में पता नहीं लग सका । उन्होंने यह भी प्रकथन किया कि श्री तोता की मृत्यु के पश्चात्, वाद भूमि, उसके दो पुत्रों साहिब दित्ता और चौधरी, जो वर्ष 1927-28 में उनका हित-पूर्वाधिकारी था, के नाम में नामांतरित हुआ था । परिणामतः, वर्ष 1931-32 के लिए पश्चात्वर्ती जमाबंदी में, वाद भूमि उनके हित-पूर्वाधिकारी श्री चौधरी और उसके भाई साहिब दित्ता के स्वामित्व में दर्शित किया गया था किन्तु, श्री चौधरी का अनन्य कब्जा दर्शित किया गया था । उन्होंने यह भी कथन किया कि श्री तोता का नाम वर्ष 1920 के लिए जमाबंदी में गलत तौर पर समाविष्ट हो गया था और तत्पश्चात्, साहिब दित्ता और उसके वंशज वाद भूमि के आधे हिस्से तक के स्वामी दर्शित किए गए थे और ऐसा परिवर्तन राजस्व कर्मचारियों द्वारा बिना किसी कारण या आदेश द्वारा किया गया था जो अवैध, अकृत और शून्य था और यह अपास्त किए जाने योग्य है । उन्होंने यह कथन किया कि वे और उनके पूर्व, उनके हित-पूर्वाधिकारी ने वाद भूमि के ऊपर फलों का बगीचा लगाते हुए वाद भूमि में सुधार किए थे और वरिन्दर कुमार बनाम चतर सिंह शीर्षक के नाम से वाद भूमि के बारे में राजस्व प्रविष्टियों में सुधार करने के लिए कलक्टर, हमीरपुर के न्यायालय में वर्ष 1994 की कार्यवाही सं. 12 भी फाइल की थी जिसे जिला कलक्टर द्वारा तारीख 31 मार्च, 1986 के अपने आदेश द्वारा मंजूर कर लिया गया था । उन्होंने यह भी प्रकथन किया कि तत्कालीन प्रतिवादी, अपीलार्थी का हित-पूर्वाधिकारी ने जिला कलक्टर, हमीरपुर के आदेश के विरुद्ध प्रभागीय आयुक्त के समक्ष एक अपील फाइल की थी जिन्होंने तारीख 18 दिसम्बर, 1991 के आदेश द्वारा नए सिरे से विनिश्चय करने के लिए मामले को कलक्टर के पास वापस भेज दिया था । वित्त आयुक्त ने तारीख 16 मार्च, 1992 के अपने आदेश द्वारा प्रभागीय आयुक्त के तारीख

18 दिसम्बर, 1991 के आदेश को विधिमान्य अभिनिर्धारित कर दिया जिसके द्वारा पक्षकारों को हिमाचल प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम की धारा 46 के अधीन और इस आदेश के अनुसरण में सिविल न्यायालय के समक्ष उपचार प्राप्त करने का निर्देश दिया था, जिसके समक्ष वाद भूमि के बारे में, घोषणा और व्यादेश प्राप्त करने के लिए वाद फाइल किया गया था । चतर सिंह, वर्तमान अपीलार्थी का हित-पूर्वाधिकारी ने लिखित कथन फाइल किया था और वाद का विरोध किया था । उसने यह कथन किया कि श्री तोता, पक्षकारों का हित-पूर्वाधिकारी था जिसके दो पुत्र अर्थात् साहिब दित्ता और चौधरी थे तथा वह साहिब दित्ता का पुत्र है जबकि वादी, श्री चौधरी के हित-पूर्वाधिकारी हैं । उसने यह भी कथन किया कि वाद भूमि के बारे में कोई विभाजन नहीं हुआ था और यदि उसके बारे में कोई नामांतरण हुआ है तो वह अकृत और शून्य है । उसने यह भी अभिकथन किया कि श्री तोता, पक्षकारों के सामान्य पूर्वज की मृत्यु के पश्चात् वाद भूमि के साथ उसकी अन्य सम्पत्तियां साहिब दित्ता और श्री चौधरी द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त कर ली गई थीं और साहिब दित्ता की मृत्यु के पश्चात् वह अपने हिस्से को उत्तराधिकार में प्राप्त कर लिया था और श्री चौधरी के हिस्से को भगत और प्रताप तथा वर्तमान अपीलार्थियों द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त कर लिया गया था । उसने विनिर्दिष्टतः यह प्रकथन किया कि अब, वह और वादी, स्वामियों के रूप में वाद भूमि के कब्जे में हैं तथा राजस्व अभिलेख में प्रविष्टियां सही हैं । उसने यह भी प्रकथन किया कि श्री तोता के जीवन काल में, वादियों के हित-पूर्वाधिकारी श्री चौधरी को भूमि आबंटित होने का प्रश्न उद्भूत नहीं हुआ था और वाद भूमि समतल होने के नाते श्री चौधरी को आबंटित नहीं हो सकी थी क्योंकि उसके पिता के जीवन काल में उसके नाम में भूमि संपत्ति नहीं थी । उसने यह भी प्रकथन किया कि उस समय पर पक्षकारों के बीच विभाजन वाद लम्बित था और इस तथ्य को उनके द्वारा कभी भी नहीं उठाया गया था, इसलिए, इसे अब नहीं उठाया जा सकता है । उसने यह भी प्रकथन किया कि वाद समयावधि के भीतर नहीं है और वादी के पक्षकथन से पूरी तरह से इनकार किया है । प्रत्युत्तर में, वादियों द्वारा सभी अभिकथनों को पुनः दोहराया गया था और इसके विपरीत लिखित कथन में उन सभी का उनके द्वारा विरोध किया गया था । अपीलार्थी ने प्रथम अपील फाइल की थी और विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने अपील खारिज कर दी थी । इससे व्यथित होकर वर्तमान द्वितीय अपील फाइल की गई । न्यायालय द्वारा इस द्वितीय अपील को

खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – मामले के अभिलेखों का परिशीलन करने से, दस्तावेजी साक्ष्यों से अभिलेख पर यह साबित होता है कि वाद भूमि पूर्व में, वादियों/प्रत्यर्थियों के हित-पूर्वाधिकारी श्री चौधरी के अनन्य कब्जे में थी और वर्ष 1919 में विभाजन के दौरान यह उसे आबंटित हो गई थी और वह नामांतरण प्रदर्श पी. एच. द्वारा अनन्य कब्जे सहित इसका स्वामी हो गया था और उसकी मृत्यु के पश्चात् स्वाभाविक तौर पर वाद भूमि उसके उत्तराधिकारियों अर्थात् वर्तमान प्रत्यर्थियों द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त कर ली गई थी और इसलिए, वे वाद भूमि के कब्जे सहित स्वामी हैं और उनका कब्जा अभिलेखों से साबित होता है जैसा कि वादियों/प्रत्यर्थियों द्वारा मौखिक साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जो अभिलेख पर दस्तावेजी साक्ष्य के अनुसरण में है । इसलिए, विद्वान् निचले न्यायालयों ने यह सही ही निष्कर्ष निकाला है कि वादी/प्रत्यर्थी, वाद भूमि के कब्जे सहित स्वामी हैं और वादियों के साथ वाद भूमि के कब्जे में सह-स्वामी के रूप में प्रतिवादी के पक्ष में प्रविष्टि सभी प्रकार से गलत है और यह सुधार किए जाने योग्य है । वादियों/प्रत्यर्थियों द्वारा प्रस्तुत विभाजन का विलेख भी अभिलेख पर है जो प्रदर्श पी. एस. से प्रदर्श पी. टी. है । प्रदर्श पी. यू. यह स्पष्ट करता है कि पुराना खसरा सं. 91 मात्र 5.1 कनाल में समाविष्ट वाद भूमि, वादियों के हित-पूर्वाधिकारी श्री चौधरी को आबंटित की गई है । इसलिए, यह स्पष्ट है कि वादियों/प्रत्यर्थियों के हित-पूर्वाधिकारी अर्थात् श्री चौधरी पुत्र श्री तोता विभाजन के पश्चात् वाद भूमि के अनन्य कब्जे सहित स्वामी हो गए थे और नामांतरण प्रदर्श पी. एच. भी वर्ष 1919-20 के लिए जमाबंदी वर्ष में अग्रेषित हो गया था । प्रदर्श पी. जी. और राजस्व विभाग ने वाद भूमि के स्वामित्व और कब्जे की प्रविष्टि श्री चौधरी के नाम में करने के बजाय उसके पिता श्री तोता के नाम में प्रविष्टि की थी और तत्पश्चात् श्री तोता की मृत्यु के पश्चात् उत्तराधिकार के आधार पर श्री चौधरी और साहिब दित्ता के पक्ष में प्रविष्टि की थी । इसलिए, वर्ष 1919-20 के लिए जमाबंदी में की गई स्वामित्व की यह प्रविष्टि प्रदर्श पी. जी. सभी प्रकार से गलत है और बिना किसी आधार के है । इस प्रकार, क्रम सं. 1 पर विधि के सारवान् प्रश्न का उत्तर देते हुए, यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए निष्कर्ष विधि के अनुसरण में हैं क्योंकि यह वादियों/प्रत्यर्थियों द्वारा प्रस्तुत तर्कपूर्ण और विश्वसनीय साक्ष्य जमाबंदी प्रदर्श पी-4 से प्रदर्श डी-6 से संबद्ध विधि की उपधारणा के अनुसरण में है ।

जहां तक परिसीमा अवधि के प्रश्न का संबंध है, यह अभिवाक् प्रतिवादी/अपीलार्थी को उपलब्ध नहीं है क्योंकि वादपत्र में, वादियों द्वारा किए गए अभिकथनों के अनुसार, उन्होंने वाद भूमि के बारे में, राजस्व प्रविष्टियों में सुधार के लिए कलक्टर, हमीरपुर के न्यायालय में कार्यवाही सं. 12/84 फाइल की थी जिसे कलक्टर द्वारा तारीख 31 मार्च, 1986 के अपने आदेश द्वारा मंजूर कर लिया गया था, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि वर्ष 1919-20 में की गई प्रविष्टि गलत थी और उसमें फर्द बदर के माध्यम से सुधार किया जाता है । वादी का यह पक्षकथन अभिलेख पर कलक्टर के आदेश प्रदर्श पी. वाई. से साबित होता है । इस आदेश के विरुद्ध, प्रतिवादी/अपीलार्थी ने प्रभागीय आयुक्त के समक्ष एक अपील फाइल की जिन्होंने मामले को कलक्टर के पास वापस भेज दिया और कलक्टर ने तारीख 28 दिसम्बर, 1990 के अपने आदेश द्वारा पक्षकारों को अपनी शिकायतों का प्रतितोष पाने के लिए सिविल न्यायालय में जाने का निर्देश दिया जिसके विरुद्ध वादियों ने प्रभागीय आयुक्त, मंडी के समक्ष एक अपील फाइल की, जिन्होंने तारीख 18 दिसम्बर, 1991 के अपने आदेश द्वारा कलक्टर के आदेश को कायम रखा और पक्षकारों को हिमाचल प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम की धारा 46 के अधीन उपचार प्राप्त करने का निर्देश दिया । इस आदेश के विरुद्ध वादियों ने पुनः एक अपील, वित्त आयुक्त के समक्ष फाइल की जिन्होंने तारीख 16 मार्च, 1992 के अपने आदेश द्वारा प्रभागीय आयुक्त, मंडी के आदेश को कायम रखा । ये सभी तथ्य विवादित नहीं हैं और तत्कालीन वित्त आयुक्त (अपील), हिमाचल प्रदेश द्वारा पारित तारीख 16 मार्च, 1992 के आदेश प्रदर्श पी. पी. से स्पष्ट हैं । वादियों को तारीख 16 मार्च, 1992 के इस आदेश से 3 वर्ष के भीतर वाद फाइल करने की स्वतंत्रता दी गई थी । इस मत को ध्यान में रखते हुए, सारवान् प्रश्न सं. 2 का भी उत्तर दिया जाता है, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि वाद परिसीमा अवधि के भीतर है । विद्वान् निचले न्यायालयों ने अभिलेख पर के साक्ष्यों का समुचित तौर पर मूल्यांकन किया है और वाद में सही ही डिक्री पारित की है । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा कोई भी अनियमितता या अवैधता कारित नहीं की गई है और इसलिए, इस न्यायालय द्वारा कोई हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है । आक्षेपित निर्णय और डिक्री विधि की दृष्टि में कायम रखे जाने योग्य है । (पैरा 6, 7, 8 और 9)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2007 की नियमित द्वितीय अपील सं. 193.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री के. डी. सूद, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ धनजंय शर्मा, अधिवक्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री भुवनेश शर्मा, अधिवक्ता

न्यायमूर्ति चन्दर भूषण बरोवालिया – वर्तमान अपील, अपीलार्थी द्वारा अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, हमीरपुर द्वारा 2004 की सिविल अपील सं. 7/99/310 में तारीख 27 अगस्त, 2005 के निष्कर्षों को चुनौती देते हुए, फाइल की गई है जिसके द्वारा विद्वान् अपर जिला और सेशन न्यायाधीश ने उप-न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी, हमीरपुर द्वारा 1993 की वाद सं. 129 में पारित तारीख 2 दिसम्बर, 1998 के निर्णय और डिक्री की पुष्टि कर दी थी ।

2. वर्तमान अपील में उद्भूत होने वाले संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि प्रत्यर्थियों/वादियों ने चतर सिंह जो तत्कालीन प्रतिवादी था और वर्तमान अपीलार्थी (मनसा देवी) का पति था, के विरुद्ध घोषणा और स्थायी व्यादेश के लिए एक वाद फाइल किया था जो टीका खोरार, मौजा गलौरे, तहसील नादौन, जिला हमीरपुर, हिमाचल प्रदेश में स्थित खाता सं. 19, खतौनी सं. 43, पुराना खसरा सं. 91 और नया खेवट सं. 22, खतौनी सं. 22, खसरा सं. 205 में समाविष्ट 5 कनाल, 1 मरला वाद भूमि के में, यह अभिकथन करते हुए कि उनके हित-पूर्वाधिकारी श्री चौधरी पुत्र श्री तोता वर्ष 1910-11 में बंदोबस्त के समय पर वाद भूमि के अनन्य कब्जे में सह-अंशधारियों के रूप में अभिलिखित थे और वाद भूमि विभाजन होने के पश्चात् वाद भूमि उनके हिस्से में आ गई थी । इस प्रभाव का उसके पक्ष में, वर्ष 1919 का नामांतरण सं. 9 अनुप्रमाणित हुआ था । तारीख 2 मई, 1919 को विनिश्चित 1986 का वाद सं. 221, शीर्षक बारर बनाम चूहा वाले विभाजन वाद में, वादियों के हित-पूर्वाधिकारी श्री चौधरी के हिस्से में वाद भूमि आ गई थी । उन्होंने यह भी प्रकथन किया कि वर्ष 1919-20 में जमाबंदी तैयार होने के समय पर राजस्व कर्मचारियों की भूल के कारण वाद भूमि में श्री तोता, श्री चौधरी के पिता का स्वामित्व और कब्जा दर्शित हो गया था । उन्होंने यह भी प्रकथन किया कि उनके हित-पूर्वाधिकारी श्री चौधरी वाद भूमि के कब्जे सहित अनन्य स्वामी थे और उसे उसके पिता मृतक श्री तोता के नाम में अन्तरित नहीं किया जा सकता था । इसलिए, वाद भूमि की प्रविष्टि जो वर्ष 1919-20 में श्री तोता के पक्ष में की गई थी, अवैध,

गलत और मनमाना है और अपास्त किए जाने तथा सुधार किए जाने योग्य है । उन्होंने यह भी प्रकथन किया कि उनके हित-पूर्वाधिकारी के कब्जे में कभी भी किसी भी व्यक्ति द्वारा निर्विघ्न नहीं डाला गया था और इसलिए, भूल का पूर्ववर्ती में पता नहीं लग सका । उन्होंने यह भी प्रकथन किया कि श्री तोता की मृत्यु के पश्चात्, वाद भूमि, उसके दो पुत्रों साहिब दित्ता और चौधरी, जो वर्ष 1927-28 में उनका हित-पूर्वाधिकारी था, के नाम में नामांतरित हुआ था । परिणामतः, वर्ष 1931-32 के लिए पश्चात्वर्ती जमाबंदी में, वाद भूमि उनके हित-पूर्वाधिकारी श्री चौधरी और उसके भाई साहिब दित्ता के स्वामित्व में दर्शित किया गया था किन्तु, श्री चौधरी का अनन्य कब्जा दर्शित किया गया था । उन्होंने यह भी कथन किया कि श्री तोता का नाम वर्ष 1920 के लिए जमाबंदी में गलत तौर पर समाविष्ट हो गया था और तत्पश्चात्, साहिब दित्ता और उसके वंशज वाद भूमि के आधे हिस्से तक के स्वामी दर्शित किए गए थे और ऐसा परिवर्तन राजस्व कर्मचारियों द्वारा बिना किसी कारण या आदेश द्वारा किया गया था जो अवैध, अकृत और शून्य था और यह अपास्त किए जाने योग्य है । उन्होंने यह कथन किया कि वे और उनके पूर्व, उनके हित-पूर्वाधिकारी ने वाद भूमि के ऊपर फलों का बगीचा लगाते हुए वाद भूमि में सुधार किए थे और वरिन्दर कुमार बनाम चतर सिंह शीर्षक के नाम से वाद भूमि के बारे में राजस्व प्रविष्टियों में सुधार करने के लिए कलक्टर, हमीरपुर के न्यायालय में वर्ष 1994 की कार्यवाही सं. 12 भी फाइल की थी जिसे जिला कलक्टर द्वारा तारीख 31 मार्च, 1986 के अपने आदेश द्वारा मंजूर कर लिया गया था । उन्होंने यह भी प्रकथन किया कि तत्कालीन प्रतिवादी, अपीलार्थी का हित-पूर्वाधिकारी ने जिला कलक्टर, हमीरपुर के आदेश के विरुद्ध प्रभागीय आयुक्त के समक्ष एक अपील फाइल की थी जिन्होंने तारीख 18 दिसम्बर, 1991 के आदेश द्वारा नए सिरे से विनिश्चय करने के लिए मामले को कलक्टर के पास वापस भेज दिया था ।

वित्त आयुक्त ने तारीख 16 मार्च, 1992 के अपने आदेश द्वारा प्रभागीय आयुक्त के तारीख 18 दिसम्बर, 1991 के आदेश को विधिमान्य अभिनिर्धारित कर दिया जिसके द्वारा पक्षकारों को हिमाचल प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम की धारा 46 के अधीन और इस आदेश के अनुसरण में सिविल न्यायालय के समक्ष उपचार प्राप्त करने का निर्देश दिया था, जिसके समक्ष वाद भूमि के बारे में, घोषणा और व्यादेश प्राप्त करने के लिए वाद फाइल किया गया था । चतर सिंह, वर्तमान अपीलार्थी का हित-

पूर्वाधिकारी ने लिखित कथन फाइल किया था और वाद का विरोध किया था । उसने यह कथन किया कि श्री तोता, पक्षकारों का हित-पूर्वाधिकारी था जिसके दो पुत्र अर्थात् साहिब दित्ता और चौधरी थे तथा वह साहिब दित्ता का पुत्र है जबकि वादी, श्री चौधरी के हित-पूर्वाधिकारी हैं । उसने यह भी कथन किया कि वाद भूमि के बारे में कोई विभाजन नहीं हुआ था और यदि उसके बारे में कोई नामांतरण हुआ है तो वह अकृत और शून्य है । उसने यह भी अभिकथन किया कि श्री तोता, पक्षकारों के सामान्य पूर्वज की मृत्यु के पश्चात् वाद भूमि के साथ उसकी अन्य सम्पत्तियां साहिब दित्ता और श्री चौधरी द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त कर ली गई थीं और साहिब दित्ता की मृत्यु के पश्चात् वह अपने हिस्से को उत्तराधिकार में प्राप्त कर लिया था और श्री चौधरी के हिस्से को भगत और प्रताप तथा वर्तमान अपीलार्थियों द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त कर लिया गया था । उसने विनिर्दिष्टतः यह प्रकथन किया कि अब, वह और वादी, स्वामियों के रूप में वाद भूमि के कब्जे में हैं तथा राजस्व अभिलेख में प्रविष्टियां सही हैं । उसने यह भी प्रकथन किया कि श्री तोता के जीवन काल में, वादियों के हित-पूर्वाधिकारी श्री चौधरी को भूमि आबंटित होने का प्रश्न उद्भूत नहीं हुआ था और वाद भूमि समतल होने के नाते श्री चौधरी को आबंटित नहीं हो सकी थी क्योंकि उसके पिता के जीवन काल में उसके नाम में भूमि संपत्ति नहीं थी । उसने यह भी प्रकथन किया कि उस समय पर पक्षकारों के बीच विभाजन वाद लम्बित था और इस तथ्य को उनके द्वारा कभी भी नहीं उठाया गया था, इसलिए, इसे अब नहीं उठाया जा सकता है । उसने यह भी प्रकथन किया कि वाद समयावधि के भीतर नहीं है और वादी के पक्षकथन से पूरी तरह से इनकार किया है । प्रत्युत्तर में, वादियों द्वारा सभी अभिकथनों को पुनः दोहराया गया था और इसके विपरीत लिखित कथन में उन सभी का उनके द्वारा विरोध किया गया था । अपीलार्थी ने प्रथम अपील फाइल की थी और विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने अपील खारिज कर दी थी । अतएव, वर्तमान अपील फाइल की गई जिसे निम्नलिखित विधि के सारवान् प्रश्नों पर स्वीकार किया गया है :–

> "(1) क्या विद्वान् निचले न्यायालय के निष्कर्ष, मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों के गलत परिशीलन और पिछले 60 वर्षों के लिए संगत राजस्व अभिलेखों से संबद्ध सत्य की उपधारणा विशिष्टतया, वर्ष 1919-20 के लिए जमाबंदी प्रदर्श डी-4, वर्ष 1923-24 के लिए जमाबंदी डी-5 और वर्ष 1931-32 के लिए जमाबंदी डी-6 की

अवहेलना पर आधारित होने के नाते अनुचित है ?

(2) क्या वादी का वाद परिसीमा अवधि के भीतर था जब वादी के पास पिछले 60 वर्षों की प्रविष्टियां जानने का अवसर था और मात्र वित्त आयुक्त के आदेश से ही वाद फाइल करने का अधिकार प्रदत्त होता है ?"

3. मैंने, पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना और अभिलेखों का भी परिशीलन किया ।

4. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह तर्क दिया कि निचले न्यायालय के निष्कर्ष अपास्त किए जाने योग्य हैं क्योंकि निचले न्यायालय ने उन अग्राह्य मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों का अवलंब लिया है जिनसे निष्कर्ष दूषित होता है, विशिष्टतया, इस तथ्य से कि श्री चौधरी ने अपने पिता श्री तोता के जीवन काल में संपत्ति उत्तराधिकार में प्राप्त की थी और श्री चौधरी का नाम गलत तौर पर प्रविष्ट हो गया था और वर्ष 1919 में गलत तौर पर श्री तोता के नाम में परिवर्तन हो गया था । प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने यह तर्क दिया कि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री तथा विद्वान् अपील न्यायालय द्वारा उसे कायम रखना, न्यायोचित, सकारण और विधि के अनुसरण में है ।

5. मैंने, पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल के तर्कों का विवेचन किया और सम्पूर्ण अभिलेखों का परिशीलन किया ।

6. इस मामले के अभिलेखों का परिशीलन करने से, दस्तावेजी साक्ष्यों से अभिलेख पर यह साबित होता है कि वाद भूमि पूर्व में, वादियों/प्रत्यर्थियों के हित-पूर्वाधिकारी श्री चौधरी के अनन्य कब्जे में थी और वर्ष 1919 में विभाजन के दौरान यह उसे आबंटित हो गई थी और वह नामांतरण प्रदर्श पी. एच. द्वारा अनन्य कब्जे सहित इसका स्वामी हो गया था और उसकी मृत्यु के पश्चात् स्वाभाविक तौर पर वाद भूमि उसके उत्तराधिकारियों अर्थात् वर्तमान प्रत्यर्थियों द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त कर ली गई थी और इसलिए, वे वाद भूमि के कब्जे सहित स्वामी हैं और उनका कब्जा अभिलेखों से साबित होता है जैसा कि वादियों/प्रत्यर्थियों द्वारा मौखिक साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जो अभिलेख पर दस्तावेजी साक्ष्य के अनुसरण में है । इसलिए, विद्वान् निचले न्यायालयों ने यह सही ही निष्कर्ष निकाला है कि वादी/प्रत्यर्थी, वाद भूमि के कब्जे सहित स्वामी हैं और वादियों के साथ वाद भूमि के कब्जे में सह-स्वामी के रूप में प्रतिवादी के पक्ष में प्रविष्टि सभी

प्रकार से गलत है और यह सुधार किए जाने योग्य है ।

7. वादियों/प्रत्यर्थियों द्वारा प्रस्तुत विभाजन का विलेख भी अभिलेख पर है जो प्रदर्श पी. एस. से प्रदर्श पी. टी. है । प्रदर्श पी. यू. यह स्पष्ट करता है कि पुराना खसरा सं. 91 मात्र 5.1 कनाल में समाविष्ट वाद भूमि, वादियों के हित-पूर्वाधिकारी श्री चौधरी को आबंटित की गई है । इसलिए, यह स्पष्ट है कि वादियों/प्रत्यर्थियों के हित-पूर्वाधिकारी अर्थात् श्री चौधरी पुत्र श्री तोता विभाजन के पश्चात् वाद भूमि के अनन्य कब्जे सहित स्वामी हो गए थे और नामांतरण प्रदर्श पी. एच. भी वर्ष 1919-20 के लिए जमाबंदी वर्ष में अग्रेषित हो गया था । प्रदर्श पी. जी. और राजस्व विभाग ने वाद भूमि के स्वामित्व और कब्जे की प्रविष्टि श्री चौधरी के नाम में करने के बजाय उसके पिता श्री तोता के नाम में प्रविष्टि की थी और तत्पश्चात् श्री तोता की मृत्यु के पश्चात् उत्तराधिकार के आधार पर श्री चौधरी और साहिब दित्ता के पक्ष में प्रविष्टि की थी । इसलिए, वर्ष 1919-20 के लिए जमाबंदी में की गई स्वामित्व की यह प्रविष्टि प्रदर्श पी. जी. सभी प्रकार से गलत है और बिना किसी आधार के है । इस प्रकार, क्रम सं. 1 पर विधि के सारवान् प्रश्न का उत्तर देते हुए, यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए निष्कर्ष विधि के अनुसरण में हैं क्योंकि यह वादियों/प्रत्यर्थियों द्वारा प्रस्तुत तर्कपूर्ण और विश्वसनीय साक्ष्य जमाबंदी प्रदर्श पी-4 से प्रदर्श डी-6 से संबद्ध विधि की उपधारणा के अनुसरण में है ।

8. जहां तक परिसीमा अवधि के प्रश्न का संबंध है, यह अभिवाक् प्रतिवादी/अपीलार्थी को उपलब्ध नहीं है क्योंकि वादपत्र में, वादियों द्वारा किए गए अभिकथनों के अनुसार, उन्होंने वाद भूमि के बारे में, राजस्व प्रविष्टियों में सुधार के लिए कलक्टर, हमीरपुर के न्यायालय में कार्यवाही सं. 12/84 फाइल की थी जिसे कलक्टर द्वारा तारीख 31 मार्च, 1986 के अपने आदेश द्वारा मंजूर कर लिया गया था, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि वर्ष 1919-20 में की गई प्रविष्टि गलत थी और उसमें फर्द बदर के माध्यम से सुधार किया जाता है । वादी का यह पक्षकथन अभिलेख पर कलक्टर के आदेश प्रदर्श पी. वाई. से साबित होता है । इस आदेश के विरुद्ध, प्रतिवादी/अपीलार्थी ने प्रभागीय आयुक्त के समक्ष एक अपील फाइल की जिन्होंने मामले को कलक्टर के पास वापस भेज दिया और कलक्टर ने तारीख 28 दिसम्बर, 1990 के अपने आदेश द्वारा पक्षकारों को अपनी शिकायतों का प्रतितोष पाने के लिए सिविल न्यायालय में जाने का निर्देश

दिया जिसके विरुद्ध वादियों ने प्रभागीय आयुक्त, मंडी के समक्ष एक अपील फाइल की, जिन्होंने तारीख 18 दिसम्बर, 1991 के अपने आदेश द्वारा कलक्टर के आदेश को कायम रखा और पक्षकारों को हिमाचल प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम की धारा 46 के अधीन उपचार प्राप्त करने का निर्देश दिया । इस आदेश के विरुद्ध वादियों ने पुनः एक अपील, वित्त आयुक्त के समक्ष फाइल की जिन्होंने तारीख 16 मार्च, 1992 के अपने आदेश द्वारा प्रभागीय आयुक्त, मंडी के आदेश को कायम रखा । ये सभी तथ्य विवादित नहीं हैं और तत्कालीन वित्त आयुक्त (अपील), हिमाचल प्रदेश द्वारा पारित तारीख 16 मार्च, 1992 के आदेश प्रदर्श पी. पी. से स्पष्ट हैं । वादियों को तारीख 16 मार्च, 1992 के इस आदेश से 3 वर्ष के भीतर वाद फाइल करने की स्वतंत्रता दी गई थी । इस मत को ध्यान में रखते हुए, सारवान् प्रश्न सं. 2 का भी उत्तर दिया जाता है, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि वाद परिसीमा अवधि के भीतर है ।

9. विद्वान् निचले न्यायालयों ने अभिलेख पर के साक्ष्यों का समुचित तौर पर मूल्यांकन किया है और वाद में सही ही डिक्री पारित की है । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा कोई भी अनियमितता या अवैधता कारित नहीं की गई है और इसलिए, इस न्यायालय द्वारा कोई हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है । आक्षेपित निर्णय और डिक्री विधि की दृष्टि में कायम रखे जाने योग्य है ।

10. पूर्वोक्त कारणों से, अपीलार्थी द्वारा फाइल अपील बिना गुणागुण के है और तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है । तथापि, मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, पक्षकार अपने खर्चे स्वयं वहन करेंगे ।

द्वितीय अपील खारिज की गई ।

क.

बीरबल और अन्य

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य

तारीख 8 जुलाई, 2016

न्यायमूर्ति संदीप शर्मा

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 और 227 [सपठित भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 की धारा 6, 7 और 23] – हिमाचल प्रदेश सरकार द्वारा सड़क निर्माण करने के लिए प्रश्नगत भूमि का लोक प्रयोजनार्थ में अर्जन करना – अर्जित भूमि के एवज में प्रतिकर का संदाय करने से इनकार करना – इस आधार पर कि प्रतिकर के लिए दावा, अत्यधिक और असाधारण विलम्ब से किया गया है – न्यायालय द्वारा इस आधार को खारिज करना – जहां यह साबित कर दिया जाता है कि कोई भूमि लोक हित में अर्जित की गई है तो उसके एवज में युक्तियुक्त प्रतिकर विधि के अनुसरण में देय होता है – राज्य इस आधार पर युक्तियुक्त प्रतिकर देने से इनकार नहीं कर सकता है कि भूमि अर्जन की कार्यवाहियां आरम्भ नहीं की गई हैं और प्रतिकर के लिए दावा, अत्यधिक और असाधारण विलम्ब से फाइल किया गया है ।

वर्तमान मामले में, तथ्य यह हैं कि याचियों से संबंधित भूमि, जिसका वर्णन संबंधित याचिकाओं के पैरा 2 में उपलब्ध है, का प्रत्यर्थियों द्वारा अप्रैल, 1998 के माह में जालौग से गधेरी तक सड़क निर्माण के लिए प्रयोग किया गया है । प्रत्यर्थियों ने अप्रैल, 1998 के माह में पूर्वोक्त सड़क निर्माण का कार्य आरम्भ किया था और पूर्वोक्त सड़क का निर्माण करने के लिए याचियों की भूमि का प्रयोग किया था । अभिवचनों से यह सुझाव मिलता है कि याचियों ने सड़क निर्माण करने के समय आक्षेप उद्भूत किए थे और यह प्रार्थना की थी कि सड़क निर्माण करने के पूर्व प्रत्यर्थियों को भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के अनुसरण में भूमि अर्जित करना चाहिए था और इसके पश्चात् प्रश्नगत सड़क का निर्माण आरम्भ करना चाहिए था । तथापि, प्रत्यर्थियों-विभाग के प्रतिनिधियों/अधिकारियों द्वारा यह वचनबंध दिया गया था कि अर्जन की कार्यवाहियां आरम्भ की जाएंगी और विधि के अनुसरण में प्रतिकर संदत्त किया जाएगा, इसलिए, वर्तमान

याचियों ने अपनी भूमि में से सड़क निर्माण के कार्य को मंजूर कर लिया था । किन्तु, जैसा कि अभिलेखों से प्रकट होता है, कोई प्रतिकर, चाहे जो भी हो, प्रत्यर्थियों द्वारा प्रश्नगत सड़क निर्माण करने में प्रयुक्त उनकी भूमि के बदले में याचियों को कभी संदत्त नहीं किया गया और इस प्रकार, वे रजिस्ट्रीकृत डाक द्वारा मांग नोटिसों के साथ प्रत्यर्थियों पर तामील करने को आबद्ध हुए । किन्तु, याचियों की ओर से जारी नोटिस प्राप्त करने के पश्चात् भी प्रत्यर्थी कोई कार्रवाई करने में असफल रहे । याचियों द्वारा सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के माध्यम से सूचनाएं प्राप्त की गईं जिनमें उन्हें यह सूचित किया गया था कि प्रश्नगत सड़क का निर्माण विभाग द्वारा राज्य के बजट के अधीन वर्ष 1998-2002 के दौरान किया गया था और उस स्थल पर तारकोल के कार्य भी किए गए थे और सड़क का निर्माण आम जनता की मांग पर किया गया था । तथापि, प्रत्यर्थी सं. 3 ने अपने काउंसेल के माध्यम से याची को यह सूचित किया कि चूंकि प्रश्नगत सड़क का निर्माण आम जनता की मांग पर लिया गया था और इसके अतिरिक्त, सड़क निर्माण के समय पर कोई आक्षेप, चाहे जो भी हो, उद्भूत नहीं किया गया था, इसलिए, सड़क निर्माण के लिए उनके द्वारा प्रयुक्त भूमि के बदले में कोई प्रतिकर संदाय करने का प्रश्न ही नहीं उठता है । प्रत्यर्थियों ने विलम्ब और कई कमियों के बारे में भी अभिवाक् उद्भूत किया और यह कथन किया कि चूंकि, प्रतिकर की रकम का संदाय करने के लिए मांग, 10 वर्षों से अधिक समय बीतने के पश्चात् किया गया है, इसलिए, वे प्रश्नगत सड़क के प्रयोजन के लिए प्रयुक्त भूमि के एवज में कोई प्रतिकर पाने के हकदार नहीं हैं । जब सड़क निर्माण के लिए प्रत्यर्थियों द्वारा प्रयुक्त भूमि के बदले में प्रतिकर मंजूर करने के लिए याचियों के दावे से इनकार कर दिया गया तब उन्होंने इस न्यायालय के समक्ष वर्तमान रिट याचिकाओं के माध्यम से प्रतिकर के लिए दावा किया । न्यायालय द्वारा रिट याचिकाएं मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभिलेख पर उपलब्ध दस्तावेजों के ध्यानपूर्वक परिशीलन से यह निर्विवादित है कि याचियों से संबंधित भूमियों का प्रत्यर्थियों-राज्य द्वारा वर्ष 1998-2002 में जालौग-गधेरी सड़क का निर्माण करने के लिए प्रयोग किया गया था और यह भी निर्विवादित है कि सड़क का निर्माण करने के लिए याचियों की जो भूमि अर्जित की गई थी उसके बदले में याचियों को कोई प्रतिकर, जो भी हो, कभी भी संदत्त नहीं किया गया था । प्रत्यर्थियों ने सुनवाई के समय पर न तो अपने उत्तर में न ही मौखिक

निवेदनों में, इस बात को विवादित किया कि याचियों की भूमियों का सड़क निर्माण करने के लिए प्रयोग नहीं किया गया था । इसके बजाय, उन्होंने यह कथन करते हुए, आश्चर्यजनक अभिवाक् लिया कि चूंकि प्रश्नगत सड़क पर तारकोल डालने का कार्य पी. एम. जी. एस. वाई. स्कीम के अधीन किया गया था इसलिए, कोई प्रतिकर मंजूर करने का प्रश्न ही नहीं उठता है । यद्यपि, प्रत्यर्थियों ने विलम्ब का अभिवाक् लिया है किन्तु याचियों की ओर से उद्भूत इस अभिवाक् का खंडन करने के लिए अभिलेख पर कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया है कि उन्होंने विधि के अनुसरण में भूमि अर्जित करने के लिए प्रत्यर्थियों से बार-बार निवेदन किया है । याचियों ने उनके द्वारा जारी मांग नोटिसों को अभिलेख पर रखा है और इसके पश्चात्, सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के अधीन सूचना की ईप्सा करने वाले आवेदन को भी अभिलेख पर रखा है जिसमें इस तथ्य का सुझाव मिलता है कि याचियों ने प्रश्नगत भूमि का अर्जन करने के लिए प्रत्यर्थियों के पास निरन्तर अभ्यावेदन किया था । जहां तक प्रत्यर्थियों द्वारा लिए गए एक अन्य अभिवाक् का कि सड़क पर तारकोल डालने का कार्य पी. एम. जी. एस. वाई. स्कीम के अधीन किया गया था, का संबंध है, आधारहीन प्रतीत होता है क्योंकि अभिलेख पर उपलब्ध उपाबंध पी. ए. के परिशीलन से यह स्पष्टतः सुझाव मिलता है कि प्रत्यर्थियों ने स्वयमेव ही यह कथन किया है कि प्रश्नगत सड़क का निर्माण राज्य बजट के अधीन वर्ष 1998-2002 में किया गया था और सड़क पर तारकोल डालने का भी कार्य किया गया था । उपाबंध पी. ए. की अन्तर्वस्तुओं का ध्यानपूर्वक परिशीलन करने के पश्चात्, यह न्यायालय प्रत्यर्थियों की ओर से दी गई इस दलील को स्वीकार करने में असमर्थ है कि तारकोल डालने का कार्य पी. एम. जी. एस. वाई. स्कीम के अधीन किया गया था, बजाय इसके, उपाबंध पी. ए. से यह स्पष्टतः सुझाव मिलता है कि प्रश्नगत सड़क का निर्माण राज्य बजट के अधीन किया गया था । इसके अतिरिक्त, याचियों द्वारा अभिलेख पर रखे गए तारीख 16 सितम्बर, 2005 के अधिनिर्णय (उपाबंध पी. ए.) और तारीख 31 दिसम्बर, 2014 के अधिनिर्णय (उपाबंध पी. बी.) के परिशीलन से यह स्पष्टतः सुझाव मिलता है कि प्रत्यर्थियों-विभाग द्वारा समान स्थिति वाले व्यक्तियों जिनकी भूमि भी उसी और उसी प्रकार की सड़क का निर्माण करने के लिए अर्जित की गई थी, को सम्यक् और ग्राह्य प्रतिकर संदत्त किया गया है । भूमि अर्जन कलक्टर द्वारा पारित तारीख 16 सितम्बर, 2005 का

अधिनिर्णय सं. 24/2005 (उपाबंध पी. ए.) से यह स्पष्टतः सुझाव मिलता है कि प्रत्यर्थियों-राज्य ने भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 की धारा 4(1) के अधीन लोक प्रयोजन अर्थात् ग्राम बागरी में जालौग-बनुआ सड़क का निर्माण करने के लिए ग्राम बागरी, तहसील सुन्नी, जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश में स्थित खसरा सं. 40.84 और 346 कीटा 3, माप 0-54-41 में स्थित भूमि को अर्जित करने के लिए तारीख 30 जनवरी, 2003 की अधिसूचना संख्या पी. बी. डब्ल्यू. - (बी)(ए)(3)-10/2002 जारी किया था । आगे, तारीख 31 दिसम्बर, 2014 के अधिनिर्णय (उपाबंध पी. बी.) के परिशीलन से यह सुझाव मिलता है कि भूमि अर्जन कलक्टर द्वारा पारित पूर्वोक्त अधिनिर्णय को विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश-I, शिमला द्वारा आगे भी बढ़ाया गया था जिसे भी अभिलेख पर उपलब्ध कराया गया है । इस प्रक्रम पर, इस न्यायालय को यह समझ में नहीं आ रहा है कि जब उसी राजस्व संपदा के व्यक्तियों को जिनकी भूमि का प्रयोग भी उसी सड़क के निर्माण के लिए किया गया था उन्हें भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के उपबंधों का अवलंब लेते हुए सम्यक् और ग्राह्य प्रतिकर संदत्त किया गया था तो क्यों नहीं वर्तमान मामले में, याचियों की भूमि अर्जित करने के लिए कदम उठाए गए जहां अभिलेख पर यह सम्यक् रूप से साबित कर दिया गया है उनकी भूमियों का भी प्रत्यर्थियों द्वारा उसी और उसी प्रकार की सड़क का निर्माण करने के लिए प्रयोग किया गया है । इस न्यायालय के माननीय समन्वय न्यायपीठ ने इसी प्रकार के विवाद्यक पर विचार करते समय, जिसमें सड़क निर्माण करने के लिए भूमि का प्रयोग किया गया था और उसी स्थिति में रहने वाले व्यक्तियों को प्रतिकर संदत्त किया गया था, प्रत्यर्थियों को यह निर्देश दिया कि उसी स्थिति में रहने वाले व्यक्तियों की भूमि अर्जित करने के लिए अर्जन कार्यवाहियां आरम्भ की जाएं और विधि के अनुसरण में प्रतिकर संदत्त किया जाए । जहां तक प्रत्यर्थियों द्वारा याचिका फाइल करने के साथ ही प्रतिकर की मांग करने में असाधारण विलम्ब करने के बारे में दिए गए दलीलों का संबंध है, माननीय उच्चतम न्यायालय ने राज कुमार बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य वाले मामले में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है – "न्यायालय की राय में, श्री नाग द्वारा किए गए निवेदन में विचारणीय गुणागुण है । यह सत्य है कि अपीलार्थी उच्च न्यायालय में विलम्ब से आए थे क्योंकि उनकी भूमि का उपयोग वर्ष 1985-86 में किया गया था जबकि अपीलार्थियों द्वारा रिट याचिका वर्ष 2009 में फाइल की गई थी । उसी समय पर, वर्तमान मामले के

अभिवचनों से यह स्पष्ट होता है कि अपीलार्थी द्वारा धारित भूमि का उपयोग करने के बारे में राज्य द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल प्रति-शपथपत्र में इनकार नहीं किया गया है जो मेरे समक्ष फाइल की गई है । प्रति-शपथपत्र में किए गए प्रकथनों से यह भी प्रकट होता है कि राज्य द्वारा या तो अपीलार्थी से या उसके हित-पूर्वाधिकारी से, जिसके जीवनकाल के दौरान प्रश्नगत सड़क का निर्माण किया गया था, अपने पक्ष में किसी दान की ईप्सा नहीं की गई थी । प्रति-शपथपत्र में यह कथित है कि भूमि के पहले के स्वामी को राज्य सरकार के पक्ष में भूमि दान करना चाहिए था । ऐसे किसी दान के समर्थन के बारे में, किसी विनिर्दिष्ट प्रत्याख्यान या दस्तावेजी साक्ष्य के अभाव में, न्यायालय ऐसे किसी दान के सुझाव के तथ्य को स्वीकार नहीं कर सकते हैं । यदि ऐसा हुआ होता, जैसा कि आशयित है तो न्यायालय यह समझने में असमर्थ है कि क्यों नहीं राज्य ने इसमें के अपीलार्थी की भूमि के संबंध में, भूमि अर्जन की कार्यवाहियां आरम्भ नहीं की गईं । तथ्य यह है कि राज्य सरकार ने ऐसी कार्यवाहियां आरम्भ की थीं जो न तो विवादित हैं न ही यह विवादित हैं कि उसे न्यायोचित समयावधि व्यपगत होने के रूप में मंजूर कर लिया गया था क्योंकि इसी बीच में, सड़क को प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के अधीन ले लिया गया था । यह भी विवादित नहीं है कि उसी सड़क के लिए राज कुमार और अन्य स्वामियों द्वारा धारित भूमि को न केवल अर्जन के लिए अधिसूचित किया गया था अपितु, 2008 के अधिनिर्णय संख्या 10 के निबंधनों में सम्यक् रूप से प्रतिकर भी संदत्त किया गया था । उपर्युक्त सम्पूर्ण परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, श्री नाग द्वारा इस प्रभाव की प्रस्थापना की गई थी कि अपीलार्थी संतुष्ट हो जाएगा यदि उसे अवधारित दर पर प्रतिकर संदत्त किया जाता है और जो 2008 की अधिनिर्णय संख्या 10 के अधीन कनवर सिंह को संदत्त किया गया है, युक्तियुक्त प्रतीत होता है । ऐसा विनिर्दिष्टतः तभी हो सकता है जब प्रतिकर को लगभग 10 वर्ष पूर्व जारी एक अधिसूचना के संदर्भ में 2008 की अधिनिर्णय संख्या 10 के निबंधनों में अवधारित किया जाए । तथ्य यह है कि अपीलार्थी को भूमि के दोषपूर्ण उपयोग के लिए उसके दावे के अनुसार, प्रतिकर संदत्त किया जाए और उस पर ब्याज संदत्त किया जाए जो अन्यथा भी कानूनी रूप से राज्य के लिए अत्यधिक आकर्षक प्रस्थापना प्रतीत हो ।" अतएव, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा किए गए पूर्वोक्त मताभिव्यक्तियों को ध्यान में रखते हुए, प्रत्यर्थियों द्वारा उद्भूत असाधारण विलम्ब का अभिवाक्, यदि कोई हो,

नामंजूर किए जाने योग्य है । परिणामतः, इसमें उपर्युक्त रूप में की गई सविस्तार चर्चा के साथ ही माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि को ध्यान में रखते हुए, याचियों द्वारा फाइल इन याचिकाओं को मंजूर किया जाता है और प्रत्यर्थियों को यह निर्देश दिया जाता है कि वे भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के अधीन यथासमाविष्ट कार्यवाहियों को पुनः आरम्भ करते हुए, जालौग से गधेरी सड़क के निर्माण के लिए उनके द्वारा याचियों की भूमि का प्रयोग करने के बदले में सम्यक् और ग्राह्य प्रतिकर का संदाय करें । (पैरा 12, 13, 14, 15 और 16)

अवलम्बित निर्णय

पैरा

[2014] तारीख 29 अक्तूबर, 2015 को विनिश्चित, 2014 की विशेष इजाजत याचिका (सिविल) सं. 2373 : **राज कुमार** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** ; 14

[2003] तारीख 25 जुलाई, 2007 को विनिश्चित, 2003 की सिविल रिट याचिका सं. 128 : **माथू राम** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य** । 14

आरम्भिक (सिविल रिट) अधिकारिता : 2008 की सिविल रिट याचिका सं. 2067 के साथ 2065, 2081 और 2084.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याचियों की ओर से सर्वश्री जी. डी. वर्मा, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ बी. सी. वर्मा, अधिवक्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री रूपिन्दर सिंह ठाकुर, अपर महाधिवक्ता

न्यायमूर्ति संदीप शर्मा – चूंकि क्रमशः याचियों की ओर से प्रस्तुत पूर्वोक्त रिट याचिकाओं में विधि के साथ ही तथ्यों के सामान्य प्रश्न अन्तर्वलित हैं इसलिए, उन्हें निपटारे के लिए एक साथ लिया जाता है । इसके अतिरिक्त, सभी याचिकाओं में याचियों द्वारा समान/एक ही प्रकार के अनुतोषों का दावा किया गया है ।

2. पूर्वोक्त रिट याचिकाओं के माध्यम से याचियों ने संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226/227 के अधीन इस न्यायालय की असाधारण अधिकारिता का अवलंब लिया है और निम्नलिखित मुख्य अनुतोषों के लिए प्रार्थना की गई है :–

> "(i) कि प्रत्यर्थियों को मामले के सम्पूर्ण अभिलेख को प्रस्तुत करने का निर्देश दिया जाए ।
>
> (ii) याचियों के पक्ष में और प्रत्यर्थियों के विरुद्ध समुचित आदेश और निर्देश जारी किया जाए, उनसे यह अपेक्षा करते हुए कि या तो वे अर्जन कार्यवाहियां आरम्भ करें और याची के पूर्वोक्त भूमि के संबंध में प्रतिकर की रकम का संदाय करें और यदि वे ऐसा करने के लिए तैयार और रजामंद नहीं हैं तो ऐसी दशा में प्रत्यर्थियों को पूर्वोक्त भूमि में याची को भूमि में खाली कब्जा पुनः स्थापित करने का आदेश दिया जाए और उन्हें वर्ष 1998 से प्रश्नगत क्षेत्र के खाली कब्जे को सौंपने तक उपयुक्त क्षतिपूर्ति का संदाय करने के लिए दायी अभिनिर्धारित किया जाए ।"

3. अभिलेखों से प्रकट होने वाले तथ्य यह हैं कि याचियों से संबंधित भूमि, जिसका वर्णन संबंधित याचिकाओं के पैरा 2 में उपलब्ध है, का प्रत्यर्थियों द्वारा अप्रैल, 1998 के माह में जालौग से गधेरी तक सड़क निर्माण के लिए प्रयोग किया गया है । प्रत्यर्थियों ने अप्रैल, 1998 के माह में पूर्वोक्त सड़क निर्माण का कार्य आरम्भ किया था और पूर्वोक्त सड़क का निर्माण करने के लिए याचियों की भूमि का प्रयोग किया था । अभिवचनों से यह सुझाव मिलता है कि याचियों ने सड़क निर्माण करने के समय आक्षेप उद्‌भूत किए थे और यह प्रार्थना की थी कि सड़क निर्माण करने के पूर्व प्रत्यर्थियों को भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम" कहा गया है) के अनुसरण में भूमि अर्जित करना चाहिए था और इसके पश्चात् प्रश्नगत सड़क का निर्माण आरम्भ करना चाहिए था । तथापि, प्रत्यर्थियों-विभाग के प्रतिनिधियों/अधिकारियों द्वारा यह वचनबंध दिया गया था कि अर्जन की कार्यवाहियां आरम्भ की जाएंगी और विधि के अनुसरण में प्रतिकर संदत्त किया जाएगा, इसलिए, वर्तमान याचियों ने अपनी भूमि में से सड़क निर्माण के कार्य को मंजूर कर लिया था । किन्तु, जैसा कि अभिलेखों से प्रकट होता है, कोई प्रतिकर, चाहे जो भी हो, प्रत्यर्थियों द्वारा प्रश्नगत सड़क निर्माण करने में प्रयुक्त उनकी भूमि के बदले

में याचियों को कभी संदत्त नहीं किया गया और इस प्रकार, वे रजिस्ट्रीकृत डाक द्वारा मांग नोटिसों के साथ प्रत्यर्थियों पर तामील करने को आबद्ध हुए । किन्तु, यचियों की ओर से जारी नोटिस प्राप्त करने के पश्चात् भी प्रत्यर्थी कोई कार्रवाई करने में असफल रहे । याचियों द्वारा सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के माध्यम से सूचनाएं प्राप्त की गईं जिनमें उन्हें यह सूचित किया गया था प्रश्नगत सड़क का निर्माण विभाग द्वारा राज्य के बजट के अधीन वर्ष 1998-2002 के दौरान किया गया था और उस स्थल पर तारकोल के कार्य भी किए गए थे और सड़क का निर्माण आम जनता की मांग पर किया गया था । तथापि, प्रत्यर्थी सं. 3 ने अपने काउंसेल के माध्यम से याची को यह सूचित किया कि चूंकि प्रश्नगत सड़क का निर्माण आम जनता की मांग पर लिया गया था और इसके अतिरिक्त, सड़क निर्माण के समय पर कोई आक्षेप, चाहे जो भी हो, उद्भूत नहीं किया गया था, इसलिए, सड़क निर्माण के लिए उनके द्वारा प्रयुक्त भूमि के बदले में कोई प्रतिकर संदाय करने का प्रश्न ही नहीं उठता है । प्रत्यर्थियों ने विलम्ब और कई कमियों के बारे में भी अभिवाक् उद्भूत किया और यह कथन किया कि चूंकि, प्रतिकर की रकम का संदाय करने के लिए मांग, 10 वर्षों से अधिक समय बीतने के पश्चात् किया गया है, इसलिए, वे प्रश्नगत सड़क के प्रयोजन के लिए प्रयुक्त भूमि के एवज में कोई प्रतिकर पाने के हकदार नहीं हैं । जब सड़क निर्माण के लिए प्रत्यर्थियों द्वारा प्रयुक्त भूमि के बदले में प्रतिकर मंजूर करने के लिए याचियों के दावे से इनकार कर दिया गया तब उन्होंने इस न्यायालय के समक्ष वर्तमान रिट याचिकाओं के माध्यम से प्रतिकर के लिए दावा किया ।

4. प्रत्यर्थियों ने नोटिसें जारी होने के अनुसरण में, सविस्तार उत्तर फाइल किया और याचियों द्वारा किए गए दावों का खंडन किया । प्रत्यर्थियों ने विनिर्दिष्टतः यह कथन किया कि सड़क का निर्माण वर्ष 1998-2002 के दौरान भूमि स्वामियों की सहमति से उनकी मांग पर किया गया था और उन्होंने न तो अपनी भूमि पर सड़क निर्माण करने पर कोई आक्षेप किया न ही उन्होंने वर्तमान रिट याचिकाओं के फाइल होने तक प्रतिकर के लिए कहा था । प्रत्यर्थियों ने यह कथन किया कि चूंकि असाधारण विलम्ब किया गया है, इसलिए, मात्र इस आधार पर ही याचिकाएं खारिज होने योग्य हैं ।

5. प्रत्यर्थियों ने यह भी निवेदन किया कि चूंकि याचियों के दावे को

प्रत्यर्थियों के उत्तर द्वारा गंभीर रूप से विवादित किया गया है और ये तथ्य के दुरूह प्रश्न हैं इसलिए, याचियों को सिविल वाद फाइल करना चाहिए, यदि कोई अनुतोष है जिसका उन्होंने वर्तमान याचिकाओं में दावा किया है । इस प्रक्रम पर, इस न्यायालय के समक्ष लिखित कथन में फाइल प्रारम्भिक आक्षेपों के पैरा 5, 6 और 7 को प्रस्तुत करना उपयुक्त होगा, जो इस प्रकार हैं :–

"5. वर्तमान याचिका, याची द्वारा सड़क का प्रयोग करते हुए, सड़क निर्माण की समाप्ति के पश्चात् प्रतिकर की मांग बाद की सोच का परिणाम है । यदि ऐसे व्यक्ति अपने उद्देश्य में सफल हो जाते हैं तो अन्तहीन मुकदमेबाजी शुरू हो जाएगी और सरकार के ऊपर अनुचित, अनियंत्रित, अनियोजित और अप्रत्याशित वित्तीय भार आ जाएगा जिसके परिणामस्वरूप सरकारी तंत्र विध्वंस हो जाएगा जिससे राज्य आम जनता की मांग पर ऐसा कोई विकास कार्य नहीं करने को बाध्य हो जाएगा । अतएव, वर्तमान रिट याचिका खारिज होने योग्य है ।

6. कि विभाग ने व्यापक लोक हित में, लोक धन का बड़ा बजट खर्च करते हुए, प्रश्नगत सड़क का निर्माण किया है और उक्त सड़क का निर्माण करने के लिए आम जनता, जिसमें याची सम्मिलित है, द्वारा अपनी भूमि प्रदान करते हुए सड़क निर्माण की मांग की थी, जिसे उन्होंने स्वेच्छा से प्रदान किया था और सड़क का निर्माण हुआ था । चूंकि, आम जनता की मांग पर, जालौग में बंसतपुर-किंगल डी. जी. बी. आर. से गधेरी आन्तरिक स्टेशन तक सड़क का निर्माण हुआ है, इसलिए, बजट में भूमि अर्जन करने और प्रतिकर संदाय करने के लिए कोई उपबंध नहीं है और इस तथ्य को उस क्षेत्र का प्रत्येक फायदाग्राही, जिसमें याची सम्मिलित है, अच्छी तरह से जानता था ।

7. कि आम जनता जिसमें याची सम्मिलित है, को इस सड़क का बेहतर/समाधानप्रद सेवा प्रदान करने को ध्यान में रखते हुए, पी. एम. जी. एस. वाई. के अधीन इस सड़क पर तारकोल डालने का कार्य किया गया था । इसलिए, सुस्पष्टतः इस सड़क का निर्माण रातों-रात नहीं किया गया था अपितु, इसके निर्माण में तीन वर्ष से अधिक समय लगा था और उस अवधि के दौरान न तो याची न ही अन्य प्रभावित पक्षकारों ने मौखिक तौर पर या लिखित तौर पर सड़क

निर्माण करने वाले संबंधित प्राधिकारियों के समक्ष भूमि के लिए प्रतिकर या सड़क का कार्य रोकने के लिए दावा किया था । इस प्रकार, वर्तमान रिट याचिका जो इस प्रक्रम पर भूमि के लिए प्रतिकर का दावा करते हुए फाइल की गई है, कायम रखे जाने योग्य नहीं है, क्योंकि याची इस याचिका के माध्यम से इस माननीय न्यायालय के समक्ष स्वच्छ हाथों से नहीं आया है ।"

6. उत्तर के पूर्वोक्त पैराओं में अन्तर्विष्ट प्रकथनों के ध्यानपूर्वक परिशीलन से यह सुझाव मिलता है कि प्रत्यर्थियों-विभाग ने विलम्ब और विलम्बित के आधार पर याचिका का विरोध करने के अलावा यह भी कथन किया कि चूंकि विभाग ने लोक हित में बड़े पैमाने पर लोक धन खर्च करते हुए, प्रश्नगत सड़क का निर्माण किया है इसलिए, याचियों को इस विलम्बित प्रक्रम पर प्रतिकर संदाय नहीं करने के बारे में विवाद्यक उद्भूत करना मंजूर नहीं किया जा सकता है । प्रत्यर्थियों ने यह भी कथन किया कि यह आम जनता की मांग पर जालौग में बंसतपुर-किंगल डी. जी. बी. आर. से गधेरी आन्तरिक स्टेशन तक की लिंक सड़क का निर्माण किया गया है, इसलिए, बजट में भूमि अर्जन करने और प्रतिकर संदाय करने का कोई उपबंध नहीं किया गया था, इस प्रकार, याची भूमि अर्जन के कारण प्रतिकर का कोई संदाय पाने के हकदार नहीं हैं । प्रत्यर्थियों ने विनिर्दिष्टतः यह कथन किया है कि आम जनता जिसमें याची सम्मिलित है, को इस सड़क का बेहतर/समाधानप्रद सेवा प्रदान करने को ध्यान में रखते हुए, पी. एम. जी. एस. वाई. के अधीन इस सड़क पर तारकोल डालने का कार्य किया गया था । इस प्रकार, इस सड़क का निर्माण रातों-रात नहीं किया गया था और इस प्रकार, वर्तमान याचियों द्वारा इस प्रक्रम पर भूमि के प्रतिकर का दावा कायम नहीं रखा जा सकता है ।

7. याचियों ने प्रत्युत्तर फाइल करते हुए, पैरा 5, 6 और 7 में अन्तर्विष्ट प्रकथनों का खंडन किया और पुनः यह दोहराया कि वे अधिनियम, 1894 के निबंधनों में प्रतिकर पाने के हकदार हैं, जैसा कि यह अभिलेख पर सम्यक् रूप से साबित हो गया है कि प्रत्यर्थियों द्वारा प्रश्नगत सड़क का निर्माण करने के लिए उनकी भूमि का प्रयोग किया गया है ।

8. आज जब इस न्यायालय के समक्ष मामला सुनवाई के लिए सूचीबद्ध हुआ तो याचियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने अपर जिला न्यायाधीश-I, शिमला द्वारा 2007 की भूमि निर्देश सं. 1-एस./4 में तारीख

31 दिसम्बर, 2014 को पारित अधिनिर्णय (उपाबंध पी. बी.) की प्रतिलिपि प्रस्तुत करते हुए, 2016 की सिविल प्रकीर्ण याचिका सं. 5077 के अधीन एक आवेदन फाइल किया, यह वर्णित करते हुए कि समान स्थिति वाले व्यक्ति को जिसकी भूमि भी प्रश्नगत सड़क का निर्माण करने के लिए अर्जित की गई थी, हिमाचल प्रदेश राज्य द्वारा सड़क निर्माण करने के लिए अर्जित भूमि के बदले में प्रतिकर संदत्त किया गया है । चूंकि, प्रत्यर्थियों ने अपने उत्तर में यह कथन किया है कि प्रश्नगत सड़क का निर्माण राज्य बजट द्वारा आम जनता की मांग पर किया गया था और यह कि कार्य को पी. एम. जी. एस. वाई. स्कीम के अधीन तारकोल डालने के कार्य द्वारा पूरा किया गया था और कोई अर्जन कार्यवाहियां आरम्भ नहीं की गई थीं, याचियों ने प्रत्यर्थियों की ओर से दिए गए पूर्वोक्त दलीलों का खंडन करने के लिए भूमि अर्जन कलक्टर द्वारा पारित अधिनिर्णय की प्रतिलिपि फाइल की है ।

9. याचियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री जी. डी. वर्मा ने यह जोरदार तर्क दिया कि अभिलेख पर यह सम्यक् रूप से साबित हो गया है कि याचियों की भूमि का प्रत्यर्थियों-विभाग द्वारा जालौग-गधेरी सड़क का निर्माण करने के लिए प्रयोग किया गया है और उक्त प्रश्नगत सड़क का निर्माण करने के लिए अर्जित भूमि के बदले में उन्हें कोई प्रतिकर, जो भी हो, संदत्त नहीं किया गया है । उन्होंने बलपूर्वक यह दलील दी कि याचियों की भूमि का प्रयोग करने के बारे में तथ्य को कहीं भी प्रत्यर्थियों द्वारा इनकार नहीं किया गया है बल्कि पी. एम. जी. एस. वाई. के अधीन किए गए इस सड़क पर तारकोल डालने के कार्य का आश्चर्यजनक रूप से अभिवाक् लिया गया है, जो याचियों के अधिकारपूर्ण दावे को नामंजूर करने का आधार नहीं हो सकता है । श्री वर्मा ने बलपूर्वक यह दलील दी कि इस प्रक्रम पर विलम्ब के अभिवाक् को प्रत्यर्थियों-विभाग द्वारा उद्भूत किए जाने को मंजूर नहीं किया जा सकता है क्योंकि याचियों की भूमि का प्रयोग करने के तत्काल पश्चात् प्रत्यर्थियों को मांग नोटिस तामील की गई थी किन्तु उन्होंने एक या अन्य बहाने से जान-बूझकर मामले में विलम्ब किया । अंततः, श्री वर्मा ने यह दलील दी कि 2016 की सिविल प्रकीर्ण याचिका सं. 5077 आवेदन के साथ संलग्न अधिनिर्णय उपाबंध पी. ए. और उपाबंध पी. बी. के मूल परिशीलन से यह स्पष्टतः सुझाव मिलता है कि समान स्थिति के व्यक्ति को जिसकी भूमि भी प्रश्नगत सड़क का निर्माण करने के

लिए प्रयोग की गई थी, अधिनियम, 1894 के अधीन कार्यवाहियां आरम्भ करने के पश्चात् सम्यक् और ग्राह्य प्रतिकर संदत्त किया गया है ।

10. विद्वान् अपर महाधिवक्ता श्री रूपिन्दर सिंह ठाकुर ने याचियों की ओर से किए गए पूर्वोक्त निवेदनों का विरोध किया और यह कथन किया कि चूंकि प्रश्नगत सड़क का निर्माण आम जनता की मांग पर किया गया था, इसलिए, याचियों की भूमि अर्जित करने के लिए प्रत्यर्थियों के पास कोई अवसर, जो भी हो, नहीं था । प्रत्यर्थियों-राज्य की ओर से यह भी दलील दी गई कि प्रश्नगत सड़क का निर्माण वर्ष 1998-2002 में किया गया था जबकि प्रतिकर का दावा करने के लिए वर्तमान याचिकाएं वर्ष 2008 में फाइल की गई हैं, जिसका तात्पर्य यह है कि लगभग 11 वर्षों से अधिक समय का विलम्ब किया गया है और इस प्रकार, इस विलम्बित प्रक्रम पर इस न्यायालय द्वारा प्रतिकर, यदि कोई हो, के लिए कोई अभिवाक् ग्रहण नहीं किया जा सकता है ।

11. श्री ठाकुर ने भी उत्तर में प्रत्यर्थियों द्वारा लिए गए आधार को पुनः दोहराया कि चूंकि सड़क पर तारकोल डालने का कार्य पी. एम. जी. एस. वाई. स्कीम के अधीन किया गया था इसलिए, सड़क निर्माण करने के लिए प्रत्यर्थियों की भूमि का प्रयोग करने के एवज में कोई प्रतिकर मंजूर करने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता है । तथापि, जब विद्वान् महाधिवक्ता ने इस न्यायालय का ध्यान तारीख 31 दिसम्बर, 2014 के अधिनिर्णय (उपाबंध पी. बी.) की ओर दिलाया जिसके अधीन भूमि के उन स्वामियों को प्रतिकर मंजूर किया गया था जिनकी भूमि का भी प्रयोग प्रत्यर्थियों द्वारा जालौग-गधेरी सड़क निर्माण के लिए किया गया था तब विद्वान् अपर महाधिवक्ता, याचियों के साथ ही याचियों द्वारा अभिलेख पर रखे गए तारीख 31 दिसम्बर, 2014 के अधिनिर्णय के फायदाग्राहियों के बीच कोई विभेद करने में असमर्थ रहे ।

12. अभिलेख पर उपलब्ध दस्तावेजों के ध्यानपूर्वक परिशीलन से यह निर्विवादित है कि याचियों से संबंधित भूमियों का प्रत्यर्थियों-राज्य द्वारा वर्ष 1998-2002 में जालौग-गधेरी सड़क का निर्माण करने के लिए प्रयोग किया गया था और यह भी निर्विवादित है कि सड़क का निर्माण करने के लिए याचियों की जो भूमि अर्जित की गई थी उसके बदले में याचियों को कोई प्रतिकर, जो भी हो, कभी भी संदत्त नहीं किया गया था । प्रत्यर्थियों ने सुनवाई के समय पर न तो अपने उत्तर में न ही मौखिक निवेदनों में,

इस बात को विवादित किया कि याचियों की भूमियों का सड़क निर्माण करने के लिए प्रयोग नहीं किया गया था । इसके बजाय, उन्होंने यह कथन करते हुए, आश्चर्यजनक अभिवाक् लिया कि चूंकि प्रश्नगत सड़क पर तारकोल डालने का कार्य पी. एम. जी. एस. वाई. स्कीम के अधीन किया गया था इसलिए, कोई प्रतिकर मंजूर करने का प्रश्न ही नहीं उठता है । यद्यपि, प्रत्यर्थियों ने विलम्ब का अभिवाक् लिया है किन्तु याचियों की ओर से उद्भूत इस अभिवाक् का खंडन करने के लिए अभिलेख पर कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया है कि उन्होंने विधि के अनुसरण में भूमि अर्जित करने के लिए प्रत्यर्थियों से बार-बार निवेदन किया है । याचियों ने उनके द्वारा जारी मांग नोटिसों को अभिलेख पर रखा है और इसके पश्चात्, सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के अधीन सूचना की ईप्सा करने वाले आवेदन को भी अभिलेख पर रखा है जिसमें इस तथ्य का सुझाव मिलता है कि याचियों ने प्रश्नगत भूमि का अर्जन करने के लिए प्रत्यर्थियों के पास निरन्तर अभ्यावेदन किया था । जहां तक प्रत्यर्थियों द्वारा लिए गए एक अन्य अभिवाक् का कि सड़क पर तारकोल डालने का कार्य पी. एम. जी. एस. वाई. स्कीम के अधीन किया गया था, का संबंध है, आधारहीन प्रतीत होता है क्योंकि अभिलेख पर उपलब्ध उपाबंध पी. ए. के परिशीलन से यह स्पष्टतः सुझाव मिलता है कि प्रत्यर्थियों ने स्वयमेव ही यह कथन किया है कि प्रश्नगत सड़क का निर्माण राज्य बजट के अधीन वर्ष 1998-2002 में किया गया था और सड़क पर तारकोल डालने का भी कार्य किया गया था । उपाबंध पी. ए. की अन्तर्वस्तुओं का ध्यानपूर्वक परिशीलन करने के पश्चात्, यह न्यायालय प्रत्यर्थियों की ओर से की गई इस दलील को स्वीकार करने में असमर्थ है कि तारकोल डालने का कार्य पी. एम. जी. एस. वाई. स्कीम के अधीन किया गया था, बजाय इसके, उपाबंध पी. ए. से यह स्पष्टतः सुझाव मिलता है कि प्रश्नगत सड़क का निर्माण राज्य बजट के अधीन किया गया था । इसके अतिरिक्त, याचियों द्वारा अभिलेख पर रखे गए तारीख 16 सितम्बर, 2005 के अधिनिर्णय (उपाबंध पी. ए.) और तारीख 31 दिसम्बर, 2014 के अधिनिर्णय (उपाबंध पी. बी.) के परिशीलन से यह स्पष्टतः सुझाव मिलता है कि प्रत्यर्थियों-विभाग द्वारा समान स्थिति वाले व्यक्तियों जिनकी भूमि भी उसी और उसी प्रकार की सड़क का निर्माण करने के लिए अर्जित की गई थी, को सम्यक् और ग्राह्य प्रतिकर संदत्त किया गया है । भूमि अर्जन कलक्टर द्वारा पारित तारीख 16 सितम्बर, 2005 का अधिनिर्णय सं. 24/2005 (उपाबंध पी. ए.)

से यह स्पष्टतः सुझाव मिलता है कि प्रत्यर्थियों-राज्य ने भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 की धारा 4(1) के अधीन लोक प्रयोजन अर्थात् ग्राम बागरी में जालौग-बनुआ सड़क का निर्माण करने के लिए ग्राम बागरी, तहसील सुन्नी, जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश में स्थित खसरा सं. 40.84 और 346 कीटा 3, माप 0-54-41 में स्थित भूमि को अर्जित करने के लिए तारीख 30 जनवरी, 2003 की अधिसूचना संख्या पी. बी. डब्ल्यू. - (बी)(ए) (3)-10/2002 जारी किया था ।

13. आगे, तारीख 31 दिसम्बर, 2014 के अधिनिर्णय (उपाबंध पी. बी.) के परिशीलन से यह सुझाव मिलता है कि भूमि अर्जन कलक्टर द्वारा पारित पूर्वोक्त अधिनिर्णय को विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश-I, शिमला द्वारा आगे भी बढ़ाया गया था जिसे भी अभिलेख पर उपलब्ध कराया गया है । इस प्रक्रम पर, इस न्यायालय को यह समझ में नहीं आ रहा है कि जब उसी राजस्व संपदा के व्यक्तियों को जिनकी भूमि का प्रयोग भी उसी सड़क के निर्माण के लिए किया गया था उन्हें भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के उपबंधों का अवलंब लेते हुए सम्यक् और ग्राह्य प्रतिकर संदत्त किया गया था तो क्यों नहीं वर्तमान मामले में, याचियों की भूमि अर्जित करने के लिए कदम उठाए गए जहां अभिलेख पर यह सम्यक् रूप से साबित कर दिया गया है उनकी भूमियों का भी प्रत्यर्थियों द्वारा उसी और उसी प्रकार की सड़क का निर्माण करने के लिए प्रयोग किया गया है ।

14. इस न्यायालय के माननीय समन्वय न्यायपीठ ने **माथू राम** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में इसी प्रकार के विवाद्यक पर विचार करते समय, जिसमें सड़क निर्माण करने के लिए भूमि का प्रयोग किया गया था और उसी स्थिति में रहने वाले व्यक्तियों को प्रतिकर संदत्त किया गया था, प्रत्यर्थियों को यह निर्देश दिया कि उसी स्थिति में रहने वाले व्यक्तियों की भूमि अर्जित करने के लिए अर्जन कार्यवाहियां आरम्भ की जाएं और विधि के अनुसरण में प्रतिकर संदत्त किया जाए । जहां तक प्रत्यर्थियों द्वारा याचिका फाइल करने के साथ ही प्रतिकर की मांग करने में असाधारण विलम्ब करने के बारे में दिए गए दलीलों का संबंध है, माननीय उच्चतम न्यायालय ने शीर्षक **राज कुमार** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य**[2] वाले

---

[1] तारीख 25 जुलाई, 2007 को विनिश्चित, 2003 की सिविल रिट याचिका सं. 128.

[2] तारीख 29 अक्तूबर, 2015 को विनिश्चित, 2014 की विशेष इजाजत याचिका (सिविल) सं. 2373.

मामले में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

"हमारी राय में, श्री नाग द्वारा किए गए निवेदन में विचारणीय गुणागुण है । यह सत्य है कि अपीलार्थी उच्च न्यायालय में विलम्ब से आए थे क्योंकि उनकी भूमि का उपयोग वर्ष 1985-86 में किया गया था जबकि अपीलार्थियों द्वारा रिट याचिका वर्ष 2009 में फाइल की गई थी । उसी समय पर, वर्तमान मामले के अभिवचनों से यह स्पष्ट होता है कि अपीलार्थी द्वारा धारित भूमि का उपयोग करने के बारे में राज्य द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल प्रति-शपथपत्र में इनकार नहीं किया गया है जो मेरे समक्ष फाइल की गई है । प्रति-शपथपत्र में किए गए प्रकथनों से यह भी प्रकट होता है कि राज्य द्वारा या तो अपीलार्थी से या उसके हित-पूर्वाधिकारी से, जिसके जीवनकाल के दौरान प्रश्नगत सड़क का निर्माण किया गया था, अपने पक्ष में किसी दान की ईप्सा नहीं की गई थी । प्रति-शपथपत्र में यह कथित है कि भूमि के पहले के स्वामी को राज्य सरकार के पक्ष में भूमि दान करना चाहिए था । ऐसे किसी दान के समर्थन के बारे में, किसी विनिर्दिष्ट प्रत्याख्यान या दस्तावेजी साक्ष्य के अभाव में, हम ऐसे किसी दान के सुझाव के तथ्य को स्वीकार नहीं कर सकते हैं । यदि ऐसा हुआ होता, जैसा कि आशयित है तो हम यह समझने में असमर्थ हैं कि क्यों नहीं राज्य द्वारा इसमें के अपीलार्थी की भूमि के संबंध में, भूमि अर्जन की कार्यवाहियां आरम्भ नहीं की गईं । तथ्य यह है कि राज्य सरकार ने ऐसी कार्यवाहियां आरम्भ की थीं जो न तो विवादित हैं न ही यह विवादित हैं कि उसे न्यायोचित समयावधि व्यपगत होने के रूप में मंजूर कर लिया गया था क्योंकि इसी बीच में, सड़क को प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के अधीन ले लिया गया था । यह भी विवादित नहीं है कि उसी सड़क के लिए राज कुमार और अन्य स्वामियों द्वारा धारित भूमि को न केवल अर्जन के लिए अधिसूचित किया गया था अपितु, 2008 के अधिनिर्णय संख्या 10 के निबंधनों में सम्यक् रूप से प्रतिकर भी संदत्त किया गया था ।

उपर्युक्त सम्पूर्ण परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, श्री नाग द्वारा इस प्रभाव की प्रस्थापना की गई थी कि अपीलार्थी संतुष्ट हो जाएगा यदि उसे अवधारित दर पर प्रतिकर संदत्त किया जाता है और जो 2008 की अधिनिर्णय संख्या 10 के अधीन कनवर सिंह को संदत्त

किया गया है, युक्तियुक्त प्रतीत होता है । ऐसा विनिर्दिष्टतः तभी हो सकता है जब प्रतिकर को लगभग 10 वर्ष पूर्व जारी एक अधिसूचना के संदर्भ में 2008 की अधिनिर्णय संख्या 10 के निबंधनों में अवधारित किया जाए । तथ्य यह है कि अपीलार्थी को भूमि के दोषपूर्ण उपयोग के लिए उसके दावे के अनुसार, प्रतिकर संदत्त किया जाए और उस पर ब्याज संदत्त किया जाए जो अन्यथा भी कानूनी रूप से राज्य के लिए अत्यधिक आकर्षक प्रस्थापना प्रतीत हो ।"

15. अतएव, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा किए गए पूर्वोक्त मताभिव्यक्तियों को ध्यान में रखते हुए, प्रत्यर्थियों द्वारा उद्भूत असाधारण विलम्ब का अभिवाक्, यदि कोई हो, नामंजूर किए जाने योग्य है ।

16. परिणामतः, इसमें उपर्युक्त रूप में की गई सविस्तार चर्चा के साथ ही माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि को ध्यान में रखते हुए, याचियों द्वारा फाइल इन याचिकाओं को मंजूर किया जाता है और प्रत्यर्थियों को यह निर्देश दिया जाता है कि वे भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के अधीन यथासमाविष्ट कार्यवाहियों को पुनः आरम्भ करते हुए, जालौग से गधेरी सड़क के निर्माण के लिए उनके द्वारा याचियों की भूमि का प्रयोग करने के बदले में सम्यक् और ग्राह्य प्रतिकर का संदाय करें । प्रत्यर्थियों को यह भी निर्देश दिया जाता है कि वे आज से छह माह की अवधि के भीतर याचियों की भूमि का अर्जन करने के लिए, भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के अधीन कार्यवाहियां पूरी करें और याचियों को सम्यक् और ग्राह्य प्रतिकर का संदाय करें, जैसा कि इसी प्रकार की स्थिति में रहने वाले व्यक्तियों को भूमि अर्जन कलक्टर, एच. पी. पी. डब्ल्यू. डी., साउथ जोन, विन्टर फिल्ड, शिमला द्वारा पारित तारीख 16 सितम्बर, 2005 के अधिनिर्णय संख्या 24/2005 में संदत्त किया गया है ।

17. सभी अन्तरिम आदेश वातिल किए जाते हैं । सभी प्रकीर्ण आवेदनों को भी निपटाया जाता है ।

18. इस निर्णय की प्रतिलिपि संबंधित प्रत्येक फाइलों के साथ संलग्न की जाएं ।

रिट याचिकाएं मंजूर की गईं ।

क.

बालक राम और अन्य

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य

तारीख 10 अगस्त, 2016

न्यायमूर्ति सुरेश्वर ठाकुर

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 100 [सपठित हिमाचल प्रदेश भूमिहीन व्यक्तियों और अन्य अर्ह व्यक्तियों को नातौड़ भूमि की मंजूरी स्कीम, 1975 का खण्ड 11] – द्वितीय अपील – नातौड़ भूमि का आबंटन – प्राप्तिकर्ता द्वारा आबंटित भूमि पर कब्जा और स्वामित्व स्थापित करने के 20 वर्षों के पूर्व ही उस भूमि का अन्य व्यक्ति की भूमि से अदला-बदली करना – संबंधित प्राधिकारी द्वारा उस भूमि का आबंटन रद्द करना – इस आधार पर कि प्राप्तिकर्ता द्वारा आबंटन के सुसंगत निबंधनों, अर्थात् 20 वर्षों की अवधि तक अन्तरण करने पर निषेध, का अधिक्रमण किया गया है – प्राधिकारी के आबंटन रद्द करने वाले आदेश को निरस्त करना – यदि अभिलेखों से यह साबित होता है कि प्राप्तिकर्ता द्वारा आबंटन के सुसंगत संबंधित निबंधनों का अधिक्रमण नहीं किया गया है तो आबंटन रद्द करने वाला आदेश निरस्त किए जाने योग्य होगा क्योंकि सुसंगत अवधि 20 वर्ष को संशोधित करके 15 वर्ष करने के उपबंधों को भूतलक्षी प्रभाव दे दिया गया था ।

वर्तमान मामले में, आवश्यक तथ्य यह हैं कि श्री तेजू, चक शिला गादल, तहसील थियाग, जिला शिमला में स्थित खसरा सं. 296/264, माप 3-0.5 बीघा में समाविष्ट भूमि का कब्जे सहित स्वामी था । उसने वादियों से यह अभ्यावेदन किया कि वाद भूमि सभी विलंगमों से मुक्त है और वह इस भूमि का वादियों की भूमि के साथ चक महोरी, तहसील थियाग में स्थित वाटर मिल के साथ अदला-बदली करना चाहता है और उस समय पर वह वादियों से वाटर मिल का मरम्मत कराना चाहता था । वादियों ने उसके प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया था और अदला-बदली कर ली थी, जिसके बाद यह नामांतरण सं. 156 द्वारा अनुप्रमाणित हुआ था । उक्त अदला-बदली के पश्चात् वादियों ने वाद भूमि का कब्जा ले लिया था किन्तु उनमें से एक श्री जोगिन्दर सिंह ने वाद भूमि में हस्तक्षेप करना आरम्भ कर

दिया था और इसलिए, वादियों ने जोगिन्दर सिंह और केसरू के विरुद्ध एक सिविल वाद फाइल किया जो वादियों के पक्ष में डिक्री हो गया था । तथापि, उसके बाद जोगिन्दर सिंह इत्यादि ने उप-खंड अधिकारी (सिविल) थियाग के समक्ष एक आवेदन फाइल किया और इसके पश्चात् डी. सी. शिमला ने वादियों अथवा तेजू के विधिक प्रतिनिधियों को सुनवाई का अवसर दिए बिना तेजू के पक्ष में नातौड़ की मंजूरी को रद्द कर दिया था और भूमि का मोचन के लिए आदेश कर दिया था । वादियों के वाद का प्रतिवादी सं. 1 द्वारा विरोध किया गया । प्रतिवादी सं. 1 ने अपने लिखित कथन में यह स्वीकार किया है कि वाद भूमि तेजू को नातौड़ में मंजूर की गई थी । यह भी स्वीकार किया गया है कि इसके पश्चात्, तेजू ने वाद भूमि की वादियों की भूमि और वाटर मिल से अदला-बदली कर ली थी और इस एवज में तारीख 17 जनवरी, 1980 को एक नामांतरण भी पारित किया गया था किन्तु यह अभिवाक् किया गया है कि प्रश्नगत अदला-बदली और उसके आधार पर पारित नामांतरण गलत और अवैध थे क्योंकि वाद भूमि पिछले 20 वर्षों की अवधि से अहस्तांतरणीय बनी हुई है । लड़ने वाले प्रतिवादियों ने राजस्व अधिकारियों द्वारा पारित आदेशों का इस आधार पर समर्थन किया कि वे अत्यधिक वैध हैं और वादियों पर आबद्धकर हैं । विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपने समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् वादियों का वाद खारिज कर दिया, इसके अतिरिक्त, प्रथम अपील न्यायालय ने वादियों द्वारा इसके विरुद्ध प्रस्तुत अपील को भी खारिज कर दिया । इससे व्यथित होकर द्वितीय अपील फाइल की गई । न्यायालय द्वारा द्वितीय अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – तत्पश्चात्, वह इसका अन्तरण करने से निषिद्ध होगा जब तक कि उसके द्वारा इसका कब्जा लेने की तारीख से 20 वर्ष बीत न गए हों, जबकि उसके द्वारा इसका कब्जा लेने की तारीख से 20 वर्ष की अवधि बीतने के पूर्व वादियों की भूमि से इसका अदला-बदली करते हुए अन्तरण किया गया है जिससे सुसंगत कानूनी उपबंधों के समादेश का बार-बार अतिलंघन हुआ है । वादियों/अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि प्रतिवादी सं. 2 के पूर्वाधिकारी को हिमाचल प्रदेश नातौड़ भूमि नियम, 1968 के अधीन नातौड़ के माध्यम से निर्विवाद रूप में प्रतिकूल भूमि मंजूर की गई थी जिसे प्रतिवादी सं. 1 ने रद्द कर दिया था जिसका सुसंगत खंड 12(च) इसमें इसके पश्चात् उद्धृत किया जा रहा है – "यदि प्राप्तिकर्ता या उसका विधिक प्रतिनिधित्व करने वाला उत्तराधिकारी

पट्टा की तारीख से 15 वर्ष के भीतर नातौड़ की मंजूर भूमि का अन्तरण करता है अथवा यदि अन्तरण, जिसके लिए उसे भूमि मंजूर की गई थी, के प्रयोजन के अलावा किसी समय करता है । अन्तरण के अन्य तरीके से करने की दशा में राज्य सरकार को ऐसी मंजूरी रद्द करने की शक्ति होगी और वह ऐसी अन्तरित भूमि का शासन भी पुनः आरम्भ कर सकती है ।" जिसके अधीन प्राप्तिकर्ता को अन्तरण करने के लिए सशक्त किया गया है, वह पट्टा की तारीख से 15 वर्ष की अवधि जब तक बीत नहीं जाती है तब तक नहीं किया जा सकता है, प्रतिवादी सं. 2 के हित-पूर्वाधिकारी ने प्रतिकूल कृत्य करते हुए, सुसंगत कानूनी अवधि बीतने के बाद वादियों की भूमि के साथ अदला-बदली की थी चूंकि मंजूरी उसके पक्ष में वर्ष 1978 में दी गई थी, इसलिए, कानूनी अवधि बीतने के पश्चात् इसके भीतर इसका अन्तरण करने के विरुद्ध सुसंगत कानूनी निषेध लागू नहीं किया जा सकता है । उन्होंने यथाउद्धृत स्कीम के सुसंगत खंड 11 की अन्तर्वस्तुओं के साथ, जिसके अधीन प्रतिवादियों को निषिद्ध किया गया है इसे अन्तरित करते हुए, प्रतिवादी सं. 2 के हित-पूर्वाधिकारी के विरुद्ध चालाकी से प्रयोग किया गया है क्योंकि यह भूमि का उसके द्वारा कब्जा लेने की तारीख से 20 वर्ष बीतने के पूर्व नहीं किया गया था जिसका निषेध इसमें संशोधन के माध्यम से समाविष्ट किया गया था उसका प्रतिस्थापन प्रतिवादी सं. 1 के साथ-साथ प्रतिवादी सं. 2 के हित-पूर्वाधिकारी द्वारा अभिलिखित प्रतिकूल मंजूरी के पश्चात् इसकी सुसंगत मंजूरी के बारे में, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि इसकी विधि में कोई विधिक मान्यता नहीं है । उन्होंने प्रतिवादी सं. 2 के हित-पूर्वाधिकारी के बारे में, इसकी अन्तर्वस्तुओं को लागू करने के संबंध में भूतलक्षी प्रभाव देने को अयुक्तियुक्त माना है । हिमाचल प्रदेश नातौड़ भूमि अधिनियम, 1968 के खंड 12 के उप-खंड (च) अनिवार्य रूप से प्रतिवादी सं. 2 के हित-पूर्वाधिकारी को प्रतिवादी सं. 1 द्वारा रद्द किए गए नातौड़ की वाद भूमि की मंजूरी समकालीन समय में अविभावी थी, साथ ही 20 वर्षों की प्रतिस्थापित निषेध, उसके अन्तरण को वर्जित करने के लिए प्राप्तिकर्ता के साथ चालाकी से शामिल किया गया है, जिसकी परस्पर तीक्ष्ण संवीक्षा की जानी चाहिए इसके अलावा सुसंगत मंजूरी को प्रतिवादी सं. 1 द्वारा रद्द करने की वैधता और अवैधता के बारे में क्रमशः उसे लागू करने की भी सकारात्मक रूप में संवीक्षा की जानी चाहिए । यदि नियम, 1968 के खंड 12 के उप-खंड (च) को इस न्यायालय द्वारा नातौड़ भूमि को अन्तरित करने के लिए प्राप्तिकर्ता के विरुद्ध इसके

अधीन प्रतिस्थापित 15 वर्षों की निषेध को लागू करने के बारे में अविभावी विधिक नियंत्रण लागू किया जाता है तो इससे सुस्पष्टतः प्राप्तिकर्ता द्वारा किए गए प्रतिकूल अन्तरण संरक्षित होता है इतना ही नहीं जब यह सुस्पष्टतः 15 वर्षों की सुसंगत अवधि उसके बारे में तारीख 15 दिसम्बर, 1978 को बीतती है । तथापि, शब्द "उसके द्वारा भूमि का कब्जा लेने की तारीख से 20 वर्ष की अवधि" का निर्धारण स्कीम के खंड 11 द्वारा की जाती है, तारीख 11 सितम्बर, 1980 की अधिसूचना द्वारा 15 वर्षों की प्रतिस्थापित अवधि, सक्षम प्राधिकारी द्वारा नातौड़ के माध्यम से उसे मंजूर भूमि का कब्जा धारित करने के पूर्ववर्ती अवधि के तथ्य से इसका महत्व कम नहीं होता जिसके अधीन सुसंगत नियम अविभावी होते हैं जिसके अधीन 15 वर्षों की अवधि विहित की गई है जिसके भीतर प्राप्तिकर्ता इसे अन्तरित करने से वर्जित होता है, तारीख 11 सितम्बर, 1980 को या इसके पश्चात् प्राप्तिकर्ता द्वारा लिए गए प्रतिकूल भूमि के कब्जे की दशा में भी इसके द्वारा इसका कब्जा लेने की तारीख से प्रतिस्थापित आज्ञापक अवधि 20 वर्ष पर जोर दिया गया है, नियम, 1968 के खंड 12 के उप-खंड (च) में प्रतिस्थापित 15 वर्षों की सुसंगत निषेध का प्रभाव, इसके अधीन नातौड़ भूमि अन्तरित करने के लिए प्राप्तिकर्ता के विरुद्ध कम नहीं होता है न ही पूर्वोक्त खंड मंजूरी के साथ व्यावहारिक होता है । दूसरे शब्दों में, वर्ष 1980 में प्रतिकूल नियमों में किए गए संशोधन द्वारा समाविष्ट "उसके द्वारा भूमि का कब्जा लेने की तारीख से 20 वर्ष" वाद की सुसंगतता 15 वर्षों की अब तक निषेध के बदले प्रतिस्थापित किया गया है जो महत्वपूर्ण तौर पर, वाद भूमि का अन्तरण करने के उसके कृत्य असंशोधित/अप्रतिस्थापित प्रतिकूल खंड की परिधि के भीतर प्राप्तिकर्ता के अधिकार को छीनता है जब तक कि उसके पक्ष में सुसंगत मंजूरी के माध्यम से उसका कब्जा अभिनिर्धारित नहीं कर दिया जाता है । यथार्थतः, प्राप्तिकर्ता द्वारा मात्र हिमाचल प्रदेश भूमि संहिता के पृष्ठ 493 पर उल्लिखित नियम, 1968 के खंड 12 के उप-खंड (च) का अवलंब लेना भी महत्वपूर्ण है जिसमें जब तक 15 वर्ष बीत नहीं जाते हैं तब तक उसे अन्तरण करने के अपने अधिकार पर निर्बंधन होना वर्णित है, जिस तारीख से सुसंगत मंजूरी उसके पक्ष में अभिलिखित की गई है जिसके पूर्व उसका उस पर कब्जा अभिनिर्धारित नहीं हुआ था, प्राप्तिकर्ता का 15 वर्ष बीतने के बाद भी उसका अन्तरण नहीं कर सकता था क्योंकि उसके पक्ष में अभिलिखित प्रतिकूल मंजूरी सन्निकट थी जब सुसंगत कानूनी निषेध प्रतिकूलतः

प्रतिस्थापित हुआ था यद्यपि आरोप भी तारीख 11 सितम्बर, 1980 को लगाया गया था तथापि, यह भूतलक्षी रूप से आरोपित नहीं हुआ था, फिर भी उसके ऊपर 20 वर्षों का निर्बंधन आरोपित करने के लिए सुसंगत विचार प्राप्तिकर्ता द्वारा उस पर कब्जा अभिनिर्धारित करने के बारे में शिकायत की गई थी जिसके विरुद्ध, जिसके अधीन इसे अन्तरित करना होता है, इसे तारीख 11 सितम्बर, 1980 के पूर्व अभिलिखित मंजूरी के साथ लागू करना उपयुक्त होगा । परिणामतः, प्रतिकूल मंजूरी, प्रतिवादी सं. 2 के हित-पूर्वाधिकारी के पक्ष में प्रतिवादी सं. 1 द्वारा तारीख 12 दिसम्बर, 1978 को अभिलिखित रद्दकरण आदेश के बावजूद निरसन में संशोधन हो सकता है, अतएव, तारीख 11 सितम्बर, 1980 को सुसंगत खंड में लगाए गए 20 वर्षों का सुसंगत प्रतिस्थापित निषेध को आरोपित करना संभाव्य था जब तक कि तारीख 11 सितम्बर, 1980 के पूर्व उसका कब्जा अभिनिर्धारित नहीं कर दिया जाता, जिसके उपरान्त 15 वर्ष की अवधि के परे जो उस समय अविभावी प्रतिकूल नियम था, के अधीन इसका अन्तरण करने के लिए कानूनी रूप से हकदार अभिनिर्धारित नहीं कर दिया जाता तब तक यह उसके बारे में लागू होगा । प्रतिकूलतः, यदि उसका इसके ऊपर कब्जा अभिनिर्धारित नहीं किया जाता तो भी यदि वह तारीख 11 सितम्बर, 1980 को या इसके पश्चात् इसका कब्जा लेता है तो 20 वर्षों की अवधि का प्रतिस्थापित समादेश उसके विरुद्ध अन्तरण करने को उसे वर्जित करता है जिसे तारीख 15 दिसम्बर, 1978 को उसके पक्ष में अभिलिखित पूर्ववर्ती मंजूरी से बलपूर्वक असंबद्ध अभिनिर्धारित किया जा सकता है । 20 वर्ष की प्रतिस्थापित अवधि के साथ 15 वर्ष की अवधि के पहले जो समकालीन प्रक्रम पर अविभावी नियम था, जिसके अधीन उसके पक्ष में अभिलिखित प्रतिकूल मंजूरी को अन्तरित करने से वर्जित किया गया था, पूर्वोक्त कारणों से प्राप्तिकर्ता को पूर्वक्रय कानूनी आदेश का लाभ देते हुए प्राप्तिकर्ता को 11 सितम्बर, 1980 के पूर्व उस पर उसका कब्जा अभिनिर्धारित किया गया था जिसके कारण उसके पक्ष में अभिलिखित प्रतिकूल मंजूरी को समकालीन समय पर अविभावी प्रतिकूल नियमों में वर्णित आरोप की अवधि की परिधि के भीतर उसे अन्तरण करने से विधिसम्मत बनाया जाना भी प्राप्तिकर्ता को मंजूरी की उसकी मौन स्वीकृति अनिवार्य होने के नाते तारीख 11 सितम्बर, 1980 के पूर्व उस पर उसका कब्जा अभिनिर्धारित किया गया था, इसके प्रतिकूल अप्रतिस्थापित नियमों के अधीन नातौड़ के माध्यम से उसे मंजूर भूमि का कब्जा अभिनिर्धारित

नहीं किया गया था जिसके परिणामस्वरूप मंजूरी प्राप्त करने में उसके परित्याग करने में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है । तथापि, जब मंजूरी के अनुसरण में, जो तारीख 15 दिसम्बर, 1978 को प्राप्त हुई थी, सुसंगत नामांतरण तारीख 17 जनवरी, 1980 को अनुप्रमाणित हुआ था अतएव, खंड 11 में विहित सुसंगत प्रतिस्थापित अवधि के प्रवर्तन के बारे में अंतिम तारीख के पूर्व प्राप्तिकर्ता को उस पर इसका कब्जा होना अभिनिर्धारित किया गया है । परिणामतः, जब खंड 12(च) में समाविष्ट सुसंगत प्रतिस्थापित अवधि 15 वर्षों के बारे में आरोप लगाने के पूर्ववर्ती प्रक्रम पर ही प्रतिवादी सं. 2 के हित-पूर्वाधिकारी को मंजूर वाद भूमि, जिसके बारे में उसके द्वारा अन्तरण किया जाना अभिकथित किया गया है, का विधिमान्य तौर पर वाद भूमि का कब्जा अभिनिर्धारित करने से प्रकटतः प्राप्तिकर्ता प्रभावित नहीं होता है । परिणामतः, तारीख 11 सितम्बर, 1980 के पूर्व उस पर उसका कब्जा अभिनिर्धारित करने के प्रतिकूल नियमों के खंड 12(च) के सुसंगत भाग लागू नहीं होते हैं जिसके अधीन 15 वर्षों की अवधि विहित की गई है, जिसके भीतर उसे इसका अन्तरण करने से निषिद्ध किया गया था जबकि उसके द्वारा इसका अन्तरण पूर्वोक्त अवधि बीतने के पश्चात् किया गया था, इसलिए, वाद भूमि को अन्तरित करने का उसका कृत्य संरक्षित है । (पैरा 8)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2007 की नियमित द्वितीय अपील सं. 321.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से श्री हर्ष खन्ना, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से श्री विवेक सिंह अत्री, उप-महाधिवक्ता

प्रत्यर्थी सं. 3 की ओर से श्री श्याम चौहान, काउंसेल

न्यायमूर्ति सुरेश्वर ठाकुर – वर्तमान अपील, विद्वान् जिला न्यायाधीश (वन), शिमला, हिमाचल प्रदेश द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और डिक्री के विरुद्ध फाइल की गई है, जिसके द्वारा उन्होंने विद्वान् उप-न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी, थियाग, जिला शिमला द्वारा दिए गए निर्णय की पुष्टि कर दी थी, जिन्होंने वादियों का वाद खारिज कर दिया । वादियों ने विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा उनके विरुद्ध अभिलिखित समवर्ती निष्कर्षों से व्यथित होकर, विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित समवर्ती निर्णयों

और डिक्रियों को उलटने की ईप्सा करते हुए, वर्तमान अपील फाइल की है ।

2. वर्तमान अपील में विनिश्चय के लिए आवश्यक तथ्य यह हैं कि श्री तेजू, चक शिला गादल, तहसील थियाग, जिला शिमला में स्थित खसरा सं. 296/264, माप 3-0.5 बीघा में समाविष्ट भूमि का कब्जे सहित स्वामी था । उसने वादियों से यह अभ्यावेदन किया कि वाद भूमि सभी विलंगमों से मुक्त है और वह इस भूमि का वादियों की भूमि के साथ चक महोरी, तहसील थियाग में स्थित वाटर मिल के साथ अदला-बदली करना चाहता है और उस समय पर वह वादियों से वाटर मिल का मरम्मत कराना चाहता था । वादियों ने उसके प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया था और अदला-बदली कर ली थी, जिसके बाद यह नामांतरण सं. 156 द्वारा अनुप्रमाणित हुआ था । उक्त अदला-बदली के पश्चात् वादियों ने वाद भूमि का कब्जा ले लिया था किन्तु उनमें से एक श्री जोगिन्दर सिंह ने वाद भूमि में हस्तक्षेप करना आरम्भ कर दिया था और इसलिए, वादियों ने जोगिन्दर सिंह और केसरू के विरुद्ध एक सिविल वाद फाइल किया जो वादियों के पक्ष में डिक्री हो गया था । तथापि, उसके बाद जोगिन्दर सिंह इत्यादि ने उप-खंड अधिकारी (सिविल) थियाग के समक्ष एक आवेदन फाइल किया और इसके पश्चात् डी. सी. शिमला ने वादियों अथवा तेजू के विधिक प्रतिनिधियों को सुनवाई का अवसर दिए बिना तेजू के पक्ष में नातौड़ की मंजूरी को रद्द कर दिया था और भूमि का मोचन के लिए आदेश कर दिया था ।

3. वादियों के वाद का प्रतिवादी सं. 1 द्वारा विरोध किया गया । प्रतिवादी सं. 1 ने अपने लिखित कथन में यह स्वीकार किया है कि वाद भूमि तेजू को नातौड़ में मंजूर की गई थी । यह भी स्वीकार किया गया है कि इसके पश्चात्, तेजू ने वाद भूमि की वादियों की भूमि और वाटर मिल से अदला-बदली कर ली थी और इस एवज में तारीख 17 जनवरी, 1980 को एक नामांतरण भी पारित किया गया था किन्तु यह अभिवाक् किया गया है कि प्रश्नगत अदला-बदली और उसके आधार पर पारित नामांतरण गलत और अवैध थे क्योंकि वाद भूमि पिछले 20 वर्षों की अवधि से अहस्तांतरणीय बनी हुई है । लड़ने वाले प्रतिवादियों ने राजस्व अधिकारियों द्वारा पारित आदेशों का इस आधार पर समर्थन किया कि वे अत्यधिक वैध हैं और वादियों पर आबद्धकर हैं ।

4. प्रत्युत्तर में, वादपत्र में यथाअंतर्विष्ट प्रकथनों को वादियों की ओर

से पुनः दोहराया गया और वादपत्र के प्रतिकूल उन लिखित कथनों का खंडन किया गया ।

5. पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर विद्वान् विचारण न्यायालय ने लड़ने वाले पक्षकारों के बीच निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए :—

(1) क्या वाद सं. 2/96 में उप-आयुक्त शिमला द्वारा पारित तारीख 17 जनवरी, 1997 का आदेश अपास्त किए जाने योग्य है, जैसा कि अभिकथित है ?

(2) यदि विवाद्यक सं. 1 सकारात्मक साबित कर दिया जाता है तो क्या वादी, स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश का अनुतोष पाने का हकदार है, जैसी कि प्रार्थना की गई है ?

(3) अनुतोष ।

6. विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपने समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् वादियों का वाद खारिज कर दिया, इसके अतिरिक्त, प्रथम अपील न्यायालय ने वादियों द्वारा इसके विरुद्ध प्रस्तुत अपील को भी खारिज कर दिया ।

7. अब, वादियों/अपीलार्थियों ने विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा अपने आक्षेपित निर्णय और डिक्री में अभिलिखित निष्कर्षों को आक्षेपित करते हुए, इस न्यायालय के समक्ष वर्तमान द्वितीय अपील संस्थित की है । जब यह अपील तारीख 5 जून, 2009 को स्वीकृति के लिए आया तो इस न्यायालय ने इसमें इसके पश्चात् उद्धृत विधि के सारवान् प्रश्न पर अपील स्वीकार कर ली :—

(1) क्या विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों के निर्णय कायम रखे जा सकते हैं जिसे उप-आयुक्त शिमला के तारीख 17 जनवरी, 1997 के आदेशों के आधार पर पारित किया गया है और तत्पश्चात् खंड आयुक्त, शिमला खंड के तारीख 13 अक्तूबर, 1997 के पश्चात्वर्ती आदेश पर पारित किया गया है, जो बिना अधिकारिता के है ?

विधि का सारवान् प्रश्न

8. संबंधित प्राधिकारी द्वारा नातौड़ के माध्यम से प्रत्यर्थी/प्रतिवादी सं. 2 के हित-पूर्वाधिकारी को वाद भूमि की मंजूरी को प्रतिवादी सं. 1 द्वारा रद्द कर दिया गया था । प्रतिवादी सं. 2 के हित-पूर्वाधिकारी को नातौड़ के

माध्यम से वाद भूमि की प्रतिकूल मंजूरी को प्रतिवादी सं. 1 द्वारा रद्द करना, हिमाचल प्रदेश भूमिहीन व्यक्तियों और अन्य अर्ह व्यक्तियों को नातौड़ भूमि की मंजूरी स्कीम, 1975 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "स्कीम" कहा गया है) के समादेश का उल्लंघन है, जिसका सुसंगत खंड 11 नीचे इसके पश्चात् उद्धृत किया जा रहा है :–

> "11. अन्तरण करने पर निर्बंधन – प्राप्तिकर्ता, इस स्कीम के अधीन मंजूर भूमि का अन्तरण, उसके द्वारा भूमि का कब्जा लेने की तारीख से 20 वर्ष की अवधि के भीतर किसी व्यक्ति को नहीं करेगा । इस पैरा के उपबंध का उल्लंघन करने की दशा में, ऐसी मंजूरी को राज्य सरकार द्वारा समाप्त कर दी जाएगी और इसके पश्चात्, उसे और किसी भूमि का आबंटन नहीं किया जाएगा । इसी प्रकार, यदि वह कब्जा लेने की तारीख से दो वर्ष की अवधि के भीतर भूमि का विघटन करने में असफल रहता है तो ऐसी मंजूरी समाप्त कर दी जाएगी :
>
> परन्तु, इस स्कीम के अधीन मंजूर भूमि, विभाजन, अन्तरण या किसी अन्य साधनों द्वारा खंडकरण के अध्यधीन नहीं होगी । राजस्व अधिकारी, स्वयं द्वारा पारित नामांतरण आदेशों में इन शर्तों को अभिलिखित करेगा । उसके आदेश जमाबंदी के टिप्पण कालम में भी अभिलिखित किए जाएंगे जिसमें भूमि से संबंधित नामांतरण समाविष्ट हैं । परन्तु, प्राप्तिकर्ता, ऐसी भूमि का विकास करने के लिए, जिनमें फसलें उगाने, बैलों, बीज और खादों इत्यादि को खरीदने के लिए ऋण लेने के प्रयोजन से हिमाचल प्रदेश कृषि उधार प्रवर्तन और प्रकीर्ण उपबंध (बैंक) अधिनियम, 1972 में यथापरिभाषित बैंक, प्राथमिक कृषि को-आपरेटिव क्रेडिट सोसाइटी के पक्ष में कब्जा दिए बिना बंधक के माध्यम से भूमि का अन्तरण कर सकता है ।"

तत्पश्चात्, वह इसका अन्तरण करने से निषिद्ध होगा जब तक कि उसके द्वारा इसका कब्जा लेने की तारीख से 20 वर्ष बीत न गए हों, जबकि उसके द्वारा इसका कब्जा लेने की तारीख से 20 वर्ष की अवधि बीतने के पूर्व वादियों की भूमि से इसका अदला-बदली करते हुए अन्तरण किया गया है जिससे सुसंगत कानूनी उपबंधों के समादेश का बार-बार अतिल्लंघन हुआ है । वादियों/अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि प्रतिवादी सं. 2 के पूर्वाधिकारी को हिमाचल प्रदेश नातौड़ भूमि नियम,

1968 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "नियम" कहा गया है) के अधीन नातौड़ के माध्यम से निर्विवाद रूप में प्रतिकूल भूमि मंजूर की गई थी जिसे प्रतिवादी सं. 1 ने रद्द कर दिया था जिसका सुसंगत खंड 12(च) इसमें इसके पश्चात् उद्धृत किया जा रहा है :–

> "यदि प्राप्तिकर्ता या उसका विधिक प्रतिनिधित्व करने वाला उत्तराधिकारी पट्टा की तारीख से 15 वर्ष के भीतर नातौड़ की मंजूर भूमि का अन्तरण करता है अथवा यदि अन्तरण, जिसके लिए उसे भूमि मंजूर की गई थी, के प्रयोजन के अलावा किसी समय करता है । अन्तरण के अन्य तरीके से करने की दशा में राज्य सरकार को ऐसी मंजूरी रद्द करने की शक्ति होगी और वह ऐसी अन्तरित भूमि का शासन भी पुनः आरम्भ कर सकती है ।"

जिसके अधीन प्राप्तिकर्ता को अन्तरण करने के लिए सशक्त किया गया है, वह पट्टा की तारीख से 15 वर्ष की अवधि जब तक बीत नहीं जाती है तब तक नहीं किया जा सकता है, प्रतिवादी सं. 2 के हित-पूर्वाधिकारी ने प्रतिकूल कृत्य करते हुए, सुसंगत कानूनी अवधि बीतने के बाद वादियों की भूमि के साथ अदला-बदली की थी चूंकि मंजूरी उसके पक्ष में वर्ष 1978 में दी गई थी, इसलिए, कानूनी अवधि बीतने के पश्चात् इसके भीतर इसका अन्तरण करने के विरुद्ध सुसंगत कानूनी निषेध लागू नहीं किया जा सकता है । उन्होंने यथाउद्धृत स्कीम के सुसंगत खंड 11 की अन्तर्वस्तुओं के साथ, जिसके अधीन प्रतिवादियों को निषिद्ध किया गया है इसे अन्तरित करते हुए, प्रतिवादी सं. 2 के हित-पूर्वाधिकारी के विरुद्ध चालाकी से प्रयोग किया गया है क्योंकि यह भूमि का उसके द्वारा कब्जा लेने की तारीख से 20 वर्ष बीतने के पूर्व नहीं किया गया था जिसका निषेध इसमें संशोधन के माध्यम समाविष्ट किया गया था उसका प्रतिस्थापन प्रतिवादी सं. 1 के साथ-साथ प्रतिवादी सं. 2 के हित-पूर्वाधिकारी द्वारा अभिलिखित प्रतिकूल मंजूरी के पश्चात् इसकी सुसंगत मंजूरी के बारे में, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि इसका विधि में कोई विधिक मान्यता नहीं है । उन्होंने प्रतिवादी सं. 2 के हित-पूर्वाधिकारी के बारे में, इसकी अन्तर्वस्तुओं को लागू करने के संबंध में भूतलक्षी प्रभाव देने को अयुक्तियुक्त माना है । हिमाचल प्रदेश नातौड़ भूमि अधिनियम, 1968 के खंड 12 के उप-खंड (च) अनिवार्य रूप से प्रतिवादी सं. 2 के हित-पूर्वाधिकारी को प्रतिवादी सं. 1 द्वारा रद्द किए गए नातौड़ की वाद भूमि की मंजूरी समकालीन समय में

अविभावी थी, साथ ही 20 वर्षों की प्रतिस्थापित निषेध, उसके अन्तरण को वर्जित करने के लिए प्राप्तिकर्ता के साथ चालाकी से शामिल किया गया है, जिसकी परस्पर तीक्ष्ण संवीक्षा की जानी चाहिए इसके अलावा सुसंगत मंजूरी को प्रतिवादी सं. 1 द्वारा रद्द करने की वैधता और अवैधता के बारे में क्रमशः उसे लागू करने की भी सकारात्मक रूप में संवीक्षा की जानी चाहिए । यदि नियम, 1968 के खंड 12 के उप-खंड (च) को इस न्यायालय द्वारा नातौड़ भूमि को अन्तरित करने के लिए प्राप्तिकर्ता के विरुद्ध इसके अधीन प्रतिस्थापित 15 वर्षों की निषेध को लागू करने के बारे में अविभावी विधिक नियंत्रण लागू किया जाता है तो इससे सुस्पष्टतः प्राप्तिकर्ता द्वारा किए गए प्रतिकूल अन्तरण संरक्षित होता है इतना ही नहीं जब यह सुस्पष्टतः 15 वर्षों की सुसंगत अवधि उसके बारे में तारीख 15 दिसम्बर, 1978 को बीतती है । तथापि, शब्द "उसके द्वारा भूमि का कब्जा लेने की तारीख से 20 वर्ष की अवधि" का निर्धारण स्कीम के खंड 11 द्वारा की जाती है, तारीख 11 सितम्बर, 1980 की अधिसूचना द्वारा 15 वर्षों की प्रतिस्थापित अवधि, सक्षम प्राधिकारी द्वारा नातौड़ के माध्यम से उसे मंजूर भूमि का कब्जा धारित करने के पूर्ववर्ती अवधि के तथ्य से इसका महत्व कम नहीं होता जिसके अधीन सुसंगत नियम अविभावी होते हैं जिसके अधीन 15 वर्षों की अवधि विहित की गई है जिसके भीतर प्राप्तिकर्ता इसे अन्तरित करने से वर्जित होता है, तारीख 11 सितम्बर, 1980 को या इसके पश्चात् प्राप्तिकर्ता द्वारा लिए गए प्रतिकूल भूमि के कब्जे की दशा में भी इसके द्वारा इसका कब्जा लेने की तारीख से प्रतिस्थापित आज्ञापक अवधि 20 वर्ष पर जोर दिया गया है, नियम, 1968 के खंड 12 के उप-खंड (च) में प्रतिस्थापित 15 वर्षों की सुसंगत निषेध का प्रभाव, इसके अधीन नातौड़ भूमि अन्तरित करने के लिए प्राप्तिकर्ता के विरुद्ध कम नहीं होता है न ही पूर्वोक्त खंड मंजूरी के साथ व्यावहारिक होता है । दूसरे शब्दों में, वर्ष 1980 में प्रतिकूल नियमों में किए गए संशोधन द्वारा समाविष्ट "उसके द्वारा भूमि का कब्जा लेने की तारीख से 20 वर्ष" वाद की सुसंगतता 15 वर्षों की अब तक निषेध के बदले प्रतिस्थापित किया गया है जो महत्वपूर्ण तौर पर, वाद भूमि का अन्तरण करने के उसके कृत्य असंशोधित/अप्रतिस्थापित प्रतिकूल खंड की परिधि के भीतर प्राप्तिकर्ता के अधिकार को छीनता है जब तक कि उसके पक्ष में सुसंगत मंजूरी के माध्यम से उसका कब्जा अभिनिर्धारित नहीं कर दिया जाता है । यथार्थतः, प्राप्तिकर्ता द्वारा मात्र हिमाचल प्रदेश भूमि संहिता के

पृष्ठ 493 पर उल्लिखित नियम, 1968 के खंड 12 के उप-खंड (च) का अवलंब लेना भी महत्वपूर्ण है जिसमें जब तक 15 वर्ष बीत नहीं जाते हैं तब तक उसे अन्तरण करने के अपने अधिकार पर निर्बंधन होना वर्णित है, जिस तारीख से सुसंगत मंजूरी उसके पक्ष में अभिलिखित की गई है जिसके पूर्व उसका उस पर कब्जा अभिनिर्धारित नहीं हुआ था, प्राप्तिकर्ता का 15 वर्ष बीतने के बाद भी उसका अन्तरण नहीं कर सकता था क्योंकि उसके पक्ष में अभिलिखित प्रतिकूल मंजूरी सन्निकट थी जब सुसंगत कानूनी निषेध प्रतिकूलतः प्रतिस्थापित हुआ था यद्यपि आरोप भी तारीख 11 सितम्बर, 1980 को लगाया गया था तथापि, यह भूतलक्षी रूप से आरोपित नहीं हुआ था, फिर भी उसके ऊपर 20 वर्षों का निर्बंधन आरोपित करने के लिए सुसंगत विचार प्राप्तिकर्ता द्वारा उस पर कब्जा अभिनिर्धारित करने के बारे में शिकायत की गई थी जिसके विरुद्ध, जिसके अधीन इसे अन्तरित करना होता है, इसे तारीख 11 सितम्बर, 1980 के पूर्व अभिलिखित मंजूरी के साथ लागू करना उपयुक्त होगा । परिणामतः, प्रतिकूल मंजूरी, प्रतिवादी सं. 2 के हित-पूर्वाधिकारी के पक्ष में प्रतिवादी सं. 1 द्वारा तारीख 12 दिसम्बर, 1978 को अभिलिखित रद्दकरण आदेश के बावजूद निरसन में संशोधन हो सकता है, अतएव, तारीख 11 सितम्बर, 1980 को सुसंगत खंड में लगाए गए 20 वर्षों का सुसंगत प्रतिस्थापित निषेध को आरोपित करना संभाव्य था जब तक कि तारीख 11 सितम्बर, 1980 के पूर्व उसका कब्जा अभिनिर्धारित नहीं कर दिया जाता, जिसके उपरान्त 15 वर्ष की अवधि के परे जो उस समय अविभावी प्रतिकूल नियम था, के अधीन इसका अन्तरण करने के लिए कानूनी रूप से हकदार अभिनिर्धारित नहीं कर दिया जाता तब तक यह उसके बारे में लागू होगा । प्रतिकूलतः, यदि उसका इसके ऊपर कब्जा अभिनिर्धारित नहीं किया जाता तो भी यदि वह तारीख 11 सितम्बर, 1980 को या इसके पश्चात् इसका कब्जा लेता है तो 20 वर्षों की अवधि का प्रतिस्थापित समादेश उसके विरुद्ध अन्तरण करने को उसे वर्जित करता है जिसे तारीख 15 दिसम्बर, 1978 को उसके पक्ष में अभिलिखित पूर्ववर्ती मंजूरी से बलपूर्वक असंबद्ध अभिनिर्धारित किया जा सकता है । 20 वर्ष की प्रतिस्थापित अवधि के साथ 15 वर्ष की अवधि के पहले जो समकालीन प्रक्रम पर अविभावी नियम था, जिसके अधीन उसके पक्ष में अभिलिखित प्रतिकूल मंजूरी को अन्तरित करने से वर्जित किया गया था, पूर्वोक्त कारणों से प्राप्तिकर्ता को पूर्वक्रय कानूनी आदेश का लाभ देते हुए प्राप्तिकर्ता को 11 सितम्बर, 1980 के पूर्व उस पर उसका कब्जा

अभिनिर्धारित किया गया था जिसके कारण उसके पक्ष में अभिलिखित प्रतिकूल मंजूरी को समकालीन समय पर अविभावी प्रतिकूल नियमों में वर्णित आरोप की अवधि की परिधि के भीतर उसे अन्तरण करने से विधिसम्मत बनाया जाना भी प्राप्तिकर्ता को मंजूरी की उसकी मौन स्वीकृति अनिवार्य होने के नाते तारीख 11 सितम्बर, 1980 के पूर्व उस पर उसका कब्जा अभिनिर्धारित किया गया था, इसके प्रतिकूल अप्रतिस्थापित नियमों के अधीन नातौड़ के माध्यम से उसे मंजूर भूमि का कब्जा अभिनिर्धारित नहीं किया गया था जिसके परिणामस्वरूप मंजूरी प्राप्त करने में उसके परित्याग करने में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है । तथापि, जब मंजूरी के अनुसरण में, जो तारीख 15 दिसम्बर, 1978 को प्राप्त हुई थी, सुसंगत नामांतरण तारीख 17 जनवरी, 1980 को अनुप्रमाणित हुआ था अतएव, खंड 11 में विहित सुसंगत प्रतिस्थापित अवधि के प्रवर्तन के बारे में अंतिम तारीख के पूर्व प्राप्तिकर्ता को उस पर इसका कब्जा होना अभिनिर्धारित किया गया है । परिणामतः, जब खंड 12(च) में समाविष्ट सुसंगत प्रतिस्थापित अवधि 15 वर्षों के बारे में आरोप लगाने के पूर्ववर्ती प्रक्रम पर ही प्रतिवादी सं. 2 के हित-पूर्वाधिकारी को मंजूर वाद भूमि, जिसके बारे में उसके द्वारा अन्तरण किया जाना अभिकथित किया गया है, का विधिमान्य तौर पर वाद भूमि का कब्जा अभिनिर्धारित करने से प्रकटतः प्राप्तिकर्ता प्रभावित नहीं होता है । परिणामतः, तारीख 11 सितम्बर, 1980 के पूर्व उस पर उसका कब्जा अभिनिर्धारित करने को प्रतिकूल नियमों के खंड 12(च) के सुसंगत भाग लागू नहीं होते हैं जिसके अधीन 15 वर्षों की अवधि विहित की गई है, जिसके भीतर उसे इसका अन्तरण करने से निषिद्ध किया गया था जबकि उसके द्वारा इसका अन्तरण पूर्वोक्त अवधि बीतने के पश्चात् किया गया था, इसलिए, वाद भूमि को अन्तरित करने का उसका कृत्य संरक्षित है ।

9. पूर्ववर्ती कारणों से, विधि के सारवान् प्रश्न का उत्तर, वादियों/अपीलार्थियों के पक्ष में दिया जाता है । दोनों निचले न्यायालयों द्वारा दिए गए निर्णय और डिक्री अभिखंडित और अपास्त किए जाते हैं । तद्नुसार, डिक्री शीट तैयार की जाए । पक्षकार, अपने खर्चे स्वयं वहन करेंगे । सभी लम्बित आवेदनों को भी निपटाया जाता है । अभिलेखों को तुरन्त वापस भेजा जाए ।

अपील मंजूर की गई ।

क.

नेशनल इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड

बनाम

श्रीमती डी. श्रीदेवी और अन्य

तारीख 18 अगस्त, 2016

न्यायमूर्ति अरुण भंसाली

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 163क और 173 – दुर्घटना – प्रतिकर के लिए दावा – बीमा कंपनी द्वारा प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से इनकार करना – जहां बीमा कंपनी, बीमाकृत के किसी दोष के कारण घटित दुर्घटना में प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से इनकार करती है तथापि, यदि उसे प्रतिकर संदाय करने के लिए दायी ठहराया जाता है और उसके द्वारा प्रतिकर संदत्त कर दिया जाता है तो वह बीमा पालिसी की शर्तों और निबंधनों के भंग के आधार पर बीमाकृत से ऐसी प्रतिकर धनराशि वसूल सकती है ।

वर्तमान मामले में, मृतक आर. रघुवरण नायर अपनी मोटरसाइकिल पर यात्रा कर रहा था तब जीप सं. आर जे 10 सी 0274 को उसके चालक पृथ्वीराज द्वारा उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाते हुए उक्त आर. रघुवरण नायर को टक्कर मारी जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो गई थी । दावेदारों ने 12,16,600/- रुपए की राशि के लिए प्रतिकर का दावा किया था । चालक, स्वामी और बीमा कंपनी ने दावे का विरोध किया था । जबकि चालक और स्वामी ने इस बात से इनकार किया है कि दुर्घटना चालक द्वारा उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाने के कारण घटी थी, बीमा कंपनी ने यह उपदर्शित किया है कि बीमा की शर्तों का उल्लंघन हुआ है और जीप का अनधिकृत टैक्सी के रूप में उपयोग किया जा रहा था, जो बीमा शर्तों के अंतर्गत नहीं आता है । पक्षकारों को सुनने के बाद, अधिकरण ने यह निष्कर्ष निकाला है कि दुर्घटना चालक पृथ्वीराज द्वारा जीप को उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाते हुए घटी थी । अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा दिए गए अभिवाक् के संबंध में, अधिकरण ने यह निष्कर्ष निकाला है कि ऐसे समय पर बीमा कंपनी ने यह साबित किया है कि स्वामी को जाली अनुज्ञप्ति होने की जानकारी थी, बीमा कंपनी को तृतीय पक्षकार के लिए स्वयं के दायित्व को अस्वीकार करने की अनुमति नहीं दी जा सकती

है और उक्त निष्कर्ष के आधार पर, बीमा कंपनी द्वारा किए गए निवेदनों को खारिज किया जाता है । प्रतिकर निर्धारित करने के बाद, इसमें पूर्व में उपर्युक्त उपदर्शित दावे का अधिनिर्णय पारित किया जाता है । निर्णय से व्यथित होकर अपील फाइल की गई । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – प्रत्युत्तर, जिसे बीमा कंपनी ने फाइल किया है, से यह प्रतीत होता है कि बीमा कंपनी ने अतिरिक्त अभिवाक् यह लिया है कि चालक के पास चालन अनुज्ञप्ति नहीं थी, जिसके कारण बीमा की शर्तों का उल्लंघन हुआ है, जीप को टैक्सी के रूप में अप्राधिकृत रूप से चलाया जा रहा था और इसलिए, बीमा कंपनी दायी नहीं थी । प्रत्युत्तर जिसे तारीख 5 जनवरी, 1993 को फाइल किया था, से यह प्रतीत होता है कि जाली अनुज्ञप्ति होने के संबंध में कोई अभिवाक् अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा नहीं किया गया है । यान का स्वामी-राम चन्द्र की प्रतिपरीक्षा में, जो एन.ए.डब्ल्यू. 1 के रूप में उपस्थित हुआ था, जिससे प्रतिपरीक्षा में दो प्रश्न पूछे गए थे जिसमें उसने यह उत्तर दिया कि वह सुझाव देने में गलत था कि दुर्घटना के समय पर चालक के पास चालन अनुज्ञप्ति नहीं था और अनुज्ञप्ति जाली थी । उक्त प्रतिपरीक्षा तारीख 31 जनवरी, 1997 को हुई थी । यद्यपि, अपीलार्थी-बीमा कंपनी के पास तारीख 27 जुलाई, 1994 (प्रदर्श ए-1/एन.ए.डब्ल्यू. 3) की रिपोर्ट थी जिसमें यह उपदर्शित किया गया है कि प्रश्नगत अनुज्ञप्ति जाली थी, तथापि, स्वामी ने उक्त रिपोर्ट का विरोध नहीं किया था और उसकी उस समय सम्यक् सावधानी बरतने के बारे में कोई प्रतिपरीक्षा नहीं की गई थी जब उसने चालक को नियुक्त किया था । जिसके पश्चात् रिपोर्ट (प्रदर्श ए-1/एन.ए.डब्ल्यू. 3) और (प्रदर्श ए-3/एन.ए.डब्ल्यू. 3) प्रस्तुत करते हुए साक्षियों को पेश किया गया था । माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा जाली अनुज्ञप्ति के मामले में, बीमा कंपनी का दायित्व अवधारित करने के लिए अधिकथित मापदंड को ध्यान में रखते हुए और जहां अभिलेख पर साबित हो गया है कि अनुज्ञप्ति जाली थी वहां यह साबित करने का दायित्व बीमा कंपनी पर होता है कि स्वामी ने उपेक्षा की थी और/या जाली अनुज्ञप्ति होने के बावजूद, उसने चालक को यान चलाने की अनुमति दी थी । वर्तमान मामले में, स्वामी, साक्षी-कठघरे में उपस्थित हुआ था और उसकी सरसरी तौर से प्रतिपरीक्षा की गई थी जिसमें उसने अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा दिए गए सुझाव से इनकार किया है । अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से यह सुझाव नहीं मिलते हैं कि स्वामी को अनुज्ञप्ति के जाली होने के बारे में जानकारी थी और इन परिस्थितियों

में, तथा माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा स्वर्ण सिंह, पेप्सू रोड ट्रांसपोर्ट कारपोरेशन वाले मामले में, अधिकथित विधि और इस न्यायालय द्वारा तफाजुल हुसैन वाले मामले में, अधिकथित विधि को ध्यान में रखते हुए, बीमा कंपनी, दावेदारों को प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से बच नहीं सकती है । (पैरा 9, 10, 14 और 15)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2016] 2016 (1) ए. सी. टी. सी. (राजस्थान) 226 : **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **तफाजुल हुसैन और अन्य** ; 13

[2013] (2013) 10 एस. सी. सी. 217 : **पेप्सू रोड ट्रांसपोर्ट कारपोरेशन** बनाम **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** ; 12

[2002] (2002) 3 एस. सी. सी. 297 : **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **स्वर्ण सिंह और अन्य** । 7

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2000 की एकल पीठ सिविल प्रकीर्ण अपील सं. 439.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी-बीमाकर्ता की ओर से श्री संजीव जौहरी

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री एन. एल. जोशी

न्यायमूर्ति अरुण भंसाली – यह अपील अपीलार्थी-बीमा कंपनी ने मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण, अनूपगढ़, जिला-श्रीगंगानगर (अधिकरण) द्वारा तारीख 22 अप्रैल, 2000 को पारित अधिनिर्णय के विरुद्ध व्यथित होकर फाइल की गई है जिसके द्वारा अधिकरण ने आर. रघुवरण नायर की मृत्यु हो जाने के कारण दावेदारों को प्रतिकर के रूप में 2,85,000/- रुपए राशि अधिनिर्णीत की है और अपीलार्थी-बीमा कंपनी को प्रतिकर का संदाय करने के लिए दायी ठहराया है ।

2. प्रतिकर के आवेदन को मृतक आर. रघुवरण नायर की पत्नी ने

इन प्रकथनों के साथ फाइल किया था कि जब मृतक अपनी मोटरसाइकिल पर यात्रा कर रहा था तब जीप सं. आर जे 10 सी 0274 को उसके चालक पृथ्वीराज द्वारा उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाते हुए उक्त आर. रघुवरण नायर को टक्कर मारी थी जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो गई थी । दावेदारों ने प्रतिकर के लिए 12,16,600/- रुपए की राशि का दावा किया था ।

3. चालक, स्वामी और बीमा कंपनी ने दावे का विरोध किया था । जबकि चालक और स्वामी ने इस बात से इनकार किया है कि दुर्घटना चालक द्वारा उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाने के कारण घटी थी, बीमा कंपनी ने यह उपदर्शित किया है कि बीमा की शर्तों का उल्लंघन हुआ है और जीप का अनधिकृत टैक्सी के रूप में उपयोग किया जा रहा था, जो बीमा शर्तों के अंतर्गत नहीं आता है ।

4. अधिकरण ने चार विवाद्यक विरचित किए थे । दावेदारों की ओर से तीन साक्षियों की परीक्षा कराई गई थी और गैर-दावेदारों की ओर से स्वामी-रामचन्द्र की एन.ए.डब्ल्यू. 1 के रूप में परीक्षा कराई थी, बीमा कंपनी की ओर से वाई. के. कौशिक एन.ए.डब्ल्यू. 3/1 के रूप में परीक्षा कराई थी तथा अकेले जीवन कुमार की एन.ए.डब्ल्यू. 3/2 के रूप में परीक्षा कराई थी ।

5. पक्षकारों को सुनने के बाद, अधिकरण ने यह निष्कर्ष निकाला है कि दुर्घटना चालक पृथ्वीराज द्वारा जीप को उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाते हुए घटी थी । अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा दिए गए अभिवाक् के संबंध में, अधिकरण ने यह निष्कर्ष निकाला है कि ऐसे समय पर बीमा कंपनी ने यह साबित किया है कि स्वामी को जाली अनुज्ञप्ति होने की जानकारी थी, बीमा कंपनी को तृतीय पक्षकार के लिए स्वयं के दायित्व को अस्वीकार करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है और उक्त निष्कर्ष के आधार पर, बीमा कंपनी द्वारा किए गए निवेदनों को खारिज किया जाता है । प्रतिकर निर्धारित करने के बाद, इसमें पूर्व में उपर्युक्त उपदर्शित दावे का अधिनिर्णय पारित किया जाता है ।

6. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह निवेदन किया गया है कि अधिकरण ने प्रतिकर के संदाय के लिए अपीलार्थी-बीमा कंपनी को दायी ठहराने में गलती की है क्योंकि अभिलेख पर उपलब्ध दस्तावेजी साक्ष्य से

यह साबित होता है कि अनुज्ञप्ति, जिसे चालक पृथ्वीराज ने प्रस्तुत किया था वह जाली थी और चूंकि बीमा की शर्तों का यान के स्वामी द्वारा उल्लंघन किया गया है, इसलिए बीमा कंपनी को दायी नहीं ठहराया जा सकता है । यह भी निवेदन किया है कि बीमा कंपनी के वाई. के. कौशिक (एन.ए.डब्ल्य. 3/1), शाखा प्रबंधक और जीवन कुमार (एन.ए.डब्ल्यू. 3/2) रजिस्ट्री करने वाले लिपिक तथा अनुज्ञप्ति प्राधिकारी, ऊना द्वारा दिए गए साक्ष्य से, अभिलेख पर यह साबित हो गया है कि अनुज्ञप्ति जाली थी और ऐसी परिस्थितियों में, बीमा कंपनी को दायी नहीं ठहराया जा सकता है ।

7. प्रत्यर्थी-दावेदारों के विद्वान् काउंसेल ने अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा किए गए निवेदनों का विरोध किया है । यह निवेदन किया है कि जाली अनुज्ञप्ति मामलों में दायी बीमा कंपनी के मानदंडों को अभिनिर्धारित करते हुए माननीय उच्चतम न्यायालय ने **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **स्वर्ण सिंह और अन्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि मात्र सुसंगत समय पर अनुपस्थित, जाली या अवैध चालन अनुज्ञप्ति या चलाने के लिए चालक की अयोग्यता, स्वयं ही बीमाकृत या तृतीय पक्षकार के एक दूसरे के विरुद्ध बीमाकर्ता का उपलब्ध बचाव नहीं है । बीमाकर्ता को यह साबित करना होता है कि बीमाकृत उपेक्षा का दोषी है और बीमा की शर्तों को पूरा करने के मामले में युक्तियुक्त सावधानी बरतने में चूक हुई थी, जिसके तथ्य अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा साबित नहीं किए गए हैं और इसलिए, बीमा कंपनी वर्तमान मामले में दावे से मुक्त होने की हकदार नहीं है ।

8. मैंने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल द्वारा किए गए निवेदनों पर विचार किया है और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया है ।

9. प्रत्युत्तर, जिसे बीमा कंपनी ने फाइल किया है, से यह प्रतीत होता है कि बीमा कंपनी ने अतिरिक्त अभिवाक् यह लिया है कि चालक के पास चालन अनुज्ञप्ति नहीं थी, जिसके कारण बीमा की शर्तों का उल्लंघन हुआ है, जीप को टैक्सी के रूप में अप्राधिकृत रूप से चलाया जा रहा था और इसलिए, बीमा कंपनी दायी नहीं थी ।

10. प्रत्युत्तर जिसे तारीख 5 जनवरी, 1993 को फाइल किया था, से यह प्रतीत होता है कि जाली अनुज्ञप्ति होने के संबंध में कोई अभिवाक्

---

[1] (2002) 3 एस. सी. सी. 297.

अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा नहीं किया गया है । यान का स्वामी-रामचन्द्र की प्रतिपरीक्षा में, जो एन.ए.डब्ल्यू. 1 के रूप में उपस्थित हुआ था, जिससे प्रतिपरीक्षा में दो प्रश्न पूछे गए थे जिसमें उसने यह उत्तर दिया कि वह सुझाव देने में गलत था कि दुर्घटना के समय पर चालक के पास चालन अनुज्ञप्ति नहीं था और अनुज्ञप्ति जाली थी । उक्त प्रतिपरीक्षा तारीख 31 जनवरी, 1997 को हुई थी । यद्यपि, अपीलार्थी-बीमा कंपनी के पास तारीख 27 जुलाई, 1994 (प्रदर्श ए-1/एन.ए.डब्ल्यू. 3) की रिपोर्ट थी जिसमें यह उपदर्शित किया गया है कि प्रश्नगत अनुज्ञप्ति जाली थी, तथापि, स्वामी ने उक्त रिपोर्ट का विरोध नहीं किया था और उसकी उस समय सम्यक् सावधानी बरतने के बारे में कोई प्रतिपरीक्षा नहीं की गई थी जब उसने चालक को नियुक्त किया था । जिसके पश्चात् रिपोर्ट (प्रदर्श ए-1/एन.ए.डब्ल्यू. 3) और (प्रदर्श ए-3/एन.ए.डब्ल्यू. 3) प्रस्तुत करते हुए साक्षियों को पेश किया गया था ।

11. **स्वर्ण सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने अनुज्ञप्ति जाली होने पर बीमा कंपनी को अपने दायित्व से छुटकारा पाने की अपेक्षा के बारे में विचार किया गया है जिसमें निष्कर्षों को सारांशित करते हुए, यह अधिकथित किया है जो इस प्रकार है :–

> "110. इन याचिकाओं में उठे विभिन्न विवाद्यकों से संबंधित हमारे निष्कर्षों का सारांश इस प्रकार है –
>
> (iii) बीमाकर्ता द्वारा दायित्व से बचने के लिए पालिसी की शर्त का भंग अर्थात् अधिनियम की धारा 149 की उपधारा 2(क)(ii) में यथाअंतर्विष्ट चालक अयोग्यता या चालक द्वारा अविधिमान्य चालन अनुज्ञप्ति को बीमाकृत व्यक्ति द्वारा किया गया साबित होना चाहिए । मात्र चालन अनुज्ञप्ति का न होना, उसका जाली या अविधिमान्य होना या सुसंगत समयबिंदु पर यान चालन के लिए चालक की अयोग्यता स्वयमेव ही बीमाकृत व्यक्ति या पर-व्यक्ति के विरुद्ध बीमाकर्ता को उपलब्ध प्रतिरक्षाएं नहीं हैं । बीमाकृत व्यक्ति के विरुद्ध अपने दायित्व से बचने के लिए बीमाकर्ता को यह साबित करना चाहिए कि बीमाकृत व्यक्ति उपेक्षा का दोषी था और वह सम्यक् रूप से अनुज्ञप्ति प्राप्त चालक या ऐसे व्यक्ति द्वारा जो सुसंगत समय पर यान के चालन के लिए अयोग्य नहीं था, यानों के प्रयोग के संबंध में

पालिसी की शर्तों को पूरा करने के मामले में युक्तियुक्त सावधानी बरतने में विफल रहा ।

(iv) तथापि, बीमा कंपनियों को अपने दायित्व को टालने के लिए न केवल उक्त कार्यवाहियों में उपलब्ध प्रतिरक्षा(ओं) को सिद्ध करना चाहिए अपितु यान के स्वामी की ओर से 'भंग' को भी सिद्ध करना चाहिए ; जिसके सबूत का भार उन पर होगा ।"

12. तथापि, विवाद्यक की माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **पेप्सू रोड ट्रांसपोर्ट कारपोरेशन** बनाम **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड**[1] वाले मामले में पुनः परीक्षा की गई थी जिसमें **स्वर्ण सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले और इस विषय पर अन्य विधि में निर्णयों पर विचार करने के पश्चात्, यह अधिकथित किया है जो इस प्रकार है :–

"10. प्रतिकर के किसी दावे में, यह प्रतिरक्षा लेने के लिए धारा 149(2)(क)(ii) के अधीन बीमाकर्ता को निश्चित रूप से स्वतंत्र होता है कि दुर्घटना में सम्मिलित यान के चालक के पास विधिवत् रूप से अनुज्ञप्ति नहीं थी । एक बार ऐसी प्रतिरक्षा ले लेता है तो दायित्व बीमाकर्ता पर होता है । किन्तु यदि इसके बाद यह साबित हो जाता है कि चालक के पास अनुज्ञप्ति जाली थी तो क्या इसमें बीमाकर्ता का दायित्व होता है, यह एक विवादास्पद प्रश्न है । जहां तक यान के स्वामी का संबंध है जब वह चालक को किराए पर लेता है तो उसे उसकी जांच करनी होती है कि क्या उसके पास विधिमान्य चालन अनुज्ञप्ति है । तत्पश्चात् उसे चालक की सक्षमता के संबंध में स्वयं संतुष्टि करनी होती है । वह उसके संबंध में संतुष्ट हो जाता है तो यह कहा जा सकता है कि स्वामी किसी भी व्यक्ति को नियोजन में रखने की युक्तियुक्त सावधानी लेता है जो वाहन को चलाने में योग्य और सक्षम होता है । स्वामी से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती है कि चालक की सेवाएं लेने पूर्व अनुज्ञप्ति प्राधिकारी के साथ चालन अनुज्ञप्ति के सत्यापन और सत्यता की सीमा से परे है । तथापि, ऐसे प्रास्थिति यान के बीमा के समय भिन्न हो जाएगी या तत्पश्चात् बीमा कंपनी अनुज्ञप्ति देने वाले प्राधिकारी से अनुज्ञप्ति का

[1] (2013) 10 एस. सी. सी. 217.

विधिवत् सत्यापन कराने के लिए स्वामी से अपेक्षा करती है या यदि यान के स्वामी का ध्यान आरोप की ओर आकर्षित करता है कि उनके द्वारा नियोजित चालक को जारी की गई अनुज्ञप्ति जाली है और अभी तक स्वामी अनुज्ञप्ति देने वाले प्राधिकारी से अनुज्ञप्ति की सत्यता के बारे में मामले का सत्यापन करने के लिए कोई उचित कार्रवाई नहीं करता है । **स्वर्ण सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में इसकी क्या व्याख्या की गई है । यदि स्वामी से ऐसी सूचना के बावजूद कि उसके चालक द्वारा रखी गई अनुज्ञप्ति जाली है तो उचित सत्यापन के लिए बीमाकृत द्वारा कोई कार्रवाई नहीं की जाती तो बीमाकृत की चूक होगी और ऐसी परिस्थितियों में, बीमा कंपनी प्रतिकर के लिए दायी नहीं है ।"

13. इस न्यायालय ने **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **तफाजुल हुसैन और अन्य**[1] वाले मामले में **पेप्सू रोड ट्रांसपोर्ट कारपोरेशन** (उपर्युक्त) वाले मामले में लिए गए निर्णय का भी अवलंब लेते हुए, पुनः यह अभिनिर्धारित किया है जो इस प्रकार है :–

"जैसा कि पूर्व अधिकथित किया गया है, वर्तमान मामले में, बीमा कंपनी यह साबित करने में असफल रही है कि चालक जगबीर सिंह की नियुक्ति करते समय, ट्रक के स्वामी को इस तथ्य की जानकारी थी कि चालक के पास किसी प्रकार की विधिमान्य अनुज्ञप्ति या प्रत्यक्ष चालन अनुज्ञप्ति नहीं थी । इसलिए, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पेप्सू रोड ट्रांसपोर्ट कारपोरेशन **बनाम** नेशनल बीमा कंपनी (उपर्युक्त) वाले मामले में, अधिकथित विधि को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय इस अपील में, कोई गुणागुण नहीं पाता है ।

14. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा जाली अनुज्ञप्ति के मामले में, बीमा कंपनी का दायित्व अवधारित करने के लिए अधिकथित मापदंड को ध्यान में रखते हुए और जहां अभिलेख पर साबित हो गया है कि अनुज्ञप्ति जाली थी वहां यह साबित करने का दायित्व बीमा कंपनी पर होता है कि स्वामी ने उपेक्षा की थी और/या जाली अनुज्ञप्ति होने के बावजूद, उसने चालक को यान चलाने की अनुमति दी थी ।

15. वर्तमान मामले में, स्वामी, साक्षी-कठघरे में उपस्थित हुआ था

---

[1] 2016 (1) ए. सी. टी. सी. (राजस्थान) 226.

और उसकी सरसरी तौर से प्रतिपरीक्षा की गई थी जिसमें उसने अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा दिए गए सुझाव से इनकार किया है । अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से यह सुझाव नहीं मिलते हैं कि स्वामी को अनुज्ञप्ति के जाली होने के बारे में जानकारी थी और इन परिस्थितियों में, तथा माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **स्वर्ण सिंह** (उपर्युक्त), **पेप्सू रोड ट्रांसपोर्ट कारपोरेशन** (उपर्युक्त) वाले मामले में, अधिकथित विधि और इस न्यायालय द्वारा **तफाजुल हुसैन** (उपर्युक्त) वाले मामले में, अधिकथित विधि को ध्यान में रखते हुए, बीमा कंपनी, दावेदारों को प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से बच नहीं सकती है ।

16. उपर्युक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, इस अपील में कोई सार नहीं है, इसलिए, इसे खारिज किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

मही./क.

(2017) 2 सि. नि. प. 139 **हिमाचल प्रदेश**

राज कुमार

बनाम

श्रीमती रुमालो देवी और अन्य

तारीख 7 सितम्बर, 2016

न्यायमूर्ति अजय मोहन गोयल

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 100 और आदेश 8 का नियम 5 [सपठित हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 6 और 8] – द्वितीय अपील – वाद संपत्ति का पैतृक और सहदायिकी संपत्ति होने का अभिवाक् किया जाना – सम्पुष्टि में कोई भी दस्तावेजी और मौखिक साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया जाना – वादपत्र में किए गए अभिकथनों से स्पष्टतः इनकार किया जाना – यदि अभिलेख पर किसी भी दस्तावेजी और मौखिक साक्ष्य द्वारा यह साबित नहीं किया जाता है कि वाद संपत्ति, पैतृक और सहदायिकी है और वादपत्र में इस बाबत प्रकथन से प्रत्यक्षतः इनकार किया जाता है तो ऐसी वाद संपत्ति का न्यागमन

तत्समय प्रवृत्त विधि के अनुसार ही होगा न कि हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के उपबंधों के अनुसार होगा ।

वर्तमान मामले में, आवश्यक तथ्य ये हैं कि अपीलार्थी/वादी ने मूल रूप से क्रमशः अपने पिता और चाचा अर्थात् जान्दू राम और सीता राम के विरुद्ध घोषणा और स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश के लिए एक वाद फाइल किया था, यह उल्लेख करते हुए कि वर्ष 1997-98 के लिए जमाबंदी के अनुसार, ग्राम मौजा मल्लपुर, परगना धरमपुर, तहसील नालागढ़, जिला सोलन में स्थित वाद भूमि वादी और प्रतिवादी सं. 1 की संयुक्त और पैतृक भूमि थी । वादी के अनुसार, सेहज राम की मृत्यु के पश्चात् उसकी संपत्ति जिसमें वादी भूमि सम्मिलित थी, उसके पुत्र द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त कर ली गई थी और नानक की मृत्यु के पश्चात्, संपत्तियां, तारीख 6 सितम्बर, 1985 के नामांतरण द्वारा सूरत राम इत्यादि द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त कर ली गई थीं । इसके पश्चात्, सूरत राम की मृत्यु के पश्चात् सम्पत्ति में उसका हिस्सा, जिसमें वाद भूमि सम्मिलित थी, उसके 8 पुत्रों द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त कर ली गई थीं, जिसमें प्रतिवादी भी सम्मिलित थे । उन्होंने तारीख 18 मार्च, 1992 के उसी नामांतरण सं. 723 द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त की थी । वादी के अनुसार, वह प्रतिवादी सं. 1 का पुत्र और सूरत राम का पौत्र है । उसके अनुसार, वंशावली सारणी और नामांतरण से यह प्रकट होता है कि वाद भूमि वादी के बारे में पैतृक थी और विधि के अनुसार कोई विभाजन नहीं हुआ था और वादी का जन्म द्वारा पैतृक संपत्ति में अधिकार है । वादी के अनुसार, वह वाद भूमि में एक सहदायिक है और कुटुम्ब में अपने जन्म द्वारा विधि के अधीन वाद भूमि में कब्जा रखता है और उसे वाद भूमि से बे-कब्जा नहीं किया जा सकता है । वादी का यह भी पक्षकथन है कि प्रतिवादी सं. 1 के पास फसल इत्यादि से आय के अच्छे स्रोत हैं और वाद भूमि का पैतृक होने के नाते बिना किसी आवश्यकता के अन्तरित या विक्रय नहीं किया जा सकता है, तथापि, प्रतिवादी सं. 1 ने वाद भूमि का अन्तरण करने के किसी अधिकार के बिना तारीख 12 दिसम्बर, 2001 के त्यजन विलेख द्वारा वादी को उसके विधिक अधिकार से वंचित करने के लिए बिना विधिक आवश्यकता के प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में उसका अन्तरण के माध्यम से त्यजन कर दिया । वादी के अनुसार, उक्त त्यजन विलेख गलत, अवैध, अकृत और शून्य है । यही वह आधार थे जिन पर वादी द्वारा इस प्रभाव की घोषणा की डिक्री की प्रार्थना करते हुए वाद फाइल किया गया था कि वाद भूमि वादी की पैतृक और

सहदायिक संपत्ति है और वादी, वाद भूमि का सहदायिक और संयुक्त स्वामी है और इस प्रभाव की डिक्री के लिए प्रार्थना की है कि प्रतिवादी सं. 1 द्वारा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में निष्पादित तारीख 12 दिसम्बर, 2001 का त्यजन विलेख और उप-रजिस्ट्रार, नालागढ़ में रजिस्ट्रीकृत और उक्त त्यजन विलेख के आधार पर तारीख 26 दिसम्बर, 2001 को अनुप्रमाणित पश्चात्वर्ती नामांतरण संख्या 872 बिना किसी विधिक आवश्यकता के होने के नाते गलत, अवैध, अकृत और शून्य है और वादी के अधिकार, हक और हित पर आबद्धकर नहीं है । वादी ने वाद भूमि में हस्तक्षेप करने से, वाद भूमि से वादी को बेदखल करने से या वाद भूमि पर किसी भी प्रकार की क्षति इत्यादि कारित करने से प्रतिवादियों को अवरुद्ध करने के लिए स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश की डिक्री पारित करने के लिए भी प्रार्थना की है । वैकल्पिक रूप में, वादी ने यह प्रार्थना की है कि यदि न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि प्रतिवादी सं. 2 वाद भूमि के किसी हिस्से पर कब्जे में है तो वादी के पक्ष में संयुक्त कब्जे की डिक्री पारित की जाए और यदि प्रतिवादी सं. 2 अनन्य कब्जे में पाया जाता है तो ऐसी दशा में, वादी के पक्ष में कब्जे की डिक्री पारित की जाए । प्रतिवादी सं. 1 और 2 के वाद में फाइल लिखित कथन में यह कथन किया गया था कि वादी हरियाणा राज्य में ग्राम नानकपुर, तहसील कालका में रहता था और उसका वाद भूमि के वास्तविक कब्जे से पूर्णतया कोई संबंध नहीं था और वह प्रतिवादी सं. 2 के साथ था । प्रतिवादियों के अनुसार, वादी कभी भी ग्राम मल्लपुर में निवास नहीं किया था और वाद भूमि प्रतिवादी सं. 2 के कब्जे में थी जो प्रतिवादी सं. 1 का सगा छोटा भाई था । प्रतिवादियों के अनुसार, वादी ने उसे तंग करने के लिए प्रतिवादियों के विरोधी व्यक्तियों की प्रेरणा पर वाद फाइल किया था । प्रतिवादियों के अनुसार, प्रतिवादी सं. 1 की पिछले 40 वर्षों से प्रतिवादी सं. 2 के कुटुम्ब द्वारा देखभाल और सेवा की जाती रही थी, जिन्होंने प्रतिवादी सं. 1 के उपचार पर बड़ी रकम खर्च की थी जब मदन लाल और अन्यों द्वारा उस पर हमला करके उसे गंभीर क्षति पहुंचाई थी । प्रतिवादियों का यह भी पक्षकथन था कि क्योंकि प्रतिवादी सं. 1 कृषि कार्य करने में शारीरिक रूप से असमर्थ था इसलिए, प्रतिवादी सं. 2 और उसके कुटुम्ब सदस्य वाद भूमि में कृषि कार्य से संबंधित सभी कार्य करते थे । प्रतिवादियों के अनुसार, प्रतिवादी सं. 1 ने प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में त्यजन विलेख निष्पादित किया था क्योंकि वादी ने पिछले 40 वर्षों से प्रतिवादी सं. 1 की कभी भी देखभाल नहीं की और प्रतिवादी सं. 1 को

ईश्वर की दया पर छोड़ दिया था और उसका पूर्णतया त्याग करते हुए, ग्राम नानक पुर, तहसील कालका, हरियाणा में निवास करने लगा था । प्रतिवादियों द्वारा लिखित कथन में इससे भी इनकार किया गया था कि वाद संपत्ति, सहज राम, नानक और सूरत राम की संपत्ति थी, जिन्होंने उत्तराधिकार द्वारा ही उसे उत्तराधिकार में प्राप्त किया था । प्रतिवादियों के अनुसार, प्रतिवादी सं. 1 ने उसकी कभी भी देखभाल नहीं की थी, किन्तु उसकी देखभाल प्रतिवादी सं. 2 और उसके कुटुम्ब सदस्यों द्वारा की गई थी । प्रतिवादी सं. 1 ने प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में त्यजन विलेख निष्पादित किया था, जो विधिक और विधिमान्य था और वादी को उसकी वैधता के बारे में प्रश्न करने का कोई अधिकार नहीं था । प्रतिवादियों का यह भी पक्षकथन था कि वाद भूमि, प्रतिवादी सं. 2 के शांतिपूर्ण और निर्बाधित कब्जे में थी जो उसे वर्ष 1982 से जोत रहा था । प्रतिवादियों द्वारा इससे इनकार किया गया था कि वादी एक सहदायिक था और वाद भूमि सहदायिक संपत्ति थी । विद्वान् विचारण न्यायालय ने तारीख 21 अप्रैल, 2006 के अपने निर्णय और डिक्री द्वारा वादी द्वारा फाइल वाद को खारिज कर दिया । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि यह साबित करने का भार कि वाद भूमि वादी की पैतृक संपत्ति थी या नहीं, वादी पर था और उसने अपने नाम में कोई ऐसा विश्वसनीय दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया जिससे कि यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि उक्त संपत्ति उसकी पैतृक संपत्ति थी । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि दस्तावेज प्रदर्श पी. 8 से मात्र यह दर्शित होता है कि इसमें की संपत्ति के स्वत्वधारी जो अन्यों के साथ संयुक्त स्वामी था, की मृत्यु के पश्चात् भूमि, सूरत राम और आशा राम द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त कर ली गई थी, तथापि, यह इंगित करने के लिए अभिलेख पर कोई दस्तावेजी साक्ष्य नहीं था कि नानक ने सेहज राम से वाद संपत्ति उत्तराधिकार में प्राप्त की थी और इसके पश्चात्, यह सूरत राम को प्राप्त हो गई थी जिससे इसे अभिकथित तौर पर वादी के पिता द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त कर लिया गया था और इसके पश्चात्, वादी द्वारा प्राप्त कर लिया गया था । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि अभि. सा. 1 के रूप में वादी का मूल कथन वाद संपत्ति की पैतृक प्रकृति को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त नहीं था । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि प्रतिवादी सीता राम, प्रतिवादी साक्षी 1 के रूप में साक्षी कठघरे में

उपस्थित हुआ था और उसने यह कथन किया था कि वाद संपत्ति अनन्य रूप से प्रतिवादी सं. 1 अर्थात् वादी के पिता द्वारा धारित थी जिसने वाद संपत्ति पर तब तक कब्जा बनाए रखा जब तक कि त्यजन विलेख द्वारा उसके पक्ष में उसका त्यजन नहीं हो गया था । विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया था कि यह साक्षी प्रतिपरीक्षा के अध्यधीन था किन्तु तात्विक मुद्दों पर उसके परिसाक्ष्य का खंडन नहीं किया जा सका था । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि प्रतिवादी साक्षी 2 आत्मा राम ने प्रतिवादी साक्षी 2 के पक्ष में प्रतिवादी साक्षी 1 द्वारा त्यजन विलेख के निष्पादन के बारे में अभिसाक्ष्य दिया था और प्रतिवादी साक्षी 3 प्रीतम, जो वर्ष 2000 में ग्राम पंचायत, मनपुर का प्रधान था, ने भी यह कथन किया था कि प्रतिवादी साक्षी 2 वाद भूमि के निरन्तर कब्जे में था और यह प्रतिवादी साक्षी 1 ही था जो उसे जोतता था । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि अभिलेख पर के जमाबंदियों प्रदर्श पी-2 और प्रदर्श पी-4 के अनुसार, वाद भूमि प्रतिवादी सं. 1 द्वारा धारित था और उसके कब्जे में था और तत्पश्चात् प्रतिवादी सं. 2 वाद भूमि का कब्जे सहित स्वामी हो गया था । यह भी अभिनिर्धारित किया था कि त्यजन विलेख प्रदर्श डी-1 जो अभिलेख पर सम्यक् रूप से साबित हो गया था, जिसे प्रतिवादी सं. 1 द्वारा प्रतिवादी सं. 2 की सेवाओं के बदले में प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में प्रतिवादी सं. 1 द्वारा स्वैच्छिक रूप से निष्पादित किया गया था । इन आधारों पर, विद्वान् विचारण न्यायालय ने वादी के वाद को खारिज कर दिया था । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर, वादी ने अपील फाइल की । विद्वान् अपील न्यायालय ने तारीख 8 मार्च, 2007 के अपने निर्णय और डिक्री द्वारा विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्षों को कायम रखा और वादी द्वारा फाइल अपील को खारिज कर दिया । इससे व्यथित होकर वर्तमान द्वितीय अपील फाइल की गई । न्यायालय द्वारा इस द्वितीय अपील को खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – वाद भूमि का पैतृक होना और उसके ऊपर वादी का सहदायिक अधिकार होने पर विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अविश्वास किया गया है । विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा समवर्ती तौर पर यह अभिनिर्धारित किया गया है कि वादी द्वारा अभिलेख पर कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है, इस तथ्य को सिद्ध करने के लिए कि वाद भूमि, जिसे वादी के पिता द्वारा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में त्यजन किया गया था, वादी

की सहदायिकी और पैतृक संपत्ति थी । विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि दस्तावेज, जिनके आधार पर वादी की ओर से इस बात पर जोर दिया गया था कि वाद भूमि, पैतृक और सहदायिकी संपत्ति थी, के बारे में वादी की ओर से और कोई पक्षकथन नहीं किया गया है क्योंकि उक्त दस्तावेजों में उल्लिखित भूमि की विशिष्टियां वाद भूमि से संबंधित नहीं हैं । विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए उक्त निष्कर्षों को समझने के अनुक्रम में, अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल की यह दलील कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि कोई अन्य साक्ष्य वादी द्वारा प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं थी क्योंकि प्रतिवादी सं. 2 ने प्रतिवादी साक्षी 1 के रूप में यह स्वीकार किया था कि वाद भूमि पैतृक संपत्ति थी । मैं सशंकित हूं कि अपीलार्थी की ओर से दी गई उक्त दलील विधि में कायम रखे जाने योग्य नहीं है । यह अभिलेख का मामला है कि वादी द्वारा ऐसी कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं की गई है जिससे कि यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि वस्तुतः वाद भूमि, उसकी सहदायिकी संपत्ति थी और वस्तुतः उसने उक्त भूमि को वादी के दादा से अपने पिता के माध्यम से उत्तराधिकार द्वारा प्राप्त की थी । प्रतिवादी साक्षी 1 के कथन के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि अपनी प्रतिपरीक्षा में, उसने यह स्वीकार किया है कि वाद संपत्ति पूर्व में सेहज राम द्वारा धारित थी और उसके बाद नानक द्वारा धारित थी और इसके पश्चात् सूरत राम द्वारा धारित थी । तथापि, इसे न तो उक्त साक्षी द्वारा कथन किया गया न ही उसने अपनी प्रतिपरीक्षा में कथन किया कि संपत्ति, नैसर्गिक उत्तराधिकार के माध्यम से नानक और सूरत राम द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त की गई थी । इसलिए, यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है कि उक्त संपत्ति को उनके द्वारा नैसर्गिक उत्तराधिकार के माध्यम से विकसित की गई थी । इसके अतिरिक्त, न्यायालय के सुविचारित मत में, प्रतिवादी साक्षी 1 के परिसाक्ष्य को सुसंगत तौर पर, इस आधार के साथ परिशीलन किया जाना चाहिए जिसे प्रतिवादी द्वारा लिखित कथन में लिया गया था साथ ही उक्त साक्षी के मुख्य परीक्षा में लिया गया था, जो शपथपत्र के माध्यम से था, जिसमें वादी द्वारा किए गए पक्षकथन स्पष्टतः विवादित थे और इनकार किए गए थे । वादी के पिता अर्थात् जान्दू राम जो साक्षी कठघरे में उपस्थित नहीं हुआ था, के कथन भी सहायक नहीं हो सकते हैं, साधारणतया इस कारण से कि मामले में दो प्रतिवादी थे और वाद में चुनौती के अधीन विवादित त्यजन विलेख प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में

था, जिसने इस तथ्य का प्रतिवादी सं. 1 के रूप में निवेदन किया है । इसलिए, अपीलार्थी की इस प्रभाव की दलील कि प्रतिवादियों द्वारा बेहतर साक्ष्य रोक लिए गए थे और उनके विरुद्ध प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए था, भी बिना किसी गुणागुण के हैं । तर्कों के दौरान, अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने इस न्यायालय का ध्यान अभिलेख पर के ऐसे किसी दस्तावेज की ओर नहीं दिलाया है जिससे कि यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि वाद संपत्ति वस्तुतः वादी की पैतृक और सहदायिकी संपत्ति थी और इसे उसके पिता द्वारा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में त्यजन नहीं किया जा सकता था । जहां तक प्रतिवादी सं. 1 द्वारा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में त्यजन विलेख के निष्पादन का संबंध है, यह अभिलेख का मामला है । वादी ने ऐसा कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है जिससे यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि उक्त त्यजन विलेख को स्वैच्छिक तौर पर प्रतिवादी सं. 1 द्वारा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में, प्रतिवादी सं. 2 द्वारा प्रतिवादी सं. 1 और उसके कुटुम्ब को दी गई सेवाओं के बदले में निष्पादित नहीं किया गया था । दूसरी ओर, प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि प्रतिवादी सं. 1 द्वारा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में त्यजन विलेख निष्पादित किया गया था क्योंकि जब प्रतिवादी सं. 1 अपने स्वास्थ्य के कारण स्वयं अपनी या अपनी संपत्ति की देखभाल करने की स्थिति में नहीं था तो प्रतिवादी सं. 2 और उसका कुटुम्ब ही था जिन्होंने उसकी और उसकी भूमि की देखभाल की थी और त्यजन विलेख का निष्पादन होने के पश्चात् संपत्ति प्रतिवादी सं. 2 के कब्जे में आ गई थी जो उसे जोत रहा था । अपीलार्थी का इस प्रभाव की दलील कि विद्वान् दोनों निचले न्यायालय यह मूल्यांकन करने में असफल रहे हैं कि लिखित कथन में इस तथ्य से विनिर्दिष्टतः कोई इनकार नहीं किया गया था कि वाद भूमि वादी की पैतृक और सहदायिकी संपत्ति थी, भी बिना किसी गुणागुण के है । लिखित कथन में किए गए प्रकथनों से यह सुस्पष्ट और प्रकट होता है कि प्रारम्भिक आक्षेपों के पैराग्राफ 2 में यह उल्लिखित है कि वाद भूमि पैतृक या संयुक्त हिन्दू कुटुम्ब संपत्ति नहीं है और इसके पश्चात् लिखित कथन में पैरा 3 में गुणागुणों पर इस बात से इनकार किया गया है कि विवादित संपत्ति उत्तराधिकार के माध्यम से उत्तराधिकार में प्राप्त की गई थी । सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 8 का नियम 5 में यह उपबंध है कि यदि वादपत्र में के तथ्य संबंधी हर अभिकथन का विनिर्दिष्टतः यह आवश्यक विवक्षा से प्रत्याख्यान नहीं किया जाता है या प्रतिवादी के अभिवचन में यह

कथन कि वह स्वीकार नहीं किया जाता तो जहां तक निर्योग्यताधीन व्यक्ति को छोड़कर किसी अन्य व्यक्ति का संबंध है वह स्वीकार कर लिया गया माना जाएगा । यह सुस्थिर विधिक प्रतिपादना है कि यदि वादपत्र में किए गए अभिकथन से लिखित कथन में विनिर्दिष्टतः इनकार नहीं किया गया है तो इसे स्वीकृत समझा जाएगा । न्यायालय के सुविचारित मत में, वर्तमान मामले में यह नहीं कहा जा सकता है कि वादपत्र में किए गए अभिकथनों से लिखित कथन में विनिर्दिष्टतः इनकार नहीं किया गया है । वादी की यह दलील कि वाद भूमि पैतृक है, से लिखित कथन में इनकार किया गया है । वादी की यह दलील कि वह वाद भूमि के कब्जे में है, से लिखित कथन में इनकार किया गया है । वादी की यह दलील कि त्यजन विलेख विधि की दृष्टि में विधिमान्य नहीं है, से लिखित कथन में इनकार किया गया है । इसलिए, यह ऐसा मामला नहीं है जहां वादपत्र में किए गए अभिकथनों से लिखित कथन में विनिर्दिष्टतः इनकार नहीं किया गया है । (पैरा 14, 15 और 16)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2016]	(2016) 1 एस. सी. सी. 207 : **स्टैण्डर्ड चार्टर्ड बैंक** बनाम **आंध्रा बैंक फाइनेंशियल सर्विसेज लिमिटेड और अन्य** ;	15
[2015]	(2015) 1 एस. सी. सी. 391 : **विनोद कुमार** बनाम **गंगाधर** ;	17, 18
[2009]	(2009) 4 एस. सी. सी. 791 : **निकोलस वी. मेनेजेस** बनाम **जोसफ एम. मेनेजेस और अन्य** ;	17, 19
[1999]	(1999) 8 एस. सी. सी. 396 : **बलराज तनेजा** बनाम **सुनील मदन** ।	15

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2007 की नियमित द्वितीय अपील सं. 242.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री जी. डी. वर्मा, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ बी. सी. वर्मा, अधिवक्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री दिनेश भनोट, अधिवक्ता

न्यायमूर्ति अजय मोहन गोयल – यह अपील, अपीलार्थी/वादी ने विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, सोलन, कैम्प नालागढ़ द्वारा 2006 की सिविल अपील सं. 15-एन. एल./13 में पारित तारीख 8 मार्च, 2007 के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध फाइल की है, जिसके द्वारा विद्वान् अपील न्यायालय ने वर्तमान अपीलार्थी द्वारा फाइल अपील को खारिज करते हुए, विद्वान् सिविल न्यायाधीश (ज्येष्ठ खंड), नालागढ़, जिला सोलन द्वारा 2002 की सिविल वाद सं. 99/1 में पारित निर्णय और डिक्री को कायम रखा था, जिसमें वर्तमान अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थियों/प्रतिवादियों के विरुद्ध फाइल घोषणा और स्थायी प्रतिषेधात्मक वाद को खारिज कर दिया गया था ।

2. यह अपील, तारीख 16 जून, 2007 को निम्नलिखित विधि के सारवान् प्रश्नों पर स्वीकार की गई थी :–

> "1. क्या दोनों निचले न्यायालयों द्वारा यथाअभिलिखित निष्कर्ष अन्य बातों के साथ इस कारण से विधि के उपबंधों के प्रतिकूल हैं कि अपीलार्थी ने अभिलेख पर यह सिद्ध कर दिया है कि वाद संपत्ति, पैतृक और सहदायिकी है और इसलिए, कुटुम्ब में उसका जन्म होने के नाते उसने स्वामित्व अर्जित कर लिया है और उसे मात्र प्रतिवादी सं. 1 द्वारा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में, त्यजन के अन्तरण के आधार पर उससे निर्निहित नहीं किया जा सकता है ?
>
> 2. क्या विधिक आवश्यकता के अभाव में, प्रतिवादी सं. 1 द्वारा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में त्यजन के माध्यम से वाद संपत्ति का अन्यसंक्रामण अवैध, अप्राधिकृत और शून्य है और इसलिए, वादी यथा दावाकृत अनुतोष पाने का हकदार है ?"

3. वर्तमान मामले का अधिनिर्णय करने के लिए, संक्षेप में आवश्यक तथ्य यह हैं कि अपीलार्थी/वादी (जिसे इसमें इसके पश्चात् "वादी" कहा गया है) ने मूल रूप से क्रमशः अपने पिता और चाचा अर्थात् जान्दू राम और सीता राम के विरुद्ध घोषणा और स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश के लिए एक वाद फाइल किया था, यह उल्लेख करते हुए कि वर्ष 1997-98 के लिए जमाबंदी के अनुसार, ग्राम मौजा मल्लपुर, परगना धरमपुर, तहसील नालागढ़, जिला सोलन में स्थित वाद भूमि वादी और प्रतिवादी सं. 1 की संयुक्त और पैतृक भूमि थी । वादी के अनुसार, वादी और प्रतिवादियों की वंशावली सारणी निम्नलिखित थी :–

सेहज राम
|
नानक
|
सूरत राम
|

जान्दू राम	शिव राम	सीता राम	हसन चन्द	लज्जा राम	हकम सिंह	आज्ञा राम	जगदीश चन्द

4. वादी के अनुसार, सेहज राम की मृत्यु के पश्चात् उसकी संपत्ति जिसमें वादी भूमि सम्मिलित थी, उसके पुत्र द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त कर ली गई थी और नानक की मृत्यु के पश्चात्, संपत्तियां, तारीख 6 सितम्बर, 1985 के नामांतरण द्वारा सूरत राम इत्यादि द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त कर ली गई थी । इसके पश्चात्, सूरत राम की मृत्यु के पश्चात् सम्पत्ति में उसका हिस्सा, जिसमें वाद भूमि सम्मिलित थी, उसके 8 पुत्रों द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त कर ली गई थी, जिसमें प्रतिवादी भी सम्मिलित थे । उन्होंने तारीख 18 मार्च, 1992 के उसी नामांतरण सं. 723 द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त की थी । वादी के अनुसार, वह प्रतिवादी सं. 1 का पुत्र और सूरत राम का पौत्र है । उसके अनुसार, वंशावली सारणी और नामांतरण से यह प्रकट होता है कि वाद भूमि वादी के बारे में पैतृक थी और विधि के अनुसार कोई विभाजन नहीं हुआ था और वादी का जन्म द्वारा पैतृक संपत्ति में अधिकार है । वादी के अनुसार, वह वाद भूमि में एक सहदायिक है और कुटुम्ब में अपने जन्म द्वारा विधि के अधीन वाद भूमि में कब्जा रखता है और उसे वाद भूमि से बे-कब्जा नहीं किया जा सकता है । वादी का यह भी पक्षकथन है कि प्रतिवादी सं. 1 के पास फसल इत्यादि से आय के अच्छे स्रोत्र हैं और वाद भूमि का पैतृक होने के नाते बिना किसी आवश्यकता के अन्तरित या विक्रय नहीं किया जा सकता है, तथापि, प्रतिवादी सं. 1 ने वाद भूमि का अन्तरण करने के किसी अधिकार के बिना तारीख 12 दिसम्बर, 2001 के त्यजन विलेख द्वारा वादी को उसके विधिक अधिकार से वंचित करने के लिए बिना विधिक आवश्यकता के प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में उसका अन्तरण के माध्यम से त्यजन कर दिया । वादी के अनुसार, उक्त त्यजन विलेख गलत, अवैध, अकृत और शून्य है ।

5. यही वह आधार थे जिन पर वादी द्वारा इस प्रभाव की घोषणा की डिक्री की प्रार्थना करते हुए वाद फाइल किया गया था कि वाद भूमि वादी की पैतृक और सहदायिक संपत्ति है और वादी, वाद भूमि का सहदायिक और संयुक्त स्वामी है और इस प्रभाव की डिक्री के लिए प्रार्थना की है कि प्रतिवादी सं. 1 द्वारा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में निष्पादित तारीख 12 दिसम्बर, 2001 का त्यजन विलेख और उप-रजिस्ट्रार, नालागढ़ में रजिस्ट्रीकृत और उक्त त्यजन विलेख के आधार पर तारीख 26 दिसम्बर, 2001 को अनुप्रमाणित पश्चात्वर्ती नामांतरण संख्या 872 बिना किसी विधिक आवश्यकता के होने के नाते गलत, अवैध, अकृत और शून्य है और वादी के अधिकार, हक और हित पर आबद्धकर नहीं है । वादी ने वाद भूमि में हस्तक्षेप करने से, वाद भूमि से वादी को बेदखल करने से या वाद भूमि पर किसी भी प्रकार की क्षति इत्यादि कारित करने से प्रतिवादियों को अवरुद्ध करने के लिए स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश की डिक्री पारित करने के लिए भी प्रार्थना की है । वैकल्पिक रूप में, वादी ने यह प्रार्थना की है कि यदि न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि प्रतिवादी सं. 2 वाद भूमि के किसी हिस्से पर कब्जे में है तो वादी के पक्ष में संयुक्त कब्जे की डिक्री पारित किया जाए और यदि प्रतिवादी सं. 2 अनन्य कब्जे में पाया जाता है तो ऐसी दशा में, वादी के पक्ष में कब्जे की डिक्री पारित किया जाए ।

6. प्रतिवादी सं. 1 और 2 के वाद में फाइल लिखित कथन में यह कथन किया गया था कि वादी हरियाणा राज्य में ग्राम नानकपुर, तहसील कालका में रहता था और उसका वाद भूमि के वास्तविक कब्जे से पूर्णतया कोई संबंध नहीं था और वह प्रतिवादी सं. 2 के साथ था । प्रतिवादियों के अनुसार, वादी ने कभी भी ग्राम मल्लपुर में निवास नहीं किया था और वाद भूमि प्रतिवादी सं. 2 के कब्जे में थी जो प्रतिवादी सं. 1 का सगा छोटा भाई था । प्रतिवादियों के अनुसार, वादी ने उसे तंग करने के लिए प्रतिवादियों के विरोधी व्यक्तियों की प्रेरणा पर वाद फाइल किया था । प्रतिवादियों के अनुसार, प्रतिवादी सं. 1 की पिछले 40 वर्षों से प्रतिवादी सं. 2 के कुटुम्ब द्वारा देखभाल और सेवा की जाती रही थी, जिन्होंने प्रतिवादी सं. 1 के उपचार पर बड़ी रकम खर्च की थी जब मदन लाल और अन्यों द्वारा उस पर हमला करके उसे गंभीर क्षति पहुंचाई थीं । प्रतिवादियों का यह भी पक्षकथन था कि क्योंकि प्रतिवादी सं. 1 कृषि कार्य करने में शारीरिक रूप से असमर्थ था इसलिए, प्रतिवादी सं. 2 और उसके कुटुम्ब सदस्य वाद भूमि में कृषि कार्य से संबंधित सभी कार्य करते थे । प्रतिवादियों के

अनुसार, प्रतिवादी सं. 1 ने प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में त्यजन विलेख निष्पादित किया था क्योंकि वादी ने पिछले 40 वर्षों से प्रतिवादी सं. 1 की कभी भी देखभाल नहीं की और प्रतिवादी सं. 1 को ईश्वर की दया पर छोड़ दिया था और उसका पूर्णतया त्याग करते हुए, ग्राम नानक पुर, तहसील कालका, हरियाणा में निवास करने लगा था । प्रतिवादियों द्वारा लिखित कथन में इससे भी इनकार किया गया था कि वाद संपत्ति, सहज राम, नानक और सूरत राम की संपत्ति थी, जिन्होंने उत्तराधिकार द्वारा ही उसे उत्तराधिकार में प्राप्त किया था । प्रतिवादियों के अनुसार, प्रतिवादी सं. 1 ने उसकी कभी भी देखभाल नहीं की थी, किन्तु उसकी देखभाल प्रतिवादी सं. 2 और उसके कुटुम्ब सदस्यों द्वारा की गई थी । प्रतिवादी सं. 1 ने प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में त्यजन विलेख निष्पादित किया था, जो विधिक और विधिमान्य था और वादी को उसकी वैधता के बारे में प्रश्न करने का कोई अधिकार नहीं था । प्रतिवादियों का यह भी पक्षकथन था कि वाद भूमि, प्रतिवादी सं. 2 के शांतिपूर्ण और निर्बाधित कब्जे में थी जो उसे वर्ष 1982 से जोत रहा था । प्रतिवादियों द्वारा इससे इनकार किया गया था कि वादी एक सहदायिक था और वाद भूमि सहदायिक संपत्ति थी ।

7. विद्वान् विचारण न्यायालय ने पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए थे :–

(1) क्या वाद संपत्ति, वादी की पैतृक संपत्ति है ?

(2) क्या वादी एक हिस्सेदार है, जैसा कि वादपत्र के पैरा 1 में अभिकथित है ?

(3) क्या प्रतिवादी सं. 1 द्वारा तारीख 12 दिसम्बर, 2001 को प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में निष्पादित त्यजन विलेख सक्षमता के अभाव में दूषित है ?

(4) क्या विधिक आवश्यकता के सिवाय प्रथागत निषेधात्मक अन्यसंक्रामण मौजूद है ?

(5) क्या वादी का वाद कायम रखे जाने योग्य नहीं है ?

(6) क्या वादी न्यायालय में स्वच्छ हाथों से नहीं आया है ?

(7) अनुतोष ।

8. क्रमशः पक्षकारों द्वारा अपने दावों के समर्थन में क्रमशः प्रस्तुत साक्ष्यों के आधार पर विद्वान् विचारण न्यायालय ने यथाविरचित विवाद्यकों पर निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले थे :–

"विवाद्यक सं. 1 – नहीं

विवाद्यक सं. 2 – नहीं

विवाद्यक सं. 3 – नहीं

विवाद्यक सं. 4 – नहीं

विवाद्यक सं. 5 – नहीं

विवाद्यक सं. 6 – नहीं

अनुतोष – निर्णय के प्रवर्तित भाग के अनुसार, वादी का वाद खारिज होने योग्य है ।"

9. तद्नुसार, विद्वान् विचारण न्यायालय ने तारीख 21 अप्रैल, 2006 के अपने निर्णय और डिक्री द्वारा वादी द्वारा फाइल वाद को खारिज कर दिया । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि यह साबित करने का भार कि वाद भूमि वादी की पैतृक संपत्ति थी या नहीं, वादी पर था और उसने अपने नाम में कोई ऐसा विश्वसनीय दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया जिससे कि यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि उक्त संपत्ति उसकी पैतृक संपत्ति थी । विद्वान् विचारण न्यायालय में यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि दस्तावेज प्रदर्श पी-8 से मात्र यह दर्शित होता है कि इसमें की संपत्ति के स्वत्वधारी जो अन्यों के साथ संयुक्त स्वामी था, की मृत्यु के पश्चात् भूमि, सूरत राम और आशा राम द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त कर ली गई थी, तथापि, यह इंगित करने के लिए अभिलेख पर कोई दस्तावेजी साक्ष्य नहीं था कि नानक ने सेहज राम से वाद संपत्ति उत्तराधिकार में प्राप्त की थी और इसके पश्चात्, यह सूरत राम को प्राप्त हो गई थी जिससे इसे अभिकथित तौर पर वादी के पिता द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त कर लिया गया था और इसके पश्चात्, वादी द्वारा प्राप्त कर लिया गया था । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि अभि. सा. 1 के रूप में वादी का मूल कथन वाद संपत्ति की पैतृक प्रकृति को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त नहीं था । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि प्रतिवादी सीता राम, प्रतिवादी साक्षी 1 के रूप में साक्षी कठघरे में

उपस्थित हुआ था और उसने यह कथन किया था कि वाद संपत्ति अनन्य रूप से प्रतिवादी सं. 1 अर्थात् वादी के पिता द्वारा धारित थी जिसने वाद संपत्ति पर तब तक कब्जा बनाए रखा जब तक कि त्यजन विलेख द्वारा उसके पक्ष में उसका त्यजन नहीं हो गया था । विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया था कि यह साक्षी प्रतिपरीक्षा के अध्यधीन था किन्तु तात्विक मुद्दों पर उसके परिसाक्ष्य का खंडन नहीं किया जा सका था । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि प्रतिवादी साक्षी 2 आत्मा राम ने प्रतिवादी साक्षी 2 के पक्ष में प्रतिवादी साक्षी 1 द्वारा त्यजन विलेख के निष्पादन के बारे में अभिसाक्ष्य दिया था और प्रतिवादी साक्षी 3 प्रीतम, जो वर्ष 2000 में ग्राम पंचायत, मनपुर का प्रधान था, ने भी यह कथन किया था कि प्रतिवादी साक्षी 2 वाद भूमि के निरन्तर कब्जे में था और यह प्रतिवादी साक्षी 1 ही था जो उसे जोतता था । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि अभिलेख पर के जमाबंदियों प्रदर्श पी-2 और प्रदर्श पी-4 के अनुसार, वाद भूमि प्रतिवादी सं. 1 द्वारा धारित था और उसके कब्जे में था और तत्पश्चात् प्रतिवादी सं. 2 वाद भूमि का कब्जे सहित स्वामी हो गया था । यह भी अभिनिर्धारित किया था कि त्यजन विलेख प्रदर्श डी-1 जो अभिलेख पर सम्यक् रूप से साबित हो गया था, जिसे प्रतिवादी सं. 1 द्वारा प्रतिवादी सं. 2 की सेवाओं के बदले में प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में प्रतिवादी सं. 1 द्वारा स्वैच्छिक रूप से निष्पादित किया गया था । इन आधारों पर, विद्वान् विचारण न्यायालय ने वादी के वाद को खारिज कर दिया था ।

10. विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर, वादी ने अपील फाइल की । विद्वान् अपील न्यायालय ने तारीख 8 मार्च, 2007 के अपने निर्णय और डिक्री द्वारा विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्षों को कायम रखा और वादी द्वारा फाइल अपील को खारिज कर दिया । विद्वान् अपील न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि अभिलेख पर कोई भी ऐसा साक्ष्य नहीं था जिससे यह अर्थ निकाला जा सके कि वाद संपत्ति वादी के पिता की पैतृक संपत्ति थी और वाद संपत्ति उसके पिता की सहदायिकी संपत्ति थी । विद्वान् अपील न्यायालय द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि वादी ने अभिलेख पर बंदोबस्त दोयम् प्रदर्श पी-4 की प्रति अभिलेख पर प्रस्तुत की, यह सिद्ध करने के लिए कि उस समय वाद भूमि सूरत राम के पिता नायक द्वारा धारित थी जिससे भूमि जान्दू राम द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त की गई थी,

तथापि, प्रदर्श पी-4 के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि इसमें उल्लिखित भूमि, वाद भूमि से भिन्न भूमि थी । विद्वान् अपील न्यायालय द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि यद्यपि वर्ष 1992-93 के लिए जमाबंदी की प्रति प्रदर्श पी-5, जिसमें जांडू राम अन्यों के साथ वाद भूमि में सह-हिस्सेदार के रूप में अभिलिखित किया गया था, जिसे किसी भी तरीके से साबित नहीं किया गया है कि वाद भूमि उसकी पैतृक या सहदायिकी भूमि थी । वस्तुतः, विद्वान् अपील न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि इसमें के अपीलार्थी ने नामांतरण प्रदर्श पी-7 का अवलंब लिया था जिसके द्वारा वाद भूमि, उनके पिता से उनकी मृत्यु के पश्चात् अपने भाइयों, जिसमें प्रतिवादी सं. 2 सम्मिलित है, के साथ प्रतिवादी सं. 1 द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त किया जाना अभिकथित है । उक्त दस्तावेज के आधार पर, अपीलार्थी की ओर से प्रथम अपील न्यायालय के समक्ष यह दलील दी गई थी कि उक्त दस्तावेज से यह साबित होता है कि वाद भूमि को प्रतिवादी सं. 1 द्वारा अपने भाइयों के साथ उनके पिता की मृत्यु के पश्चात् उत्तराधिकार में प्राप्त की गई थी । निष्कर्ष, जिसे विद्वान् अपील न्यायालय द्वारा मामले के इस पहलू पर निकाले गए थे कि नामांतरण की प्रति प्रदर्श पी-7 से यह दर्शित होता है कि इसमें उल्लिखित भूमि का वर्णन वाद भूमि के वर्णन से किसी भी प्रकार से मेल नहीं खाता है । विद्वान् अपीली न्यायायल द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि यद्यपि यह उपधारणा की गई थी कि संपत्ति, नामांतरण प्रदर्श पी-7 द्वारा जांडू राम को प्राप्त हुई थी तब भी यह नहीं कहा जा सकता है कि संपत्ति, पैतृक संपत्ति थी क्योंकि प्रदर्श पी-7 की अन्तर्वस्तुओं से यह प्रकट होता है कि वाद भूमि उत्तराधिकार के आधार पर जांडू राम और उसके भाइयों द्वारा विकसित नहीं की गई थी किन्तु सूरत राम ने जांडू राम और उसके भाइयों के पक्ष में एक विल निष्पादित की थी और इस प्रकार, विल के आधार पर जांडू राम, प्रतिवादी सं. 1 और उसके भाइयों के पक्ष में नामांतरण अनुप्रमाणित हुआ था । विद्वान् अपील न्यायालय द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि यद्यपि वादी का अभिवाक् यह था कि वह वाद भूमि के कब्जे में था और तद्नुसार, उसने यह प्रार्थना की थी कि प्रतिवादियों को वाद भूमि में हस्तक्षेप करने या उसे बेदखल करने से अवरुद्ध किया जाए, तथापि, वादी द्वारा इसे सिद्ध करने के लिए अभिलेख पर ऐसा कुछ भी प्रस्तुत नहीं किया गया सिवाय उसके स्वयं के इस कथन के कि वह वस्तुतः वाद भूमि के कब्जे में था । ग्राम मलपुर के परिवार रजिस्टर और राशन कार्ड में उसके

नाम की कोई प्रविष्टि नहीं थी और ग्राम नानकपुर में वादी का नाम मतदाता सूची में उल्लिखित था । विद्वान् अपील न्यायालय द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि प्रतिवादियों की ओर से प्रस्तुत मौखिक साक्ष्य से इस तथ्य की संपुष्टि होती है कि वादी ग्राम मनपुर में निवास नहीं करता था और वह वाद भूमि के कब्जे में नहीं था और वस्तुतः प्रतिवादी सं. 2, वाद भूमि के कब्जे में था और वह प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में भूमि का त्यजन होने के पूर्व, प्रतिवादी सं. 1 तथा प्रतिवादी सं. 1 की संपत्ति का देखभाल करता था । तद्नुसार, विद्वान् अपील न्यायालय ने वादी द्वारा फाइल वाद भी खारिज कर दिया था ।

11. अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री जी. डी. वर्मा ने यह तर्क दिया कि विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए इस प्रभाव के निष्कर्ष कि वाद संपत्ति, सहदायिकी और पैतृक संपत्ति नहीं थी, अनुचित है क्योंकि विद्वान् दोनों निचले न्यायालय यह मूल्यांकन करने में असफल रहे हैं कि अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्री, जिसमें इस तथ्य के वर्णन करने के बावजूद कि प्रतिवादी सं. 2 ने शपथपूर्वक न्यायालय में अपने कथन में यह स्वीकार किया था कि वाद संपत्ति पैतृक संपत्ति थी । श्री वर्मा के अनुसार, जब एक बार वाद संपत्ति का पैतृक संपत्ति होना प्रतिवादी सं. 2 द्वारा साक्षी के रूप में स्वीकार कर लिया गया था तो इस तथ्य को साबित करने के लिए वादी को और कोई सामग्री प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं रह गई थी । श्री वर्मा द्वारा यह भी तर्क दिया गया कि विद्वान् दोनों निचले न्यायालय यह मूल्यांकन करने में असफल रहे हैं कि प्रतिवादियों ने बेहतर साक्ष्य अर्थात् प्रतिवादी सं. 1, जो कभी भी साक्षी कठघरे में उपस्थित नहीं हुआ, के साक्ष्य को रोक लिया था । श्री वर्मा के अनुसार, इस संबंध में प्रतिकूल निष्कर्ष प्रतिवादियों के विरुद्ध निकाला जाना चाहिए था और मामले के इस पहलू की भी विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अवहेलना की गई है । श्री वर्मा ने यह भी तर्क दिया कि विद्वान् निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए इस प्रभाव का निष्कर्ष कि वाद संपत्ति पैतृक संपत्ति नहीं थी, अभिलेख पर की सामग्रियों से उद्भूत नहीं होता है और तद्नुसार, उन्होंने यह तर्क दिया है कि विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा पारित निर्णय और डिक्रियां, तथ्य या विधि की दृष्टि में कायम रखे जाने योग्य नहीं हैं ।

12. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल श्री दिनेश भनोट ने यह निवेदन किया कि क्या वाद भूमि पैतृक थी या नहीं, विद्वान् दोनों निचले

न्यायालयों द्वारा वादी के विरुद्ध और प्रतिवादियों के पक्ष में विनिश्चित हो चुका है । उन्होंने यह भी निवेदन किया कि विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा समवर्ती तौर पर यह भी अभिनिर्धारित किया जा चुका है कि प्रतिवादी सं. 1 द्वारा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में निष्पादित त्यजन विलेख, विधिक और विधिमान्य दस्तावेज है । तद्नुसार, उन्होंने यह निवेदन किया कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि वादी ने यह सिद्ध करने के लिए अभिलेख पर कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं की थी कि वाद भूमि या तो पैतृक थी अथवा प्रतिवादी सं. 1 द्वारा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में निष्पादित त्यजन विलेख विधिमान्य त्यजन विलेख नहीं था, इसलिए, विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा प्रतिवादियों के पक्ष में निकाले गए समवर्ती निष्कर्षों में इस अपील में हस्तक्षेप करने की कोई आवश्यकता नहीं है । इस प्रकार, उन्होंने यह निवेदन किया कि वर्तमान अपील में कोई गुणागुण नहीं है और यह खर्चों सहित खारिज होने योग्य है ।

13. मैंने, पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना और मामले के अभिलेखों के साथ ही विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा पारित निर्णयों का भी परिशीलन किया ।

14. वाद भूमि का पैतृक होना और उसके ऊपर वादी का सहदायिक अधिकार होने पर विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अविश्वास किया गया है । विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा समवर्ती तौर पर यह अभिनिर्धारित किया गया है कि वादी द्वारा अभिलेख पर कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है, इस तथ्य को सिद्ध करने के लिए कि वाद भूमि, जिसे वादी के पिता द्वारा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में त्यजन किया गया था, वादी की सहदायिकी और पैतृक संपत्ति थी । विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि दस्तावेज, जिनके आधार पर वादी की ओर से इस बात पर जोर दिया गया था कि वाद भूमि, पैतृक और सहदायिकी संपत्ति थी, के बारे में वादी की ओर से और कोई पक्षकथन नहीं किया गया है क्योंकि उक्त दस्तावेजों में उल्लिखित भूमि की विशिष्टियां वाद भूमि से संबंधित नहीं हैं । विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए उक्त निष्कर्षों को समझने के अनुक्रम में, अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल की यह दलील कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि कोई अन्य साक्ष्य वादी द्वारा प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं थी क्योंकि प्रतिवादी सं. 2 ने प्रतिवादी साक्षी 1 के रूप में यह स्वीकार किया

था कि वाद भूमि पैतृक संपत्ति थी । मैं सशंकित हूं कि अपीलार्थी की ओर से दी गई उक्त दलील विधि में कायम रखे जाने योग्य नहीं है । यह अभिलेख का मामला है कि वादी द्वारा ऐसी कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं की गई है जिससे कि यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि वस्तुतः वाद भूमि, उसकी सहदायिकी संपत्ति थी और वस्तुतः उसने उक्त भूमि को वादी के दादा से अपने पिता के माध्यम से उत्तराधिकार द्वारा प्राप्त की थी । प्रतिवादी साक्षी 1 के कथन के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि अपनी प्रतिपरीक्षा में, उसने यह स्वीकार किया है कि वाद संपत्ति पूर्व में सेहज राम द्वारा धारित थी और उसके बाद नानक द्वारा धारित थी और इसके पश्चात् सूरत राम द्वारा धारित थी । तथापि, इसे न तो उक्त साक्षी द्वारा कथन किया गया न ही उसने अपनी प्रतिपरीक्षा में कथन किया कि संपत्ति, नैसर्गिक उत्तराधिकार के माध्यम से नानक और सूरत राम द्वारा उत्तराधिकार में प्राप्त की गई थी । इसलिए, यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है कि उक्त संपत्ति को उनके द्वारा नैसर्गिक उत्तराधिकार के माध्यम से विकसित की गई थी । इसके अतिरिक्त, मेरे सुविचारित मत में, प्रतिवादी साक्षी 1 के परिसाक्ष्य को सुसंगत तौर पर, इस आधार के साथ परिशीलन किया जाना चाहिए जिसे प्रतिवादी द्वारा लिखित कथन में लिया गया था साथ ही उक्त साक्षी के मुख्य परीक्षा में लिया गया था, जो शपथपत्र के माध्यम से था, जिसमें वादी द्वारा किए गए पक्षकथन स्पष्टतः विवादित थे और इनकार किए गए थे । वादी के पिता अर्थात् जांडू राम जो साक्षी कठघरे में उपस्थित नहीं हुआ था, के कथन भी सहायक नहीं हो सकते हैं, साधारणतया इस कारण से कि मामले में दो प्रतिवादी थे और वाद में चुनौती के अधीन विवादित त्यजन विलेख प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में था, जिसने इस तथ्य का प्रतिवादी सं. 1 के रूप में निवेदन किया है । इसलिए, अपीलार्थी का इस प्रभाव की दलील कि प्रतिवादियों द्वारा बेहतर साक्ष्य रोक लिए गए थे और उनके विरुद्ध प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए था, भी बिना किसी गुणागुण के हैं । तर्कों के दौरान, अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने इस न्यायालय का ध्यान अभिलेख पर के ऐसे किसी दस्तावेज की ओर नहीं दिलाया है जिससे कि यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि वाद संपत्ति वस्तुतः वादी की पैतृक और सहदायिकी संपत्ति थी और इसे उसके पिता द्वारा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में त्यजन नहीं किया जा सकता था । जहां तक प्रतिवादी सं. 1 द्वारा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में त्यजन विलेख के निष्पादन का संबंध है, यह अभिलेख का मामला है ।

वादी ने ऐसा कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है जिससे यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि उक्त त्यजन विलेख को स्वैच्छिक तौर पर प्रतिवादी सं. 1 द्वारा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में, प्रतिवादी सं. 2 द्वारा प्रतिवादी सं. 1 और उसके कुटुम्ब को दी गई सेवाओं के बदले में निष्पादित नहीं किया गया था । दूसरी ओर, प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि प्रतिवादी सं. 1 द्वारा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में त्यजन विलेख निष्पादित किया गया था क्योंकि जब प्रतिवादी सं. 1 अपने स्वास्थ्य के कारण स्वयं अपनी या अपनी संपत्ति की देखभाल करने की स्थिति में नहीं था तो प्रतिवादी सं. 2 और उसका कुटुम्ब ही था जिन्होंने उसकी और उसकी भूमि की देखभाल की थी और त्यजन विलेख का निष्पादन होने के पश्चात् संपत्ति प्रतिवादी सं. 2 के कब्जे में आ गई थी जो उसे जोत रहा था । अपीलार्थी का इस प्रभाव की दलील कि विद्वान् दोनों निचले न्यायालय यह मूल्यांकन करने में असफल रहे हैं कि लिखित कथन में इस तथ्य से विनिर्दिष्टतः कोई इनकार नहीं किया गया था कि वाद भूमि वादी की पैतृक और सहदायिकी संपत्ति थी, भी बिना किसी गुणागुण के है । लिखित कथन में किए गए प्रकथनों से यह सुस्पष्ट और प्रकट होता है कि प्रारम्भिक आक्षेपों के पैराग्राफ 2 में यह उल्लिखित है कि वाद भूमि पैतृक या संयुक्त हिन्दू कुटुम्ब संपत्ति नहीं है और इसके पश्चात् लिखित कथन में पैरा 3 में गुणागुणों पर इस बात से इनकार किया गया है कि विवादित संपत्ति उत्तराधिकार के माध्यम से उत्तराधिकार में प्राप्त की गई थी ।

15. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 8 का नियम 5 में यह उपबंध है कि यदि वादपत्र में के तथ्य संबंधी हर अभिकथन का विनिर्दिष्टतः यह आवश्यक विवक्षा से प्रत्याख्यान नहीं किया जाता है या प्रतिवादी के अभिवचन में यह कथन कि वह स्वीकार नहीं किया जाता तो जहां तक निर्योग्यताधीन व्यक्ति को छोड़कर किसी अन्य व्यक्ति का संबंध है वह स्वीकार कर लिया गया माना जाएगा । यह सुस्थिर विधिक प्रतिपादना है कि यदि वादपत्र में किए गए अभिकथन से लिखित कथन में विनिर्दिष्टतः इनकार नहीं किया गया है तो इसे स्वीकृत समझा जाएगा । इसे माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **बलराज तनेजा** बनाम **सुनील मदन**[1] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया था और इस विधिक प्रतिपादना को माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **स्टैण्डर्ड चार्टर्ड बैंक** बनाम **आंध्रा बैंक फाइनेंशियल**

[1] (1999) 8 एस. सी. सी. 396.

सर्विसेज लिमिटेड और अन्य[1] वाले मामले में पुनः दोहराया गया ।

16. मेरे सुविचारित मत में, वर्तमान मामले में यह नहीं कहा जा सकता है कि वादपत्र में किए गए अभिकथनों से लिखित कथन में विनिर्दिष्टतः इनकार नहीं किया गया है । वादी की यह दलील कि वाद भूमि पैतृक है, से लिखित कथन में इनकार किया गया है । वादी की यह दलील कि वह वाद भूमि के कब्जे में है, से लिखित कथन में इनकार किया गया है । वादी की यह दलील कि त्यजन विलेख विधि की दृष्टि में विधिमान्य नहीं है, से लिखित कथन में इनकार किया गया है । इसलिए, यह ऐसा मामला नहीं है जहां वादपत्र में किए गए अभिकथनों से लिखित कथन में विनिर्दिष्टतः इनकार नहीं किया गया है ।

17. अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने तर्कों के दौरान अपने पक्षकथन के समर्थन में निम्नलिखित निर्णयों का अवलंब लिया है :–

(1) **विनोद कुमार** बनाम **गंगाधर**[2] ;

(2) **निकोलस वी. मेनेजेस** बनाम **जोसफ एम. मेनेजेस और अन्य**[3] ।

18. **विनोद कुमार** बनाम **गंगाधर** (उपर्युक्त) वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि प्रथम अपील न्यायालय के रूप में कार्य करते हुए, उच्च न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह अपना निष्कर्ष अभिलिखित करने के पूर्व सभी विवाद्यकों और पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य पर विचार करें ।

19. **निकोलस वी. मेनेजेस** बनाम **जोसफ एम. मेनेजेस और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा यह पुनः दोहराया गया है कि प्रथम अपील का विनिश्चय करते समय उच्च न्यायालय को अभिलेख पर के साक्ष्य मौखिक और दस्तावेजी पर अवश्य ही विचार करना चाहिए और इसके समक्ष उद्भूत विधि के प्रश्नों पर भी विचार करना चाहिए और उसी समय उच्च न्यायालय का यह कर्तव्य होता है कि वह विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए कारणों पर विचार करे जिसके विरुद्ध प्रथम अपील फाइल की गई है और इसके पश्चात् विधि के अनुसरण में सकारण और युक्तियुक्त आदेश पारित करने के पश्चात्

---

[1] (2016) 1 एस. सी. सी. 207.
[2] (2015) 1 एस. सी. सी. 391.
[3] (2009) 4 एस. सी. सी. 791.

उसका निपटारा करे ।

20. मेरे सुविचारित मत में, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा उपर्युक्त उल्लिखित निर्णयों में घोषित विधि, वर्तमान अपील के तथ्यों और निर्णयों में लागू नहीं होती है ।

21. इसलिए, उपर्युक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, यह नहीं कहा जा सकता है कि विद्वान् दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष विधि की प्रतिपादनाओं के प्रतिकूल हैं अथवा अपीलार्थी ने वस्तुतः अभिलेख पर यह सिद्ध कर दिया है कि वाद भूमि पैतृक और सहदायिकी संपत्ति थी और यह त्यजन विलेख के माध्यम से उसके पिता में निर्निहित नहीं हो सकती है । इसी प्रकार, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि वादी यह दर्शित करने में समर्थ नहीं रहा है कि वाद भूमि, सहदायिकी और पैतृक संपत्ति थी, इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि प्रतिवादी सं. 1 द्वारा प्रतिवादी सं. 2 के पक्ष में विधिमान्य रजिस्ट्रीकृत त्यजन विलेख के द्वारा उक्त संपत्ति का अन्यसंक्रामण विधि में कायम रखे जाने योग्य नहीं था । तद्नुसार, विधि के सारवान् प्रश्नों का विनिश्चय किया जाता है ।

22. उपर्युक्त निकाले गए निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए, वर्तमान अपील में कोई गुणागुण नहीं है और इसे खर्चों सहित खारिज किया जाता है ।

द्वितीय अपील खारिज की गई ।

क.

संसद् के अधिनियम

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005

(2005 का अधिनियम संख्यांक 22)

[15 जून, 2005]

प्रत्येक लोक प्राधिकारी के कार्यकरण में पारदर्शिता और उत्तरदायित्व के संवर्धन के लिए, लोक प्राधिकारियों के नियंत्रणाधीन सूचना तक पहुंच सुनिश्चित करने के लिए नागरिकों के सूचना के अधिकार की व्यावहारिक शासन पद्धति स्थापित करने, एक केन्द्रीय सूचना आयोग तथा राज्य सूचना आयोग का गठन करने और उनसे संबंधित या उनसे आनुषंगिक विषयों का उपबंध करने के लिए अधिनियम

भारत के संविधान ने लोकतंत्रात्मक गणराज्य की स्थापना की है ;

और लोकतंत्र शिक्षित नागरिक वर्ग तथा ऐसी सूचना की पारदर्शिता की अपेक्षा करता है, जो उसके कार्यकरण तथा भ्रष्टाचार को रोकने के लिए भी और सरकारों तथा उनके परिकरणों को शासन के प्रति उत्तरदायी बनाने के लिए अनिवार्य है ;

और वास्तविक व्यवहार में सूचना के प्रकटन से संभवत: अन्य लोक हितों, जिनके अन्तर्गत सरकारों के दक्ष प्रचालन, सीमित राज्य वित्तीय संसाधनों के अधिकतम उपयोग और संवेदनशील सूचना की गोपनीयता को बनाए रखना भी है, के साथ विरोध हो सकता है ;

और लोकतंत्रात्मक आदर्श की प्रभुता को बनाए रखते हुए इन विरोधी हितों के बीच सामंजस्य बनाना आवश्यक है ;

अत:, अब यह समीचीन है कि ऐसे नागरिकों को, कतिपय सूचना देने के लिए, जो उसे पाने के इच्छुक हैं, उपबंध किया जाए ;

भारत गणराज्य के छप्पनवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :–

अध्याय 1
प्रारम्भिक

1. **संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ** – (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 है ।

(2) इसका विस्तार जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय सम्पूर्ण भारत पर है ।

(3) धारा 4 की उपधारा (1) धारा 5 की उपधारा (1) और उपधारा (2), धारा 12, धारा 13, धारा 15, धारा 16, धारा 24, धारा 27 और धारा 28 के उपबंध तुरंत प्रभावी होंगे और इस अधिनियम के शेष उपबंध इसके अधिनियमन के एक सौ बीसवें दिन* को प्रवृत्त होंगे ।

2. **परिभाषाएं** – इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) "समुचित सरकार" से किसी ऐसे लोक प्राधिकरण के संबंध में जो –

(i) केन्द्रीय सरकार या संघ राज्यक्षेत्र प्रशासन द्वारा स्थापित, गठित, उसके स्वामित्वाधीन, नियंत्रणाधीन या उसके द्वारा प्रत्यक्ष रूप से या अप्रत्यक्ष रूप से उपलब्ध कराई गई निधियों द्वारा पूर्णतया वित्तपोषित किया जाता है, केन्द्रीय सरकार अभिप्रेत है ;

(ii) राज्य सरकार द्वारा स्थापित, गठित उसके स्वामित्वाधीन, नियंत्रणाधीन या उसके द्वारा प्रत्यक्ष रूप से या अप्रत्यक्ष रूप से उपलब्ध कराई गई निधियों द्वारा सारभूत रूप से वित्तपोषित किया जाता है, राज्य सरकार अभिप्रेत है ;

(ख) "केन्द्रीय सूचना आयोग" से धारा 12 की उपधारा (1) के अधीन गठित केन्द्रीय सूचना आयोग अभिप्रेत है ;

(ग) "केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी" से उपधारा (1) के अधीन पदाभिहित केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत धारा 5 की उपधारा (2) के अधीन इस प्रकार पदाभिहित कोई केन्द्रीय सहायक लोक सूचना अधिकारी भी है ;

(घ) "मुख्य सूचना आयुक्त" और "सूचना आयुक्त" से धारा 12 की उपधारा (3) के अधीन नियुक्त मुख्य सूचना आयुक्त और सूचना आयुक्त अभिप्रेत है ;

(ङ) "सक्षम प्राधिकारी" से अभिप्रेत है –

---

* 12 अक्तूबर, 2005.

(i) लोक सभा या किसी राज्य की विधान सभा की या किसी ऐसे संघ राज्यक्षेत्र की, जिसमें ऐसी सभा है, दशा में अध्यक्ष और राज्य सभा या किसी राज्य की विधान परिषद् की दशा में सभापति ;

(ii) उच्चतम न्यायालय की दशा में भारत का मुख्य न्यायमूर्ति ;

(iii) किसी उच्च न्यायालय की दशा में उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायमूर्ति ;

(iv) संविधान द्वारा या उसके अधीन स्थापित या गठित अन्य प्राधिकरणों की दशा में, यथास्थिति, राष्ट्रपति या राज्यपाल ;

(v) संविधान के अनुच्छेद 239 के अधीन नियुक्त प्रशासक ;

(च) "सूचना" से किसी इलैक्ट्रानिक रूप में धारित अभिलेख, दस्तावेज, ज्ञापन, ई-मेल, मत, सलाह, प्रेस विज्ञप्ति, परिपत्र, आदेश, लागबुक, संविदा, रिपोर्ट, कागजपत्र, नमूने, माडल, आंकड़ों संबंधी सामग्री और किसी प्राइवेट निकाय से संबंधित ऐसी सूचना सहित, जिस तक तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अधीन किसी लोक प्राधिकारी की पहुंच हो सकती है, किसी रूप में कोई सामग्री, अभिप्रेत है ;

(छ) "विहित" से, यथास्थिति, समुचित सरकार या सक्षम प्राधिकारी द्वारा अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है ;

(ज) "लोक प्राधिकारी" से, –

(क) संविधान द्वारा या उसके अधीन ;

(ख) संसद् द्वारा बनाई गई किसी अन्य विधि द्वारा ;

(ग) राज्य विधान-मंडल द्वारा बनाई गई किसी अन्य विधि द्वारा ;

(घ) समुचित सरकार द्वारा जारी की गई अधिसूचना या किए गए आदेश द्वारा, स्थापित या गठित कोई प्राधिकारी या निकाय या स्वायत्त सरकारी संस्था अभिप्रेत है,

और इसके अन्तर्गत, –

(i) कोई ऐसा निकाय है जो समुचित सरकार के स्वामित्वाधीन, नियंत्रणाधीन या उसके द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उपलब्ध कराई गई निधियों द्वारा सारभूत रूप से वित्तपोषित है ;

(ii) कोई ऐसा गैर-सरकारी संगठन है जो समुचित सरकार,

द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उपलब्ध कराई गई निधियों द्वारा वित्तपोषित है ।

(झ) "अभिलेख" में निम्नलिखित सम्मिलित हैं –

(क) कोई दस्तावेज, पाण्डुलिपि और फाइल ;

(ख) किसी दस्तावेज की कोई माइक्रोफिल्म, माइक्रोफिशे और प्रतिकृति प्रति ;

(ग) ऐसी माइक्रोफिल्म में सन्निविष्ट प्रतिबिम्ब या प्रतिबिम्बों का पुनरुत्पादन (चाहे वर्धित रूप में हो या न हो) ; और

(घ) किसी कम्प्यूटर द्वारा या किसी अन्य युक्ति द्वारा उत्पादित कोई अन्य सामग्री ;

(ञ) "सूचना का अधिकार" से इस अधिनियम के अधीन पहुंच योग्य सूचना का, जो किसी लोक प्राधिकारी द्वारा या उसके नियंत्रणाधीन धारित है, अधिकार अभिप्रेत है और जिसमें निम्नलिखित का अधिकार सम्मिलित है –

(i) कृति, दस्तावेजों, अभिलेखों का निरीक्षण ;

(ii) दस्तावेजों या अभिलेखों के टिप्पण, उद्धरण या प्रमाणित प्रतिलिपि लेना ;

(iii) सामग्री के प्रमाणित नमूने लेना ;

(iv) डिस्केट, फ्लापी, टेप, वीडियो कैसेट के रूप में या किसी अन्य इलैक्ट्रानिक रीति में या प्रिंटआऊट के माध्यम से सूचना को, जहां ऐसी सूचना किसी कम्प्यूटर या किसी अन्य युक्ति में भण्डारित है, अभिप्राप्त करना ;

(ट) "राज्य सूचना आयोग" से धारा 15 की उपधारा (1) के

अधीन गठित राज्य सूचना आयोग अभिप्रेत है ;

(ठ) "राज्य मुख्य सूचना आयुक्त" और "राज्य सूचना आयुक्त" से धारा 15 की उपधारा (3) के अधीन नियुक्त राज्य मुख्य सूचना आयुक्त और राज्य सूचना आयुक्त अभिप्रेत है ;

(ड) "राज्य लोक सूचना अधिकारी" से उपधारा 1 के अधीन पदाभिहित राज्य लोक सूचना अधिकारी अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत धारा 5 की उपधारा (2) के अधीन उस रूप में पदाभिहित राज्य सहायक लोक सूचना अधिकारी भी है ;

(ढ) "पर व्यक्ति" से सूचना के लिए अनुरोध करने वाले नागरिक से भिन्न कोई व्यक्ति अभिप्रेत है, और इसके अंतर्गत कोई लोक प्राधिकारी भी है ।

अध्याय 2

सूचना का अधिकार और लोक प्राधिकारियों की बाध्यताएं

3. **सूचना का अधिकार** – इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, सभी नागरिकों को सूचना का अधिकार होगा ।

4. **लोक प्राधिकारियों की बाध्यताएं** – (1) प्रत्येक लोक प्राधिकारी –

(क) अपने सभी अभिलेखों को सम्यक् रूप से सूचीपत्रित और अनुक्रमणिकाबद्ध ऐसी रीति और रूप में रखेगा, जो इस अधिनियम के अधीन सूचना के अधिकार को सुकर बनाता है और सुनिश्चित करेगा कि ऐसे सभी अभिलेख, जो कंप्यूटरीकृत किए जाने के लिए समुचित हैं, युक्तियुक्त समय के भीतर और संसाधनों की उपलभ्यता के अधीन रहते हुए, कंप्यूटरीकृत और विभिन्न प्रणालियों पर संपूर्ण देश में नेटवर्क के माध्यम से संबद्ध हैं जिससे कि ऐसे अभिलेख तक पहुंच को सुकर बनाया जा सके ;

(ख) इस अधिनियम के अधिनियमन से एक सौ बीस दिन के भीतर,–

(i) अपने संगठन की विशिष्टियां, कृत्य और कर्तव्य ;

(ii) अपने अधिकारियों और कर्मचारियों की शक्तियां और कर्तव्य ;

(iii) विनिश्चय करने की प्रक्रिया में पालन की जाने वाली प्रक्रिया जिसमें पर्यवेक्षण और उत्तरदायित्व के माध्यम सम्मिलित हैं ;

(iv) अपने कृत्यों के निर्वहन के लिए स्वयं द्वारा स्थापित मानदंड ;

(v) अपने द्वारा या अपने नियंत्रणाधीन धारित या अपने कर्मचारियों द्वारा अपने कृत्यों के निर्वहन के लिए प्रयोग किए गए नियम, विनियम, अनुदेश, निर्देशिका और अभिलेख ;

(vi) ऐसे दस्तावेजों के, जो उसके द्वारा धारित या उसके नियंत्रणाधीन हैं, प्रवर्गों का विवरण ;

(vii) किसी व्यवस्था की विशिष्टियां, जो उसकी नीति की संरचना या उसके कार्यान्वयन के संबंध में जनता के सदस्यों से परामर्श के लिए या उनके द्वारा अभ्यावेदन के लिए विद्यमान हैं ;

(viii) ऐसे बोर्डों, परिषदों, समितियों और अन्य निकायों के, जिनमें दो या अधिक व्यक्ति हैं, जिनका उसके भागरूप में या इस बारे में सलाह देने के प्रयोजन के लिए गठन किया गया है और इस बारे में कि क्या उन बोर्डों, परिषदों, समितियों और अन्य निकायों की बैठकें जनता के लिए खुली होंगी या ऐसी बैठकों के कार्यवृत्त तक जनता की पहुंच होगी, विवरण ;

(ix) अपने अधिकारियों और कर्मचारियों की निर्देशिका ;

(x) अपने प्रत्येक अधिकारी और कर्मचारी द्वारा प्राप्त मासिक पारिश्रमिक, जिसके अंतर्गत प्रतिकर की प्रणाली भी है, जो उसके विनियमों में यथाउपबंधित हो ;

(xi) सभी योजनाओं, प्रस्तावित व्ययों और किए गए संवितरणों पर रिपोर्टों की विशिष्टियां उपदर्शित करते हुए अपने प्रत्येक अभिकरण को आबंटित बजट ;

(xii) सहायिकी कार्यक्रमों के निष्पादन की रीति जिसमें आबंटित राशि और ऐसे कार्यक्रमों के फायदाग्राहियों के ब्योरे सम्मिलित हैं ;

(xiii) अपने द्वारा अनुदत्त रियायतों, अनुज्ञापत्रों या प्राधिकारों

के प्राप्तिकर्ताओं की विशिष्टियां ;

(xiv) किसी इलैक्ट्रानिक रूप में सूचना के संबंध में ब्यौरे, जो उसको उपलब्ध हों या उसके द्वारा धारित हों ;

(xv) सूचना अभिप्राप्त करने के लिए नागरिकों को उपलब्ध सुविधाओं की विशिष्टियां, जिनमें किसी पुस्तकालय या वाचन कक्ष के, यदि लोक उपयोग के लिए अनुरक्षित हैं तो, कार्यकरण घंटे सम्मिलित हैं ;

(xvi) लोक सूचना अधिकारियों के नाम, पदनाम और अन्य विशिष्टियां ;

(xvii) ऐसी अन्य सूचना, जो विहित की जाए,

प्रकाशित करेगा और तत्पश्चात् इन प्रकाशनों को प्रत्येक वर्ष में अद्यतन करेगा ;

(ग) महत्वपूर्ण नीतियों की विरचना करते समय या ऐसे विनिश्चयों की घोषणा करते समय, जो जनता को प्रभावित करते हों, सभी सुसंगत तथ्यों को प्रकाशित करेगा ;

(घ) प्रभावित व्यक्तियों को अपने प्रशासनिक या न्यायिककल्प विनिश्चयों के लिए कारण उपलब्ध कराएगा ।

(2) प्रत्येक लोक अधिकारी का निरंतर यह प्रयास होगा कि वह उपधारा (1) के खंड (ख) की अपेक्षाओं के अनुसार, स्वप्रेरणा से, जनता को नियमित अन्तरालों पर संसूचना के विभिन्न संसाधनों के माध्यम से, जिनके अंतर्गत इंटरनेट भी है, इतनी अधिक सूचना उपलब्ध कराने के लिए उपाय करे जिससे कि जनता को सूचना प्राप्त करने के लिए इस अधिनियम का कम से कम अवलंब लेना पड़े ।

(3) उपधारा (1) के प्रयोजन के लिए प्रत्येक सूचना को विस्तृत रूप से और ऐसे प्ररूप और रीति में प्रसारित किया जाएगा, जो जनता के लिए सहज रूप से पहुंच योग्य हो ।

(4) सभी सामग्री को, लागत प्रभावशीलता, स्थानीय भाषा और उस क्षेत्र में संसूचना की अत्यंत प्रभावी पद्धति को ध्यान में रखते हुए, प्रसारित किया जाएगा तथा सूचना यथास्थिति केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी के पास इलैक्ट्रानिक रूप में संभव सीमा तक

निःशुल्क या माध्यम की ऐसी लागत पर या ऐसी मुद्रण लागत कीमत पर, जो विहित की जाए, सहज रूप से पहुंच योग्य होनी चाहिए ।

स्पष्टीकरण – उपधारा (3) और उपधारा (4) के प्रयोजनों के लिए, "प्रसारित" से सूचना पट्टों, समाचारपत्रों, लोक उद्घोषणाओं, मीडिया प्रसारणों, इंटरनेट या किसी अन्य माध्यम से, जिसमें किसी लोक प्राधिकारी के कार्यालयों का निरीक्षण सम्मिलित है, जनता को सूचना की जानकारी देना या संसूचित कराना अभिप्रेत है ।

5. **लोक सूचना अधिकारियों का पदनाम** – (1) प्रत्येक लोक प्राधिकारी, इस अधिनियम के अधिनियमन के सौ दिन के भीतर सभी प्रशासनिक एककों या उसके अधीन कार्यालयों में, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारियों या राज्य लोक सूचना अधिकारियों के रूप में उतने अधिकारियों को अभिहित करेगा, जितने इस अधिनियम के अधीन सूचना के लिए अनुरोध करने वाले व्यक्तियों को सूचना प्रदान करने के लिए आवश्यक हों ।

(2) उपधारा (1) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, प्रत्येक लोक प्राधिकारी, इस अधिनियम के अधिनियमन के सौ दिन के भीतर किसी अधिकारी को प्रत्येक उपमंडल स्तर या अन्य उप जिला स्तर पर यथास्थिति, केन्द्रीय सहायक लोक सूचना अधिकारी या किसी राज्य सहायक लोक सूचना अधिकारी के रूप में इस अधिनियम के अधीन सूचना के लिए आवेदन या अपील प्राप्त करने और उसे तत्काल, यथास्थिति, केंद्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी या धारा 19 की उपधारा (1) के अधीन विनिर्दिष्ट वरिष्ठ अधिकारी या केन्द्रीय सूचना आयोग अथवा राज्य सूचना आयोग को भेजने के लिए, पदाभिहित करेगा :

परंतु यह कि जहां सूचना या अपील के लिए कोई आवेदन यथास्थिति, किसी केन्द्रीय सहायक लोक सूचना अधिकारी या किसी राज्य सहायक लोक सूचना अधिकारी को दिया जाता है, वहां धारा 7 की उपधारा (1) के अधीन विनिर्दिष्ट उत्तर के लिए अवधि की संगणना करने में पांच दिन की अवधि जोड़ दी जाएगी ।

(3) यथास्थिति, प्रत्येक, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी, सूचना की मांग करने वाले व्यक्तियों के अनुरोधों पर कार्रवाई करेगा और ऐसी सूचना की मांग करने वाले व्यक्तियों को युक्तियुक्त सहायता प्रदान करेगा ।

(4) यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी, ऐसे किसी अन्य अधिकारी की सहायता की मांग कर सकेगा, जिसे वह अपने कृत्यों के समुचित निर्वहन के लिए आवश्यक समझे ।

(5) कोई अधिकारी, जिसकी उपधारा (4) के अधीन सहायता चाही गई है, उसकी सहायता चाहने वाले यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी को सभी सहायता प्रदान करेगा और इस अधिनियम के उपबंधों के किसी उल्लंघन के प्रयोजनों के लिए ऐसे अन्य अधिकारी को, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी समझा जाएगा ।

6. **सूचना अभिप्राप्त करने के लिए अनुरोध** – (1) कोई व्यक्ति, जो इस अधिनियम के अधीन कोई सूचना अभिप्राप्त करना चाहता है, लिखित में या इलैक्ट्रानिक युक्ति के माध्यम से अंग्रेजी या हिन्दी में या उस क्षेत्र की, जिसमें आवेदन किया जा रहा है, राजभाषा में ऐसी फीस के साथ, जो विहित की जाए, –

(क) संबंधित लोक प्राधिकरण के, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी ;

(ख) यथास्थिति, केन्द्रीय सहायक लोक सूचना अधिकारी या राज्य सहायक लोक सूचना अधिकारी,

को, उसके द्वारा मांगी गई सूचना की विशिष्टियां विनिर्दिष्ट करते हुए अनुरोध करेगा :

परंतु जहां ऐसा अनुरोध लिखित में नहीं किया जा सकता है, वहां, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी अनुरोध करने वाले व्यक्ति को सभी युक्तियुक्त सहायता मौखिक रूप से देगा, जिससे कि उसे लेखबद्ध किया जा सके ।

(2) सूचना के लिए अनुरोध करने वाले आवेदक से सूचना का अनुरोध करने के लिए किसी कारण को या किसी अन्य व्यक्तिगत ब्यौरे को, सिवाय उसके जो उससे संपर्क करने के लिए आवश्यक हों, देने की अपेक्षा नहीं की जाएगी ।

(3) जहां, कोई आवेदन किसी लोक प्राधिकारी को किसी ऐसी सूचना के लिए अनुरोध करते हुए किया जाता है, –

(i) जो किसी अन्य लोक प्राधिकारी द्वारा धारित है ; या

(ii) जिसकी विषय-वस्तु किसी अन्य लोक प्राधिकारी के कृत्यों से अधिक निकट रूप से संबंधित है,

वहां, वह लोक प्राधिकारी, जिसको ऐसा आवेदन किया जाता है, ऐसे आवेदन या उसके ऐसे भाग को, जो समुचित हो, उस अन्य लोक प्राधिकारी को अंतरित करेगा और ऐसे अंतरण के बारे में आवेदक को तुरंत सूचना देगा :

परंतु यह कि इस उपधारा के अनुसरण में किसी आवेदन का अंतरण यथासाध्य शीघ्रता से किया जाएगा, किन्तु किसी भी दशा में आवेदन की प्राप्ति की तारीख से पांच दिनों के पश्चात् नहीं किया जाएगा ।

7. **अनुरोध का निपटारा** – (1) धारा 5 की उपधारा (2) के परंतुक या धारा 6 की उपधारा (3) के परंतुक के अधीन रहते हुए, धारा 6 के अधीन अनुरोध के प्राप्त होने पर, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी, यथासंभवशीघ्रता से, और किसी भी दशा में अनुरोध की प्राप्ति के तीस दिन के भीतर, ऐसी फीस के संदाय पर, जो विहित की जाए, या तो सूचना उपलब्ध कराएगा या धारा 8 और धारा 9 में विनिर्दिष्ट कारणों में से किसी कारण से अनुरोध को अस्वीकार करेगा :

परंतु जहां मांगी गई जानकारी का संबंध किसी व्यक्ति के जीवन या स्वतंत्रता से है, वहां वह अनुरोध प्राप्त होने के अड़तालीस घंटे के भीतर उपलब्ध कराई जाएगी ।

(2) यदि, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी उपधारा (1) के अधीन विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर सूचना के लिए अनुरोध पर विनिश्चय करने में असफल रहता है तो, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी, के बारे में यह समझा जाएगा कि उसने अनुरोध को नामंजूर कर दिया है ।

(3) जहां, सूचना उपलब्ध कराने की लागत के रूप में किसी और फीस के संदाय पर सूचना उपलब्ध कराने का विनिश्चय किया जाता है, वहां यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी अनुरोध करने वाले व्यक्ति को, –

(क) उसके द्वारा यथा अवधारित सूचना उपलब्ध कराने की लागत

के रूप में और फीस के ब्यौरे, जिनके साथ उपधारा (1) के अधीन विहित फीस के अनुसार रकम निकालने के लिए की गई संगणनाएं होंगी, देते हुए उससे उस फीस को जमा करने का अनुरोध करते हुए कोई संसूचना भेजेगा और उक्त संसूचना के प्रेषण और फीस के संदाय के बीच मध्यवर्ती अवधि को उस धारा में निर्दिष्ट तीस दिन की अवधि की संगणना करने के प्रयोजन के लिए अपवर्जित किया जाएगा ;

(ख) प्रभारित फीस की रकम या उपलब्ध कराई गई पहुंच के प्ररूप के बारे में, जिसके अंतर्गत अपील प्राधिकारी की विशिष्टियां, समय-सीमा, प्रक्रिया और कोई अन्य प्ररूप भी हैं, विनिश्चय का पुनर्विलोकन करने के संबंध में उसके अधिकार से संबंधित सूचना देते हुए, कोई संसूचना भेजेगा ।

(4) जहां, इस अधिनियम के अधीन अभिलेख या उसके किसी भाग तक पहुंच अपेक्षित है और ऐसा व्यक्ति, जिसको पहुंच उपलब्ध कराई जानी है, संवेदनात्मक रूप से निःशक्त है, वहां यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी सूचना तक पहुंच को समर्थ बनाने के लिए सहायता उपलब्ध कराएगा जिसमें निरीक्षण के लिए ऐसी सहायता कराना भी सम्मिलित है, जो समुचित हो ।

(5) जहां, सूचना तक पहुंच मुद्रित या किसी इलैक्ट्रानिक रूपविधान में उपलब्ध कराई जानी है, वहां आवेदक, उपधारा (6) के अधीन रहते हुए, ऐसी फीस का संदाय करेगा, जो विहित की जाए :

परन्तु धारा 6 की उपधारा (1) और धारा 7 की उपधारा (1) और उपधारा (5) के अधीन विहित फीस युक्तियुक्त होगी और ऐसे व्यक्तियों से, जो गरीबी की रेखा के नीचे हैं, जैसा समुचित सरकार द्वारा अवधारित किया जाए, कोई फीस प्रभारित नहीं की जाएगी ।

(6) उपधारा (5) में किसी बात के होते हुए भी, जहां कोई लोक प्राधिकारी उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट समय-सीमा का अनुपालन करने में असफल रहता है, वहां सूचना के लिए अनुरोध करने वाले व्यक्ति को प्रभार के बिना सूचना उपलब्ध कराई जाएगी ।

(7) उपधारा (1) के अधीन कोई विनिश्चय करने से पूर्व, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी धारा 11

के अधीन पर व्यक्ति द्वारा किए गए अभ्यावेदन को ध्यान में रखेगा ।

(8) जहां, किसी अनुरोध को उपधारा (1) के अधीन अस्वीकृत किया गया है, वहां, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी अनुरोध करने वाले व्यक्ति को, –

(i) ऐसी अस्वीकृति के लिए कारण ;

(ii) वह अवधि, जिसके भीतर ऐसी अस्वीकृति के विरुद्ध कोई अपील की जा सकेगी ; और

(iii) अपील प्राधिकारी की विशिष्टियां,

संसूचित करेगा ।

(9) किसी सूचना को साधारणतया उसी प्ररूप में उपलब्ध कराया जाएगा, जिसमें उसे मांगा गया है, जब तक कि वह लोक प्राधिकारी के स्रोतों को अननुपाती रूप से विचलित न करता हो या प्रश्नगत अभिलेख की सुरक्षा या संरक्षण के प्रतिकूल न हो ।

8. **सूचना के प्रकट किए जाने से छूट** – (1) इस अधिनियम में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, व्यक्ति को निम्नलिखित सूचना देने की बाध्यता नहीं होगी –

(क) सूचना, जिसके प्रकटन से भारत की प्रभुता और अखण्डता, राज्य की सुरक्षा, रणनीति, वैज्ञानिक या आर्थिक हित, विदेश से संबंध पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हो या किसी अपराध को करने का उद्दीपन होता हो ;

(ख) सूचना, जिसके प्रकाशन को किसी न्यायालय या अधिकरण द्वारा अभिव्यक्त रूप से निषिद्ध किया गया है या जिसके प्रकटन से न्यायालय का अवमान होता है ;

(ग) सूचना, जिसके प्रकटन से संसद् या किसी राज्य के विधान-मंडल के विशेषाधिकार का भंग कारित होगा ;

(घ) सूचना, जिसमें वाणिज्यिक विश्वास, व्यापार गोपनीयता या बौद्धिक संपदा सम्मिलित है, जिसके प्रकटन से किसी पर व्यक्ति की प्रतियोगी स्थिति को नुकसान होता है, जब तक कि सक्षम प्राधिकारी का यह समाधान नहीं हो जाता है कि ऐसी सूचना के प्रकटन से विस्तृत लोक हित का समर्थन होता हैं ;

(ङ) किसी व्यक्ति को उसकी वैश्वासिक नातेदारी में उपलब्ध सूचना, जब तक कि सक्षम प्राधिकारी का यह समाधान नहीं हो जाता है कि ऐसी सूचना के प्रकटन से विस्तृत लोक हित का समर्थन होता है ;

(च) किसी विदेशी सरकार से विश्वास में प्राप्त सूचना ;

(छ) सूचना जिसको प्रकट करना किसी व्यक्ति के जीवन या शारीरिक सुरक्षा को खतरे में डालेगा या जो विधि प्रवर्तन या सुरक्षा प्रयोजनों के लिए विश्वास में दी गई किसी सूचना या सहायता के स्रोत की पहचान करेगा ;

(ज) सूचना, जिससे अपराधियों के अन्वेषण, पकड़े जाने या अभियोजन की प्रक्रिया में अड़चन पड़ेगी ;

(झ) मंत्रिमंडल के कागजपत्र, जिसमें मंत्रिपरिषद्, सचिवों और अन्य अधिकारियों के विचार-विमर्श के अभिलेख सम्मिलित हैं :

परन्तु यह कि मंत्रिपरिषद् के विनिश्चय, उनके कारण तथा वह सामग्री जिसके आधार पर विनिश्चय किए गए थे, विनिश्चय किए जाने और विषय के पूरा या समाप्त होने के पश्चात् जनता को उपलब्ध कराए जाएंगे :

परन्तु यह और कि वे विषय, जो इस धारा में विनिर्दिष्ट छूटों के अंतर्गत आते हैं, प्रकट नहीं किए जाएंगे ;

(ञ) सूचना, जो व्यक्तिगत सूचना से संबंधित है, जिसका प्रकटन किसी लोक क्रियाकलाप या हित से संबंध नहीं रखता है या जिससे व्यष्टि की एकांतता पर अनावश्यक अतिक्रमण होगा, जब तक कि, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी या अपील प्राधिकारी का यह समाधान नहीं हो जाता है कि ऐसी सूचना का प्रकटन विस्तृत लोक हित में न्यायोचित है :

परन्तु ऐसी सूचना के लिए, जिसको, यथास्थिति, संसद् या किसी राज्य विधान-मंडल को देने से इंकार नहीं किया जा सकता है, किसी व्यक्ति को इंकार नहीं किया जा सकेगा ।

(2) शासकीय गुप्त बात अधिनियम, 1923 (1923 का 19) में, उपधारा (1) के अनुसार अनुज्ञेय किसी छूट में किसी बात के होते हुए भी,

किसी लोक प्राधिकारी को सूचना तक पहुंच अनुज्ञात की जा सकेगी, यदि सूचना के प्रकटन में लोक हित, संरक्षित हितों के नुकसान से अधिक है ।

(3) उपधारा (1) के खण्ड (क), खंड (ग) और खण्ड (झ) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, किसी ऐसी घटना, वृत्तांत या विषय से संबंधित कोई सूचना, जो उस तारीख से, जिसको धारा 6 के अधीन कोई अनुरोध किया जाता है, बीस वर्ष पूर्व घटित हुई थी या हुआ था, उस धारा के अधीन अनुरोध करने वाले किसी व्यक्ति को उपलब्ध कराई जाएगी :

परन्तु यह कि जहां उस तारीख के बारे में, जिससे बीस वर्ष की उक्त अवधि को संगणित किया जाता है, कोई प्रश्न उद्‌भूत होता है, वहां इस अधिनियम में उसके लिए उपबंधित प्रायिक अपीलों के अधीन रहते हुए केन्द्रीय सरकार का विनिश्चय अंतिम होगा ।

9. **कतिपय मामलों में पहुंच के लिए अस्वीकृति के आधार** – धारा 8 के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, यथास्थिति, कोई केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या कोई राज्य लोक सूचना अधिकारी सूचना के किसी अनुरोध को वहां अस्वीकार कर सकेगा जहां पहुंच उपलब्ध कराने के लिए ऐसा अनुरोध राज्य से भिन्न किसी व्यक्ति के अस्तित्वयुक्त प्रतिलिप्यधिकार का उल्लंघन अंतर्वलित करेगा ।

10. **पृथक्करणीयता** – (1) जहां सूचना तक पहुंच के अनुरोध को इस आधार पर अस्वीकार किया जाता है वह ऐसी सूचना के संबंध में है जो प्रकट किए जाने से छूट प्राप्त है वहां इस अधिनियम में किसी बात के होते हुए भी, पहुंच अभिलेख के उस भाग तक उपलब्ध कराई जा सकेगी जिसमें कोई ऐसी सूचना अंतर्विष्ट नहीं है, जो इस अधिनियम के अधीन प्रकट किए जाने से छूट प्राप्त है और जो किसी ऐसे भाग से, जिसमें छूट प्राप्त सूचना अंतर्विष्ट है, युक्तियुक्त रूप से पृथक् की जा सकती है ।

(2) जहां उपधारा (1) के अधीन अभिलेख के किसी भाग तक पहुंच अनुदत्त की जाती है, वहां, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी निम्नलिखित सूचना देते हुए, आवेदक को एक सूचना देगा कि –

(क) अनुरोध किए गए अभिलेख का केवल एक भाग ही, उस अभिलेख से उस सूचना को, जो प्रकटन से छूट प्राप्त है पृथक् करने

के पश्चात् उपलब्ध कराया जा रहा है ;

(ख) विनिश्चय के लिए कारण, जिनके अंतर्गत तथ्य के किसी महत्वपूर्ण प्रश्न पर उस सामग्री के प्रति, जिस पर वे निष्कर्ष आधारित थे, निर्देश करते हुए कोई निष्कर्ष भी हैं ;

(ग) विनिश्चय करने वाले व्यक्ति का नाम और पदनाम ;

(घ) उसके द्वारा संगणित फीस के ब्यौरे और फीस की वह रकम जिसकी आवेदक से निक्षेप करने की अपेक्षा की जाती है ; और

(ङ) सूचना के भाग को प्रकट न किए जाने के संबंध में विनिश्चय के पुनर्विलोकन के बारे में उसके अधिकार, प्रभारित फीस की रकम या उपलब्ध कराया गया पहुंच का प्ररूप, जिसके अंतर्गत यथास्थिति, धारा 19 की उपधारा (1) के अधीन विनिर्दिष्ट वरिष्ठ अधिकारी या केन्द्रीय सूचना अधिकारी या राज्य सूचना अधिकारी की विशिष्टियां, समय-सीमा, प्रक्रिया और कोई अन्य पहुंच का प्ररूप भी है ।

11. **पर व्यक्ति सूचना** – (1) जहां, यथास्थिति, किसी केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी का, इस अधिनियम के अधीन किए गए अनुरोध पर कोई ऐसी सूचना या अभिलेख या उसके किसी भाग को प्रकट करने का आशय है, जो किसी पर व्यक्ति से संबंधित है या उसके द्वारा इसका प्रदाय किया गया है और उस पर व्यक्ति द्वारा उसे गोपनीय माना गया है, वहां यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी अनुरोध प्राप्त होने से पांच दिन के भीतर, ऐसे पर व्यक्ति को अनुरोध की और इस तथ्य की लिखित रूप में सूचना देगा कि, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी का उक्त सूचना या अभिलेख या उसके किसी भाग को प्रकट करने का आशय है, और इस बारे में कि सूचना प्रकट की जानी चाहिए या नहीं, लिखित में या मौखिक रूप से निवेदन करने के लिए पर व्यक्ति को आमंत्रित करेगा तथा सूचना के प्रकटन के बारे में कोई विनिश्चय करते समय पर व्यक्ति के ऐसे निवेदन को ध्यान में रखा जाएगा :

परन्तु विधि द्वारा संरक्षित व्यापार या वाणिज्यिक गुप्त बातों की दशा में के सिवाय, यदि ऐसे प्रकटन में लोक हित, ऐसे पर व्यक्ति के हितों की किसी संभावित अपहानि या क्षति से अधिक महत्वपूर्ण है तो प्रकटन अनुज्ञात किया जा सकेगा ।

(2) जहां उपधारा (1) के अधीन, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी द्वारा पर व्यक्ति पर किसी सूचना या अभिलेख या उसके किसी भाग के बारे में किसी सूचना की तामील की जाती है, वहां ऐसे पर व्यक्ति को, ऐसी सूचना की प्राप्ति की तारीख से दस दिन के भीतर, प्रस्तावित प्रकटन के विरुद्ध अभ्यावेदन करने का अवसर दिया जाएगा ।

(3) धारा 7 में किसी बात के होते हुए भी, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी धारा 6 के अधीन अनुरोध प्राप्त होने के पश्चात् चालीस दिन के भीतर, यदि पर व्यक्ति को उपधारा (2) के अधीन अभ्यावेदन करने का अवसर दे दिया गया है, तो इस बारे में विनिश्चय करेगा कि उक्त सूचना या अभिलेख या उसके भाग का प्रकटन किया जाए या नहीं और अपने विनिश्चय की सूचना लिखित में पर व्यक्ति को देगा ।

(4) उपधारा (3) के अधीन दी गई सूचना में यह कथन भी सम्मिलित होगा कि वह पर व्यक्ति, जिसे सूचना दी गई है, धारा 19 के अधीन उक्त विनिश्चय के विरुद्ध अपील करने का हकदार है ।

अध्याय 3
केन्द्रीय सूचना आयोग

12. **केन्द्रीय सूचना आयोग का गठन** – (1) केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, केन्द्रीय सूचना आयोग के नाम से ज्ञात एक निकाय का गठन करेगी, जो ऐसी शक्तियों का प्रयोग और ऐसे कृत्यों का पालन करेगा, जो उसे इस अधिनियम के अधीन सौंपे जाएं ।

(2) केन्द्रीय सूचना आयोग निम्नलिखित से मिलकर बनेगा –

(क) मुख्य सूचना आयुक्त ; और

(ख) दस से अनधिक उतनी संख्या में केन्द्रीय सूचना आयुक्त, जितने आवश्यक समझे जाएं ।

(3) मुख्य सूचना आयुक्त और सूचना आयुक्तों की नियुक्ति, राष्ट्रपति द्वारा निम्नलिखित से मिलकर बनी समिति की सिफारिश पर की जाएगी –

(i) प्रधानमंत्री, जो समिति का अध्यक्ष होगा ;

(ii) लोकसभा में विपक्ष का नेता ; और

(iii) प्रधानमंत्री द्वारा नामनिर्दिष्ट संघ मंत्रिमंडल का एक मंत्री ।

स्पष्टीकरण – शंकाओं के निवारण के लिए यह घोषित किया जाता है कि जहां लोक सभा में विपक्ष के नेता को उस रूप में मान्यता नहीं दी गई है, वहां लोक सभा में सरकार के विपक्षी एकल सबसे बड़े समूह के नेता को विपक्ष का नेता समझा जाएगा ।

(4) केन्द्रीय सूचना आयोग के कार्यों का साधारण अधीक्षण, निदेशन और प्रबंधन, मुख्य सूचना आयुक्त में निहित होगा, जिसकी सहायता सूचना आयुक्तों द्वारा की जाएगी और वह ऐसी सभी शक्तियों का प्रयोग और ऐसे सभी कार्य और बातें कर सकेगा, जिनका केन्द्रीय सूचना आयोग द्वारा स्वतंत्र रूप से इस अधिनियम के अधीन किसी अन्य प्राधिकारी के निदेशों के अधीन रहे बिना प्रयोग किया जा सकता है या जो की जा सकती है ।

(5) मुख्य सूचना आयुक्त और सूचना आयुक्त विधि, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, समाज सेवा, प्रबंध, पत्रकारिता, जनसंपर्क माध्यम या प्रशासन तथा शासन का व्यापक ज्ञान और अनुभव रखने वाले जनजीवन में प्रख्यात व्यक्ति होंगे ।

(6) मुख्य सूचना आयुक्त या कोई सूचना आयुक्त, यथास्थिति, संसद् का सदस्य या किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र के विधान-मंडल का सदस्य नहीं होगा या कोई अन्य लाभ का पद धारित नहीं करेगा या किसी राजनैतिक दल से संबद्ध नहीं होगा अथवा कोई कारबार नहीं करेगा या कोई वृत्ति नहीं करेगा ।

(7) केन्द्रीय सूचना आयोग का मुख्यालय, दिल्ली में होगा और केन्द्रीय सूचना आयोग, केन्द्रीय सरकार के पूर्व अनुमोदन से, भारत में अन्य स्थानों पर कार्यालय स्थापित कर सकेगा ।

13. **पदावधि और सेवा शर्तें** – (1) सूचना आयुक्त, उस तारीख से, जिसको वह अपना पद ग्रहण करता है पांच वर्ष की अवधि के लिए पद धारण करेगा और पुनर्नियुक्ति के लिए पात्र नहीं होगा :

परन्तु यह कि कोई मुख्य सूचना आयुक्त पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त करने के पश्चात् उस रूप में पद धारण नहीं करेगा ।

(2) प्रत्येक सूचना आयुक्त, उस तारीख से, जिसको वह अपना पद ग्रहण करता है, पांच वर्ष की अवधि के लिए या पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त

करने तक, इनमें से जो भी पूर्वतर हो, पद धारण करेगा और ऐसे सूचना आयुक्त के रूप में पुनर्नियुक्ति के लिए पात्र नहीं होगा :

परन्तु प्रत्येक सूचना आयुक्त, इस उपधारा के अधीन अपना पद रिक्त करने पर, धारा 12 की उपधारा (3) में विनिर्दिष्ट रीति से मुख्य सूचना आयुक्त के रूप में नियुक्ति के लिए पात्र होगा :

परन्तु यह और कि जहां सूचना आयुक्त को मुख्य सूचना आयुक्त के रूप में नियुक्त किया जाता है वहां उसकी पदावधि सूचना आयुक्त और मुख्य सूचना आयुक्त के रूप में कुल मिलाकर पांच वर्ष से अधिक नहीं होगी ।

(3) मुख्य सूचना आयुक्त या कोई सूचना आयुक्त, अपना पद ग्रहण करने से पूर्व राष्ट्रपति या उनके द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किसी अन्य व्यक्ति के समक्ष, पहली अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए उपवर्णित प्ररूप के अनुसार एक शपथ या प्रतिज्ञान लेगा और उस पर हस्ताक्षर करेगा ।

(4) मुख्य सूचना आयुक्त या कोई सूचना आयुक्त, किसी भी समय, राष्ट्रपति को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपना पद त्याग सकेगा :

परन्तु मुख्य सूचना आयुक्त या किसी सूचना आयुक्तों को धारा 14 में विनिर्दिष्ट रीति से हटाया जा सकेगा ।

(5) संदेय वेतन और भत्ते तथा सेवा के अन्य निबंधन और शर्तें –

(क) मुख्य सूचना आयुक्त की वही होंगी, जो मुख्य निर्वाचन आयुक्त की हैं ;

(ख) सूचना आयुक्त की वही होंगी, जो निर्वाचन आयुक्त की हैं :

परन्तु यदि मुख्य सूचना आयुक्त या कोई सूचना आयुक्त, अपनी नियुक्ति के समय, भारत सरकार के अधीन या किसी राज्य सरकार के अधीन किसी पूर्व सेवा के संबंध में कोई पेंशन, अक्षमता या क्षति पेंशन से भिन्न प्राप्त कर रहा है तो मुख्य सूचना आयुक्त या सूचना आयुक्त के रूप में सेवा के संबंध में उसके वेतन में से, उस पेंशन की, जिसके अन्तर्गत पेंशन का ऐसा कोई भाग, जिसे संराशिकृत किया गया था और सेवानिवृत्ति उपदान के समतुल्य पेंशन को छोड़ कर, सेवानिवृत्ति फायदों के अन्य रूपों के समतुल्य पेंशन भी है, रकम को कम कर दिया जाएगा :

परन्तु यह और कि यदि मुख्य सूचना आयुक्त या कोई सूचना

आयुक्त, अपनी नियुक्ति के समय, किसी केन्द्रीय अधिनियम या राज्य अधिनियम द्वारा या उसके अधीन स्थापित किसी निगम में या केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार के स्वामित्वाधीन या नियंत्रणाधीन किसी सरकारी कंपनी में की गई किसी पूर्व सेवा के संबंध में सेवानिवृत्ति फायदे प्राप्त कर रहा है, तो मुख्य सूचना आयुक्त या सूचना आयुक्त के रूप में सेवा के संबंध में उसके वेतन में से, सेवानिवृत्ति फायदों के समतुल्य पेंशन की रकम कम कर दी जाएगी :

परन्तु यह भी कि मुख्य सूचना आयुक्त या सूचना आयुक्त के वेतन, भत्तों और सेवा की अन्य शर्तों में उसकी नियुक्ति के पश्चात् उसके अलाभकर रूप में कोई परिवर्तन नहीं किया जाएगा ।

(6) केन्दीय सरकार, मुख्य सूचना आयुक्त या सूचना आयुक्तों को उतने अधिकारी और कर्मचारी उपलब्ध कराएगी, जितने इस अधिनियम के अधीन उनके कृत्यों के दक्ष पालन के लिए आवश्यक हों और इस अधिनियम के प्रयोजन के लिए नियुक्त किए गए अधिकारियों और अन्य कर्मचारियों को संदेय वेतन और भत्ते तथा सेवा के निबंधन और शर्तें ऐसी होंगी, जो विहित की जाएं ।

14. **सूचना आयुक्त या मुख्य सूचना आयुक्त का हटाया जाना** – (1) उपधारा (3) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, मुख्य सूचना आयुक्त या किसी सूचना आयुक्त को राष्ट्रपति के आदेश द्वारा साबित कदाचार या असमर्थता के आधार पर उसके पद से तभी हटाया जाएगा, जब उच्चतम न्यायालय ने, राष्ट्रपति द्वारा उसे किए गए किसी निर्देश पर जांच के पश्चात् यह रिपोर्ट दी हो कि, यथास्थिति, मुख्य सूचना आयुक्त या सूचना आयुक्त को उस आधार पर हटा दिया जाना चाहिए ।

(2) राष्ट्रपति, उस मुख्य सूचना आयुक्त या सूचना आयुक्त को, जिसके विरुद्ध उपधारा (1) के अधीन उच्चतम न्यायालय को निर्देश किया गया है, ऐसे निर्देश पर उच्चतम न्यायालय की रिपोर्ट प्राप्त होने पर राष्ट्रपति द्वारा आदेश पारित किए जाने तक पद से निलंबित कर सकेगा और यदि आवश्यक समझे तो, जांच के दौरान कार्यालय में उपस्थित होने से भी प्रतिषिद्ध कर सकेगा ।

(3) उपधारा (1) में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी राष्ट्रपति, मुख्य सूचना आयुक्त या किसी सूचना आयुक्त को आदेश द्वारा पद से हटा सकेगा, यदि, यथास्थिति, मुख्य सूचना आयुक्त या सूचना आयुक्त, –

(क) दिवालिया न्यायनिर्णीत किया गया है ; या

(ख) वह ऐसे अपराध के लिए दोषसिद्ध ठहराया गया है, जिसमें राष्ट्रपति की राय में, नैतिक अधमता अन्तर्वलित है ; या

(ग) अपनी पदावधि के दौरान, अपने पद के कर्तव्यों से परे किसी वैतनिक नियोजन में लगा हुआ है ; या

(घ) राष्ट्रपति की राय में, मानसिक या शारीरिक अक्षमता के कारण पद पर बने रहने के अयोग्य है ; या

(ङ) उसने ऐसे वित्तीय और अन्य हित अर्जित किए हैं, जिनसे मुख्य सूचना आयुक्त या किसी सूचना आयुक्त के रूप में उसके कृत्यों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की संभावना है ।

(4) यदि मुख्य सूचना आयुक्त या कोई सूचना आयुक्त, किसी प्रकार भारत सरकार द्वारा या उसकी ओर से की गई किसी संविदा या करार से संबद्ध या उसमें हितबद्ध है या किसी निगमित कंपनी के किसी सदस्य के रूप में से अन्यथा और उसके अन्य सदस्यों के साथ सामान्यतः उसके लाभ में या उससे प्रोद्भूत होने वाले किसी फायदे या परिलब्धियों में हिस्सा लेता है तो वह, उपधारा (1) के प्रयोजनों के लिए, कदाचार का दोषी समझा जाएगा ।

क्रमशः आगामी अंक में....

Cover iii

कार्यालय आदेश तारीख 13 फरवरी, 2017 के अनुसार विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पाठ्य पुस्तकों पर छूट देने की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम व प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पुस्तक की मुद्रित कीमत (रुपयों में)	7 वर्ष से पुराने संस्करण पर 35% छूट के पश्चात् कीमत (रुपयों में)	8 से 15 वर्ष पुराने संस्करण पर 50% छूट के पश्चात् कीमत (रुपयों में)	15 वर्ष से अधिक पुराने संस्करण पर 75% छूट के पश्चात् कीमत (रुपयों में)
1.	भारत का विधिक इतिहास - श्री सुरेन्द्र गधुकर - 1989	30	—	—	8
2.	माल विक्रय और परक्राम्य लिखत विधि - डा. एन. वी. परांजपे - 1990	40	—	—	10
3.	वाणिज्य विधि - डा. आर. एल. भट्ट - 1993	108	—	—	27
4.	अपकृत्य विधि के सिद्धांत - श्री शर्मन लाल अग्रवाल - 1993	40	—	—	10
5.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय - डा. एस. सी. खरे - 1996	115	—	—	29
6.	श्रम विधि - श्री गोपी कृष्ण अरोड़ा - 1996	452	—	—	113
7.	संविदा विधि - डा. रामगोपाल चतुर्वेदी - 1998	275	—	—	69
8.	चिकित्सा न्यायशास्त्र और विधि विज्ञान - डा. सी. के. पारिख - 1999	293	—	—	74
9.	आधुनिक पारिवारिक विधि - श्री राम शरण माथुर - 2000	429	—	—	108
10.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय) - विधि साहित्य प्रकाशन - 2000	225	—	—	57
11.	हिन्दू विधि - डा. रवीन्द्र नाथ - 2001	425	—	—	106
12.	भारतीय भागीदारी अधिनियम - श्री माधव प्रसाद वशिठ - 2001	165	—	—	41
13.	प्रशासनिक विधि - डा. कैलाश चन्द्र जोशी - 2001	200	—	—	50
14.	भारतीय दंड संहिता - डा. रवीन्द्र नाथ - 2002	741	—	—	185
15.	विधिक उपचार - डा. एस. के. कपूर - 2002	311	—	—	78
16.	विधि शास्त्र - डा. शिवदत्त शर्मा - 2005	580	—	290	—
17.	मानव अधिकार - डा. शिवदत्त शर्मा - 2006	120	—	60	—

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

Cover IV

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 17552/69

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिकाओं में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः चयनित सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । इन पत्रिकाओं को और अधिक आकर्षक बनाने के लिए इनमें जनवरी, 2010 के अंक से महत्वपूर्ण केन्द्रीय अधिनियमों का प्राधिकृत हिन्दी पाठ पाठकों की सुविधा के लिए शृंखलाबद्ध रूप से प्रकाशित किया जा रहा है । तीनों निर्णय पत्रिकाओं की वार्षिक कीमत केवल ₹ 495/- है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 225/- है, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें ।

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105